सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

'भविष्य' का चन्दा

| | | |
|---|---|---|
| वार्षिक चन्दा ... | ... | ६) रु० |
| छः माही चन्दा | ... | ५) रु० |
| तिमाही चन्दा ... | ... | ३) रु० |
| एक प्रति का मूल्य | ... | ≡) |

Annas Three Per Copy

# भविष्य

सचित्र राष्ट्रीय साप्ताहिक

आध्यात्मिक स्वराज्य हमारा ध्येय, सत्य हमारा साधन और प्रेम हमारी प्रणाली है। जब तक इस पावन अनुष्ठान में हम अविचल हैं, तब तक हमें इसका भय नहीं, कि हमारे विरोधियों की संख्या और शक्ति कितनी है।

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

**एक प्रार्थना**

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए!

वर्ष १, खण्ड २ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार; १६ अप्रैल, १९३१ | संख्या ५, पूर्ण संख्या २९

# स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह एवं स्वर्गीय राजगुरु का वंश-परिचय

( २९वें पृष्ठ पर देखिए )

☞ स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के पूज्य पिता—सर्दार किशनसिंह जी

☞ स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के दादा सर्दार अर्जुनसिंह जी

( १ ) अपने बच्चे जोगेन्द्र सहित सर्दार भगतसिंह की सहोदरा—श्रीमती अमर कौर ( २ ) स्वर्गीय शिवराम राजगुरु की सहोदरा—सौभाग्यवती गोदावरी बाई और ( ३ ) उनकी पूजनीया माता सौभाग्यवती पार्वती बाई।

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' (हिन्दी अथवा उर्दू-संस्करण) का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

# भविष्य

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार, १६ अप्रैल, १६३१ | संख्या ५, पूर्ण संख्या २६

# स्पेन में प्रजान्त्रवादियों की विजय

## बादशाह को बाध्य होकर गद्दी-परित्याग करना पड़ा

## बर्मा का उपद्रव दिनोंदिन भयङ्कर होता जा रहा है !

### पं० जवाहरलाल नेहरू के क़त्ल की धमकियाँ : देहली षड्यंत्र केस में ४५० सरकारी गवाह पेश होंगे

### अमृतसर, कराची और हैदराबाद (सिन्ध) में पिकेटिङ्ग शुरू हो गई !

*( एसोसिएटेड प्रेस द्वारा १५वीं अप्रैल की रात तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार )*

—मैड्रिड ( स्पेन की राजधानी ) का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्पेन में प्रजातन्त्र स्थापित हो गया है। वहाँ के बादशाह अलफ़ेन्ज़ो ने गद्दी का परित्याग दिया है।

कहा जाता है, कि गत १२वीं अप्रैल को म्युनिसिपल अधिकारियों का निर्वाचन हुआ था, उसमें प्रजातन्त्र-वादियों और साम्यवादियों की ही जीत हुई थी। उस समय वहाँ की सरकार के सामने यह प्रश्न उठा था, कि जनता की इस क्रान्तिकारी इच्छा के सामने वह क्या करे ? अब ताज़े समाचारों से पता चलता है, कि प्रजा-तन्त्रवादी नेताओं ने, निर्वाचन के बाद १३वीं अप्रैल को निम्नलिखित सूचना निकाली है :—

"यदि अधिकारियों ने, गत घटनाओं से शिक्षा ग्रहण नहीं की है; तो हम प्रजातन्त्रवादी सार्वजनिक शान्ति स्थापित करने और विदेशी राष्ट्रों के सम्मुख पूर्ण उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार हैं। बादशाह अलफ़ेन्ज़ो ने वास्तव में गद्दी का परित्याग करके बड़ी बुद्धिमानी का परिचय दिया है—वहाँ का जनता का ऐसा विचार है।

—रङ्गून ( बर्मा ) का तार है, कि हाल ही में फिर सशस्त्र उपद्रवकारियों ने पुलिस और फ़ौज पर भयङ्कर हमले कर दिए थे, जिसके फल-स्वरूप २०० उपद्रवकारी मारे गए या ज़ख़्मी हुए। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० स्मिथ घायल होकर रङ्गून के हस्पताल में लाए गए हैं। कहा जाता है पुलिस को विशेष क्षति नहीं हुई है।

—आज देश का वातावरण जैसा कलुषित और हिंसा-पूर्ण हो रहा है, उसके अनुसार जो भी न हो जाय, थोड़ा है ! एक ओर मुस्लिम धर्म को कलङ्कित करने वाले मुट्ठी भर मुल्लाओं के अनर्गल प्रलाप और उत्पात हो रहे हैं दूसरी ओर राष्ट्रीय विचार के पक्ष वाले नेताओं को क़त्ल की धमकियाँ दी जा रही हैं ! १२वीं अप्रैल की शाम को भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू को दो ऐसे गुमनाम पत्र मिले हैं, जिनमें उनके क़त्ल की बेहूदा धमकियाँ दी गई हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये पत्र कुछ गुमराह अङ्गरेज़ों की ओर से लिखे गए हैं। नेहरू महोदय का अपराध यह बतलाया जाता है, कि उन्होंने स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के कार्य की प्रशंसा की है !! पं० जवाहरलाल नेहरू ने हमें टेलीफ़ोन द्वारा बतलाया है, कि इस प्रकार के गुमनाम पत्र उन्हें प्रायः मिला करते हैं, जिन्हें पढ़ कर वे अपनी रद्दी की टोकरी में डाल देते हैं।

—नई दिल्ली का समाचार है, कि दिल्ली षड्यन्त्र का मामला आज स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने पेश किया गया। अभियुक्तों के नाम ये हैं—प्रो० धन्वन्तर, रुद्रदत्त, भगीरथलाल, विश्वम्भर दयाल, प्रोफ़ेसर निगम, छयाली राम गुप्त, विद्याभूषण, हरकेशसिंह, गजानन्द पोत-दार, वीरमलप्रसाद जैन, हज़ारीलाल गुप्त, वस्थ कपूर-चन्द जैन, बाबूराम गुप्त और वैशम्पायन कैलाशपति उप-नाम शीतल। गिरिवरसिंह, बालकृष्ण, रामलाल तैलङ्ग और मदन गोपाल सरकारी गवाह बन गए हैं। श्री० मदन गोपाल लाहौर षड्यन्त्र केस में भी सरकारी गवाह था। मामला शुरू होने पर सरकारी वकील ने कहा, कि मामला अभी तैयार नहीं है, इसलिए ट्रिब्यूनल एक सप्ताह तक मामले को स्थगित रक्खे। सरकारी वकील ने कहा कि ४२१ गवाहों के सिवा २० या ३० अन्य गवाहों के भी नाम पेश किए जायँगे। अभियुक्तों के वकील ने कहा, कि यह आश्चर्य की बात है, कि १ली नवम्बर से लेकर आज तक, सरकारी वकील मामला तैयार नहीं कर सके। उन्होंने कहा कि मुक़द्दमे की पेशी में इस प्रकार विलम्ब करना अत्यन्त अनुचित है ; क्योंकि अभियुक्तों को अभी यह भी नहीं मालूम है, कि उन पर क्या-क्या अभियोग लगाए गए हैं। सरकारी वकील ने उत्तर में कहा, कि इस विलम्ब का कारण यह है कि गवाहों की सूची बहुत बड़ी है, और इस बात की कोशिश की जा रही है कि अभियुक्तों को अपनी सफ़ाई देने का पूरा मौक़ा मिल ले।

—काबुल का एक समाचार है कि, प्रसिद्ध अफ़ग़ान डाकू इब्राहीम बेग, अफ़ग़ान के युद्धमन्त्री के साथ युद्ध में मारा गया है। उसके साथी भी गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—ख़बर है कि श्री० शास्त्री लॉर्ड इर्विन के साथ एक ही जहाज़ पर इङ्गलैण्ड जा रहे हैं। आप वहाँ जाकर पूर्वीय अफ़्रिका की पार्लियामेण्टरी संयुक्त कमिटि के समक्ष अपना वक्तव्य पेश करेंगे।

—ख़बर है कि, कराची और हैदराबाद ( सिन्ध ) में पिकेटिङ्ग शुरू हो गई है। यह पिकेटिङ्ग गाँधी-इर्विन समझौते की शर्तों के अनुसार ही हो रही है।

—अमृतसर का समाचार है कि वहाँ विदेशी कपड़े पर पिकेटिङ्ग फिर शुरू हो गई है। व्यापार पर इसका बहुत बुरा असर पड़ा है। विदेशी चीज़ों का आना एक दम बन्द-सा हो गया है।

मौ० शौकतअली ने प्रान्तीय और केन्द्रीय शासन-समितियों के मुस्लिम सदस्यों से यह अनुरोध किया है कि वे यह सूचित करें, कि वे संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में हैं या पृथक निर्वाचन के पक्ष में।

## 'भविष्य' की मूल्य-वृद्धि

पूर्व सूचना और उसमें दिए गए कारणों के अनुसार आगामी अङ्क से 'भविष्य' का वार्षिक चन्दा १२) रु०, ६ माहो ६॥) रु० तथा तिमाही चन्दा ३॥) रु० हो जायगा और प्रति क़ॉपी का मूल्य तीन आने से बढ़ कर चार आने हो जायगा ; किन्तु इस मूल्य-वृद्धि के साथ ही साथ 'भविष्य' में, जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं, अधिकांश पाठक उसकी कल्पना तक नहीं कर सकते। हम पाठकों को इस बात का सादर विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि 'भविष्य' के प्रकाशन द्वारा हम एक पैसे तक के आर्थिक लाभ की आशा नहीं करते ; किन्तु साथ ही हम 'भविष्य' को संसार के किसी भी उच्च कोटि के पत्र के पीछे भी नहीं देखना चाहते। आज 'भविष्य' की १४,००० प्रतियाँ छप रही हैं। यदि यह संख्या घट कर १,००० तक हो जाय तब भी हमें इसकी ज़रा भी शिकायत न होगी; किन्तु जो सामग्री हमने अपने पाठकों को 'भविष्य' में देने का निश्चय किया है, उसमें हम कमी करने को तैयार नहीं हैं। अस्तु।

इस सम्बन्ध में विशेष न लिख कर, हम पाठकों को केवल इस बात का विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि मूल्य-वृद्धि के सम्बन्ध में किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी न कर, केवल आगे निकलने वाले अङ्कों की प्रतीक्षा करें और यदि उन्हें 'भविष्य' में प्रकाशित सामग्री के समान भारत की किसी भी भाषा में प्रकाशित होने वाले पत्र में वैसी सामग्री मिल जाय, तो उस दिन से उन्हें चाहिए कि वे शपथ ले लें कि भविष्य में वे 'भविष्य' को छूएँगे भी नहीं—इससे अधिक हम कुछ नहीं कह सकते।

—व्यवस्थापक 'भविष्य'



# सप्ताह की डायरी

—१०वीं अप्रैल का एक स्थानीय समाचार है, कि कुछ यूरोपियनों और एङ्ग्लो-इण्डियनों ने पुलिस से इस बात की शिकायत की है, कि उनकी गाड़ियों पर ढेले फेंके गए हैं। मि० ए० डब्ल्यू० मिल्स ने ख़बर दी है कि मि० थॉमस जब अपनी स्त्री और मिसेज़ मिल्स के साथ फ़िटन पर, शहर से लौटे आ रहे थे, पावर-हाउस के पास कुछ लड़कों ने उनकी फ़िटन पर ढेले फेंके। कहा जाता है, कि सरदार भगतसिंह की फाँसी के बाद से ही ऐसी घटनाएँ हो रही हैं। पुलिस के डिप्टी-सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० इकराम हुसैन पर भी, ढेले फेंके जाने की शिकायत है।

कॉङ्ग्रेस के अधिकारियों को इन घटनाओं के सम्बन्ध में कोई ख़बर नहीं मिली है। एक प्रेस-प्रतिनिधि के पूछने पर, पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि उन्हें इन घटनाओं के सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं था। प्रेस-प्रतिनिधि के ही मुख से उन्हें ये सब बातें मालूम हुईं। उन्होंने कहा कि "यदि ये बातें सत्य हैं, तो मैं उन लड़कों के कार्य की घोर निन्दा करता हूँ।"

## कॉङ्ग्रेस का एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव

### "सभी राजनैतिक क़ैदी छोड़ दिए जायँ"

"इस कॉङ्ग्रेस की सम्मति में, यदि इस ( गाँधी-इर्विन ) समझौते का उद्देश्य, भारत और ब्रिटेन के भावों में परिवर्तन लाना है, तो सरकार को उचित है कि वह सभी राजनैतिक क़ैदियों को छोड़ दे, समझौते की शर्तें उनके सम्बन्ध में लागू हों चाहे न हों। इसके अतिरिक्त भारतीय जनता के विचारों और कार्यों पर जो रुकावटें डाली गई हैं, वे भी उठा ली जायँ और देशी रियासतों के भी राजनैतिक क़ैदी छोड़ दिए जायँ। यह कॉङ्ग्रेस सरकार को याद दिलाती है, कि भगतसिंह आदि की फाँसियों के कारण जो असन्तोष फैला है, वह बिना इस प्रस्ताव के अनुसार काम किए, कम नहीं हो सकता।"

—सूरत का १०वीं अप्रैल का समाचार है, कि जिन लोगों ने आन्दोलन के समय ज़ब्त किए हुए खेत को नीलाम में ख़रीदा था, वे इस समय बड़ी मुसीबत में पड़े हैं। उन खेतों में अनाज तैयार है, किन्तु काटने और ढोने के लिए कोई मज़दूर नहीं मिल रहा है। कहा जाता है कि मि० गॉर्डर नामक एक मनुष्य ने काठियावार से कुछ मज़दूरों को बुलवाया। किन्तु मज़दूरों को जब यह मालूम हुआ, कि खेतों में 'वानर' लोग धरना दे रहे हैं, तो आधे से अधिक मज़दूरों ने तो उसी समय काम करने से जवाब दे दिया। गाँव वालों को जब इन मज़दूरों के आने की बात मालूम हुई तो, कहा जाता है कि उन्होंने उनसे, खेतों में काम न करने की प्रार्थना की। इन सब बातों को सुन कर पुलिस वहाँ आ धमकी और लगभग ७४ व्यक्ति, जिसमें औरत, मर्द और बच्चे तक शामिल हैं, गिरफ़्तार कर लिए गए।

कुछ बङ्गाली यात्री, जो इसी ओर से जा रहे थे, इस तमाशे को देखने के लिए ज़रा ठहर गए। कहा जाता है कि पुलिसमैनों में से एक ने, एक यात्री से कहा कि 'भाग जाओ, नहीं तो गोली मार दूँगा।

—अफ़वाह है कि लॉर्ड इर्विन भारत से वापस जाने के बाद ब्रिटिश राजदूत बना कर वाशिङ्गटन भेजे जायँगे।

—लाहौर का ८वीं अप्रैल का समाचार है, कि श्री० सज्जनसिंह को जिन पर मिसेज़ कर्टिस की हत्या का अभियोग था, फाँसी दे दी गई।

—श्री० सी० एफ़० एण्ड्रयूज़ ने केपटाउन से निम्नलिखित तार भेजा है :—

"यह प्रायः निश्चित है कि भारत और दक्षिण अफ़्रिका में जो समझौता होने वाला है, वह केपटाउन अथवा प्रिटोरिया में होने वाली आगामी शरद-ऋतु की कॉन्फ़्रेन्स में होगा। ट्रान्सवाल में रहने वाले सभी भारतीयों का भाग्य इसी परिषद के निर्णय पर अवलम्बित है। इसलिए यहाँ की भारतीय कॉङ्ग्रेस ने श्री० शास्त्री की आवश्यकता सर्वसम्मति से स्वीकार की है। कोई भारतीय स्वदेश लौटने के लिए तैयार नहीं है; इसलिए लौट जाने का प्रश्न उठाना निरर्थक है।"

—अफ़वाह थी, कि श्री० अमानुल्ला पुनः राजत्व-प्राप्ति के लिए अफ़ग़ानिस्तान आने वाले हैं। कहा जाता है कि ९वीं अप्रैल को नेपल्स से जद्दा ( मक्का ) के लिए वे रवाने हो चुके हैं। उनका उद्देश्य केवल तीर्थ-यात्रा बतलाया जाता है।

—सिलहट का ८वीं अप्रैल का समाचार है, कि गोविन्दगञ्ज नामक एक स्थान की आबकारी की दूकान तीन बार नीलाम पर चढ़ाई गई, किन्तु कोई ख़रीदने वाला नहीं मिला। इस कारण दूकान बन्द हो जाने की घोषणा कर दी गई है।

—रङ्गून का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि ४ पुलिस के आदमियों की एक विद्रोही से मुठभेड़ हुई। पुलिस वालों ने विद्रोही को पकड़ लिया और उसे विद्रोहियों के अड्डे की ओर चलने के लिए बाध्य किया। अड्डे के समीप पहुँचने पर और विद्रोहियों ने पहुँच कर पुलिस वालों को घेर लिया, जिसके फल-स्वरूप एक सब-इन्स्पेक्टर मारा गया और दूसरा लापता है। अन्य दो घायल हुए हैं।

—पेशावर का ९वीं अप्रैल का समाचार है, कि मि० बार्न्स पर फिर जो आक्रमण करने की चेष्टा की गई थी, उसके सम्बन्ध में वहाँ बड़ी सनसनी फैल रही है। एसोसिएटेड प्रेस के एक विशेष सम्वाददाता के साथ जब मि० बार्न्स वहाँ घूमने निकले तो 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' से उनका स्वागत किया गया।

—रङ्गून का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के ज़िला मैजिस्ट्रेट ने एक बङ्गाली को, विद्रोहात्मक पर्चे बाँटने के सम्बन्ध में तीन साल की कड़ी क़ैद की सज़ा दी है। कहा जाता है कि पर्चे में, सरकारी अफ़सरों को मारने के लिए उकसाया गया था।

—लाहौर का १०वीं अप्रैल का समाचार है, कि लाहौर षड्यन्त्र-केस के सरकारी गवाह रामशरणदास और ब्रह्मदत्त पर झूठी गवाही देने के सम्बन्ध में, अभियोग उपस्थित करने के लिए, सरकार की ओर से हाईकोर्ट में एक दरख़्वास्त दी गई थी, क्योंकि इन दोनों ने स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने अपना बयान बदल दिया था। इस कारण इन पर भारतीय दण्ड-विधान की १९३वीं धारा के अनुसार मुक़दमा चलाने की अनुमति माँगी गई थी। हाईकोर्ट ने अनुमति दे दी है।

—लखनऊ का १३वीं अप्रैल का समाचार है, कि किङ्ग जॉर्ज मेडिकल कॉलेज के समीप एक बम फट जाने से तीन मनुष्य घायल हो गए हैं। कहा जाता है कि ये तीनों व्यक्ति कॉलेज के अस्पताल से आ रहे थे, इसी समय उन्हें ढँकी हुई कोई वस्तु मिली। उनमें से एक ने कौतूहलवश उसे उठा लिया, और उसे उठाते ही, एक गोल सी वस्तु नीचे गिर पड़ी, जिसके फल-स्वरूप एक भयानक धड़ाका हुआ, और वह मनुष्य बुरी तरह घायल हो गया। अन्य दो भी घायल हुए हैं। पुलिस इस विषय की जाँच कर रही है।

—सूरत का १३वीं अप्रैल का समाचार है, कि माण्डवी ताल्लुक़े में ताड़ी की दूकानों पर धरना देने के लिए एक समिति स्थापित की गई है।

—लन्दन का १२वीं अप्रैल का समाचार है कि पुर्तगाल की दशा शोचनीय हो रही है। कई सेनाओं ने सरकारी आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया है। अधिकारीगण कुछ स्थानों में सैन्य संग्रह कर रहे हैं। कहा जाता है कि वहाँ का प्रसिद्ध वायुयान-सञ्चालक फ़ान्सिस्से आरागाओ आकाशमार्ग से, सरकार के विरुद्ध बलवा फैलाने का उद्योग कर रहा है।

## राष्ट्रवादी मुसलमानों के प्रयत्न

—१२वीं अप्रैल का एक स्थानीय समाचार है कि श्री० ख़्वाजा के बङ्गले पर राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा हुई, जिसमें मुस्लिम नेशनलिस्ट पार्टी की स्थानीय शाखा स्थापित की गई। श्री० मीर फ़ख़रुद्दीन हुसेन इसके अध्यक्ष और डॉ० एम० एच० फ़रुंख़ी, बार-एट-लॉ, इसके सेक्रेटरी निर्वाचित किए गए हैं। मिसेज़ ख़्वाजा, मिसेज़ जङ्ग और मिसेज सिद्दीक़ी ने आगामी लखनऊ कॉन्फ़्रेन्स में भाग लेना निश्चित किया है।

—लाहौर का १३वीं अप्रैल का समाचार है, कि पञ्जाब के राष्ट्रवादी मुसलमानों ने अपना एक दल स्थापित कर लिया है। मौलाना अब्दुल्ला इसके अस्थायी अध्यक्ष और डॉ० मुहम्मद आलम इसके सेक्रेटरी बनाए गए हैं।

—कानपूर का ९वीं अप्रैल का समाचार है, कि हिन्दू और मुसलमानों की एक एक सभा में, मौलाना आज़ाद सुभानी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर एक भाषण दिया। उन्होंने मुसलमानों में खादी पहनने के लिए अनुरोध किया। मौलाना साहब ने, मुसलमानों में खादी का प्रचार करने के लिए एक कमिटी बनाई है।

—पेशावर का १०वीं अप्रैल का समाचार है कि, अमानुल्ला की चिट्ठियों का संग्रह, जो पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था, ज़ब्त कर लिया गया है। इस्लामियाँ कॉलेज के एक विद्यार्थी की लिखी हुई पश्तो भाषा की एक पुस्तक भी ज़ब्त कर ली गई है।

—लाहौर का ९वीं अप्रैल का समाचार है कि, श्री० सुभषचन्द्र बोस ने, जो मेरठ षड्यन्त्र के अभियुक्तों को देखने गए थे, उनके सम्बन्ध में कहा है कि अधिकांश दुर्बल हो गए हैं। पर तो भी उन लोगों का उत्साह कम नहीं हुआ है।

—अहमदाबाद का ११वीं अप्रैल का समाचार है, कि भावनगर पिकेटिङ्ग-मण्डल की सत्याग्रह-समिति ने मोर्वी राज्य में स्वयंसेवकों को भेज कर सत्याग्रह करने का विचार किया है। कहा जाता है कि हाल ही में एक स्वयंसेवक, जो वहाँ विदेशी कपड़े का वहिष्कार कार्य करने गया था, राज्य-कर्मचारियों द्वारा बलात् निकाल दिया गया था। इसी के प्रतिवाद-स्वरूप यह सत्याग्रह किया जायगा।

# पुलिस ने अपनी शक्ति का सर्वथा दुरुपयोग किया है !

## सरकारी गवाह जुडिशियल हवालात में रक्खे जाएँ

### लाहौर हाईकोर्ट में दरख़्वास्त :: पुलिस के विरुद्ध शिकायतों की भरमार

लाहौर ७ अप्रैल। आज लाहौर हाईकोर्ट के डिविज़नल बेञ्च में, मि० जस्टिस भिडे और जस्टिस मे० के० एम० टेप के सामने, लाहौर के नए षड्यन्त्र वाले मुक़दमे के सरकारी गवाहों की ओर से दरख़्वास्त दी गई कि उन्हें पुलिस की हवालात से जुडिशियल हवालात में स्थानान्तरित कर दिया जाय। आवेदनकारियों के अन्यतम वकील श्री० समीरचन्द ने अपनी बहस में मुक़दमे की तफ़सील देते हुए कहा कि स्पेशल ट्रिब्यूनल ने अपने हुक्म में यह स्वीकार किया है कि अदालत को विशेष कारणवश सरकारी गवाहों को स्थानान्तरित करने का अधिकार है। गवाह इन्द्रपाल को, उसकी गिरफ़्तारी से दो महीने बाद माफ़ी का वचन दिया गया। इसी तरह दूसरे गवाहों को भी माफ़ी का वचन देने में काफ़ी समय लगा। रिमाण्ड अर्थात् सबूत इकट्ठा करने के लिए मोहलत लेने की हालत में एक अभियुक्त को दो सप्ताह तक पुलिस की हिरासत में रक्खा जा सकता है, परन्तु किसी गवाह को एक क्षण के लिए भी हिरासत में रखना अनुचित है। अभियुक्त को भी दो सप्ताह के बाद नहीं रक्खा जा सकता। इसलिए इन गवाहों को हिरासत में रखना नितान्त अनुचित है। और विशेषतः उस दशा में, जब कि पहले गवाह को तीन महीने लग चुके हैं। मुद्दई के ७१५ गवाह अभी गवाही देने को बाक़ी हैं, जिसका आशय यह है कि सरकारी गवाहों को अभी कम से कम तीन साल तक नज़रबन्द रक्खा जाएगा। हालाँ कि क़ानून के अनुसार पन्द्रह दिन के बाद हिरासत अनुचित है।

वकील ने धारा ३ का उल्लेख करते हुए कहा कि पुलिस की हिरासत में किसी को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं। उचित हिरासत जुडिशियल है, इसलिए पुलिस की हिरासत किसी तरह उचित नहीं है।

सरकारी गवाह को हिरासत में रखने का उद्देश्य यह होता है कि जब आवश्यकता हो, उसे अदालत के सामने उपस्थित कर दिया जाय। इसका यह उद्देश्य कदापि नहीं है कि उसे गवाही पढ़ाई जाए या सबक़ याद कराया जाए। लेजिस्लेटर ने हिरासत के लिए जेलख़ाना नियत किया है और 'रिमाण्ड' जेल में हो सकता है, पुलिस के पास नहीं। विद्वान वकील ने कलकत्ता और लाहौर हाईकोर्ट का उदाहरण देते हुए कहा कि धारा ३४४ के अनुसार हिरासत जुडीशियल होती है, इसके विपरीत अभियुक्त की स्थिति मालख़ाने की एक चीज़ सी रह जाती है। लोकल गवर्नमेण्ट ने हिरासत में रहने वाले क़ैदियों के लिए जेलख़ाना बनाया है। इन्द्रपाल को जेल में भेजा गया। लोकल गवर्नमेण्ट को अख़्तियार न था, कि शाही क़िले को जेल बना देती, जब कि शाही क़िला पुलिस के अधिकार में है। नोटीफ़िकेशन हो जाने पर पुलिस को वहाँ से चला जाना चाहिए, एक दारोग़ा को वहाँ का प्रबन्धकर्ता होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं हो तो वह जेल नहीं हो सकता। क़ानून एक क्षण के लिए भी सहन नहीं कर सकता कि सरकारी गवाह पुलिस की हिरासत में रहे। फिर तीन साल तक वहाँ रखने का तो ज़िक्र ही वृथा है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि सरकारी गवाहों को पुलिस के पास न रक्खा जाए। और अगर कोई अदालत इनकी रक्षा नहीं कर सकती तो उसे कोई अधिकार नहीं, कि वह इनके मुक़दमे की सुनवाई कर सके। दफ़ा १६७ का आशय है कि पन्द्रह दिन के बाद अभियुक्त पुलिस की हिरासत में न रहे। क्या यह उचित है कि गवाह इतने समय तक एक फ़रीक़ के अधिकार में रहे? विद्वान वकील ने गवाह इन्द्रपाल के बयान का उदाहरण देकर कहा कि इसे मारा-पीटा गया था। सम्भव है कि दूसरों के साथ भी ऐसा बर्ताव किया जाता हो। इस तरह न्याय का उद्देश्य पूरा नहीं होता। सम्भव है, यह कहा जाए कि पहले गवाही हो ले, फिर बहस हो जायगी; परन्तु हमें सन्देह है कि कोई शरारत होगी। आख़िर झूठे बयानों को अदालत की मिसिल में लाने की आवश्यकता क्या है? फ़साद को आरम्भ में ही दबा देना चाहिए। इन्साफ़ का तक़ाज़ा है कि सरकारी गवाहों को फ़ौरन जुडिशियल हवालात में भेजा जाए। उनकी रक्षा का एतराज़ महज़ एक लँगड़ी दलील है।

जवाब में सरकारी वकील ने कहा कि इस बात का विचार करना मैजिस्ट्रेट का काम है कि अपराधी कहाँ रक्खा जाय। अगर वह चाहे तो उसे कोर्ट-इन्सपेक्टर या नाज़िर के पास भी रख सकता है। ट्रिब्यूनल ने गवाहों को बुलाया और उनकी इच्छा के अनुसार पुलिस की हिरासत में भेज दिया। यह आज़ाद गवाह का ख़याल नहीं है, बल्कि सरकारी गवाह का मसला है। कोई क़ानून मुद्दई को अपने गवाहों को तैयार करने से नहीं रोक सकता। केवल इन्द्रपाल के कथन का आधार लेकर गवाहों को जुडिशियल हवालात में भेजना उचित न होगा। ऐसे विप्लव-सम्बन्धी मुक़दमे में, जिसमें इन्द्रपाल के बयान के अनुसार, मृत्यु का दण्ड हो, सरकारी गवाहों की रक्षा का प्रश्न अत्यावश्यक है। इन्द्रपाल ने पुलिस के विरुद्ध बयान दिया है। उसके पास सार्टिफ़िकेट है, वह जेल के अन्दर और बाहर भी सुरक्षित है और स्वतन्त्र मनुष्य की तरह फिरेगा। परन्तु दूसरे गवाहों की रक्षा ज़रूरी है। क्योंकि भय है कि कहीं विप्लववादी उन्हें जेलख़ाने में ही न मार डालें। इसी मुक़दमे में ज़िक्र आया है कि भगतसिंह और उनके साथियों को छुड़ाने की कोशिश की गई थी। अगर यह सम्भव है, तो जेल में सरकारी गवाह भी सुरक्षित नहीं रह सकते। इसलिए इनका जेल में रखना भय से ख़ाली नहीं है। और जेल में जान बचाने के लिए इनके पास वही उपाय रह जाता है, जिसे इन्द्रपाल ने अख़्तियार किया है।

क़ानून के अनुसार लोकल गवर्नमेण्ट को अधिकार है कि किसी विशेष अवस्था में जेल के सिवा किसी और स्थान को भी इसके लिए निश्चित कर दे।

सरकारी वकील ने कहा कि मुझे आश्चर्य है कि अभियुक्तों के गवाह क्यों इस तरह पुलिस के विरुद्ध हैं। पुलिस हर हालत में भर्त्सना के योग्य नहीं होती। अब प्रश्न यह है कि सरकार ने गवाहों को रखने के लिए शाही क़िला निर्दिष्ट किया है, तो क्या अदालत कोई दूसरा स्थान निर्दिष्ट करेगी। हिरासत का सवाल अदालत के सामने ख़ास अदालत में पैदा होता है।

इसके बाद अपने अन्तिम वक्तव्य में अभियुक्तों के वकील ने फिर कहा कि यह अजीब दलील है कि इन्द्रपाल का बयान साबित नहीं हुआ। प्रश्न यह है कि ऐसी हालत में गवाहों को स्थानान्तरित करना चाहिए या नहीं। यह सरकारी गवाह का काम नहीं है कि सबूत पेश करे। सरकार के लिए कोई कारण न था कि शाही क़िले को इसलिए निर्दिष्ट करती, जब कि एक नहीं, तीन जेलख़ाने यहाँ मौजूद हैं। अगर कोई व्यक्ति तीन साल तक पुलिस की हिरासत में रह सकता है, तो दफ़ा १६७ के बनाने की आवश्यकता ही क्या थी? सरकारी गवाहों को पुलिस के अधिकार में रखने का उद्देश्य ही यह है, कि वे पुलिस की मरज़ी के मुताबिक़ अपना बयान दें। इस्तग़ासा का मतलब यह है कि वे पुलिस के हाथों से बाहर न जाएँ। परन्तु क़ानून के अनुसार जेलें मौजूद हैं, इसलिए प्रथम तो लोकल सरकार को कोई और स्थान निर्दिष्ट करने का अधिकार नहीं और अगर किया भी गया तो पुलिस वहाँ एक क्षण के लि भी नहीं रहनी चाहिए और उस स्थान का जेल के मातहत होना भी आवश्यक है।

दोनों पक्षों की दलीलें सुन कर अदालत ने फ़ैसला स्थगित रक्खा।

* * *

## स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की चिता पर मेला

### सेण्ट्रल सिक्ख लीग की घोषणा

अमृतसर, ९ अप्रैल—आज सेण्ट्रल सिक्ख लीग के अधिवेशन में ज्ञानी गुरुमुखसिंह ने घोषणा की कि जिस स्थान पर सरदार भगतसिंह और उनके साथियों के शव जलाए गए थे, उस स्थान पर बैसाखी के दिन एक राजनीतिक मेला लगेगा और इसी तरह प्रति वर्ष लगा करेगा। इस दिन वहाँ राजनीतिक सभाएँ और दीवान ( सिक्खों की महती सभा ) होंगे।

### चलती रेल में डाका

मैमनसिंह का ११वीं अप्रैल का समाचार है, कि तीन साहा व्यापारी १०,०००) रूपए के साथ ट्रेन से सफ़र कर रहे थे। कहा जाता है कि तीन युवकों ने चलती ट्रेन में, उन पर आक्रमण किया। व्यापारियों ने जब सीधी तरह से रुपए देने से इन्कार किया तो उन्होंने फ़ायर किया, जिसके फलस्वरूप एक तो वहीं मर गया। दूसरा व्यापारी अस्पताल में मर गया। तीसरे की अवस्था विशेष शोचनीय नहीं है। डाकू लापता हैं।

—कानपूर का १३वीं अप्रैल का समाचार है कि 'बोल्शेविक रशिया' नामक एक पुस्तक के सम्बन्ध में, पुलिस ने 'प्रताप प्रेस' और ऑफ़िस की तलाशी ली। कोई सन्देहजनक वस्तु नहीं पाई गई है।

—रङ्गून का समाचार है कि एक मुसलमान सर्वेयर ने एक यूरोपियन कप्तान पर तीन गोलियाँ चलाईं। कप्तान को एक गोली लगी है। वह मुसलमान लापता है।

—नागपुर के सत्याग्रही नेता जनरल अवारी पागलख़ाने में बन्द हैं। उन्हें छुड़ाने के लिए पागलख़ाने के समीप सत्याग्रह किया जा रहा है।

* * *

# पण्डित जवाहरलाल नेहरू का भाषण

## भावी शासन-विधान में नौकरियाँ और वेतन :: रूस का मनोरञ्जक दृष्टान्त

### साम्प्रदायिक दङ्गों पर विचार

कानपुर के गत साम्प्रदायिक दङ्गे द्वारा उत्पन्न इलाहाबाद में फैले हुए आतङ्क को दबाने के प्रयत्न में ८वीं एप्रिल की रात में जो मुहल्ला-सभा हुई थी, उसमें भाषण करते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा, कि कानपुर का दङ्गा, जो इतने दिनों तक चलता रहा, उसका स्पष्ट कारण यह था, कि तीन दिन तक उसके रोकने का कोई भी यत्न नहीं किया गया। कानपुर का दङ्गा हड़ताल कराने के प्रयत्न में नहीं हुआ। बात यह है कि कॉङ्ग्रेस की शक्ति और उसके व्यापक प्रभाव को कम करने के असफल प्रयत्न इधर विरोधियों की ओर से प्रायः होते रहे हैं। पहले कहा जाता था कि कॉङ्ग्रेस केवल हिन्दुओं की संस्था है लेकिन सविनय अवज्ञा आन्दोलन में काफ़ी बड़ी तादाद, में मुसलमानों ने भाग लिया। मेरा ख़याल है, कि जन-संख्या के अनुपात से यदि विचार किया जाय तो मालूम होगा, कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन में जेल जाने वालों की संख्या में हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों की संख्या औसतन अधिक रही है। विराम-सन्धि और स्वाधीनता-संग्राम का स्थगित हो जाना, मेरी राय में, साम्प्रदायिक उपद्रव चाहने वालों के लिए चिढ़ जाने का एक मौक़ा हो गया है। आपने कहा, कुछ लोग ऐसे हैं, जिनका विचार है कि स्वराज्य हो जाने से उनका कोई लाभ न होगा। इसलिए वे मौजूदा शासन-प्रणाली के बनी रहने और जातिगत झगड़ों के होते रहने में ही दिलचस्पी रखते हैं!

कानपुर के उपद्रव ने क्षोभ और दुःख पैदा कर दिया है। सैकड़ों जानें गईं, जिनमें एक यू० पी० का रत्न था। उसने दोनों सम्प्रदाय के आपद्ग्रस्त लोगों की जानें बचाने में अपनी जान दे दी। शान्ति के लिए प्रयत्नशील जानकर भी कुछ उन्मत्त लोगों ने उन पर हमला कर दिया और उनकी जान ले ली। श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु ने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि कॉङ्ग्रेस वाले देश की सेवा में जीवनोत्सर्ग करने के लिए सन्नद्ध हैं। फिर आपने कहा, मुझे इस बात का गर्व है, कि ऐसी महान आत्मा उत्पन्न करने का गौरव संयुक्त प्रान्त को प्राप्त है।

आगे आपने कहा, अब प्रश्न यह है कि इस समय हमें क्या करना चाहिए। यह एक मानी हुई बात है कि गत १२ महीने के हमारे राष्ट्रीय युद्ध ने सारे संसार को हिला दिया। और संसार के राष्ट्रों में इस देश के प्रति दिल-चस्पी पैदा कर दी है। झुण्ड के झुण्ड यूरोपीय तथा अमेरिकन पत्र-प्रतिनिधि किस प्रकार कराची में महात्मा जी को घेरे रहते थे, यह इस बात का प्रमाण है। इस देश के प्रति संसार की सहानुभूति का कारण यह है, कि विदेश वाले यह बात अपने मन में अच्छी तरह समझे हुए हैं कि भारत बहुत शीघ्र स्वाधीन होने वाला है, इस-लिए प्रत्येक देश इस देश से मैत्री स्थापित करना चाहता है।

आगे चल कर आपने कहा कि कॉङ्ग्रेस-अधिवेशन के अवसर पर, किसी भी कार्यवाही में किसी प्रश्न पर भी हिन्दू-मुस्लिम-भेद नहीं उत्पन्न हुआ। यह प्रश्न और भेद तो कुछ ऐसे हिन्दू और मुसलमान स्वार्थियों की स्वार्थपरता का परिणाम है, जो ऊँची-ऊँची सरकारी नौकरियों और वेतनों के लिए लालायित हैं। आपने कहा, लोगों को यह याद रखना चाहिए, कि आख़िर ऐसी नौकरियाँ बहुत थोड़ी और परिमित हैं, इसलिए हिन्दू और मुसलमानों के सामने मुख्य प्रश्न इन थोड़ी सी नौकरियों का नहीं है। मुख्य प्रश्न यह है, कि सर्वसाधारण की ग़रीबी कैसे दूर हो, देश के उद्योग-धन्धों तथा व्यापार की उन्नति कैसे हो और किसानों की हालत में सुधार कैसे हो। यही वे प्रश्न हैं, जिनसे हिन्दू और मुसलमान दोनों का वास्तविक सम्बन्ध है।

### कॉङ्ग्रेस और स्वराज्य

कॉङ्ग्रेस के उस प्रस्ताव की व्याख्या करते हुए, जिसमें स्वराज्य की परिभाषा की गई है, पण्डित जी ने कहा कि उन तमाम बातों में से, जिनका कॉङ्ग्रेस को ध्यान है, एक बात ग़रीब समुदाय का उत्थान करना है। दूसरी बात जो कॉङ्ग्रेस चाहती है, वह है सैनिक-व्यय का काम करना। इससे ग़रीबी का सुधार होगा।

इसी ग़रीबी के सुधार को सामने रखते हुए कॉङ्ग्रेस ने निर्णय किया है कि स्वराज्य शासन में अधिकारियों के वेतन कम होंगे। आपने कहा, कॉङ्ग्रेस के उस निर्णय के अनुसार, जिसमें स्वराज्य शासन में ५००) रुपया मासिक वेतन से अधिक किसी अधिकारी को न दिए जाने की बात कही गई है, कुछ लोगों और कुछ पत्रों ने मूर्खतापूर्ण कहा है, लेकिन खेद की बात है कि उन्होंने उस निर्णय के आन्तरिक तत्व को नहीं समझा। कॉङ्ग्रेस नहीं चाहती कि कोई शख़्स शासन-प्रबन्ध में इसलिए नौकरी चाहे कि उसमें बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें। कॉङ्ग्रेस का मतलब है कि जो लोग सरकारी नौकरी में आवें वे या तो शुद्ध-देश-सेवा की प्रेरणा से आवें, या नौकरी के पद की उच्चता से प्रेरित होकर आवें, अर्थ-लोभ वश न आवें। सार्वजनिक सेवकों को उतना ही वेतन दिया जा सकता है, जितने से उनका भरण-पोषण हो जाय। आपने बतलाया कि रूस में धन के ख़याल से कोई भी व्यक्ति ऊँची नौकरी की लालसा नहीं करता। वास्तव में बात यह है कि ५००) रु० मासिक वेतन भी अधिक है। इतना वेतन कॉङ्ग्रेस ने डर कर निर्धारित किया है। मेरी राय में तो इतने से, जितना कॉङ्ग्रेस ने तय किया है, कहीं कम वेतन होना चाहिए। क्योंकि रूस में सब से अधिक वेतन २५०) रु० या २७५) रु० मासिक से अधिक नहीं है। रूस में लोग एक निश्चित संख्या से अधिक कमरों तक में नहीं रह सकते। वहाँ जिनके बड़े-बड़े मकान थे, वे आवश्यकता से अधिक जगह उप-योग करने से रोके गए। बाक़ी जगह दूसरों को, जिनके घर न थे, वे देने के लिए विवश किए गए। आपने कहा कॉङ्ग्रेस इस देश में एक नई ही प्रणाली चलाना चाहती है, जिसके सिद्धान्त बिलकुल नए होंगे और जिनसे दोनों सम्प्रदायों का हित साधन होगा। आपने कहा, मैंने सुना है कि कुछ लोग कॉङ्ग्रेस वालों पर यह दोषारोपण करते हैं, कि वे स्वाधीनता-संग्राम में अगुवा इसलिए बनते हैं, कि स्वराज्य होने पर वे बड़ी-बड़ी नौकरियाँ पा सकें। मेरी इच्छा है कि मुख्य-मुख्य कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता अभी से घोषित कर दें, कि स्वराज्य होने पर स्वराज्य-शासन में वे किसी भी तरह के पद या नौकरी का हक़ न पेश करेंगे।

आपने कहा, महात्मा गाँधी स्वयं ही इस विषय पर ऐसी कोई घोषणा निकालने की बात सोच रहे थे; जिससे कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ताओं पर किसी तरह के प्रलो-भन का दोषारोपण न किया जा सके। लेकिन कुछ लोगों के मना करने पर ऐसी घोषणा नहीं की गई। ऐसी घोषणा निकालने से सम्भव है, कुछ कठिनाइयाँ उप-स्थित हो जायँ, जैसे स्वराज्य-शासन के लिए उपयुक्त व्यक्तियों के न मिल सकने पर या घोषित व्यक्ति-विशेष पर ही प्रजा का शासन के लिए विश्वास होने पर, घोषणा का पालन सम्भव न होगा। आपने कहा, अगर मेरी राय आप पूछिए तो वह यह है, कि देश के स्वाधीन होने पर ऐसा होना चाहिए कि ऊँची नौकरियाँ होवें ही नहीं, केवल पञ्चायत का शासन हो।

आपने कहा, हिन्दू और मुसलमान दोनों ही भारत में ग़रीबी से दिन काट रहे हैं। सम्भवतः मुसलमान अधिक ग़रीब हैं। अगर ग़रीबी दूर करने के उपाय किए जा रहे हैं, तो उनसे दोनों ही का लाभ होगा। ये सब बातें शासन चलाने के ढङ्ग पर अवलम्बित रहेंगी।

मैं चाहता हूँ कि लोग इस बात पर ज़ोर डालते रहें कि शासन-भार कुछ ऊँचे अधिकारियों के हाथ में न रहे बल्कि उसका सूत्र ग़रीब जनता के हाथों में रहे। ऐसी व्यवस्था में कोई हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा उठ ही कैसे सकता है?

आपने कहा, मैंने सुना है कि दिल्ली की ऑल-इण्डिया मुस्लिम कॉन्फ्रेन्स में मेरे एक पुराने दोस्त ने कहा है, कि मुसलमान युद्ध के लिए तैयार हैं। आपने कहा, अगर कोई हिन्दू या मुसलमान ताक़त आज़माई करना चाहता हो, तो वह कॉङ्ग्रेस-दफ़्तर में चला जाय, मैं कुछ आदमी उसके लिए भेज दूँगा, जो उसके सामने जाकर सर झुका देंगे और मैं भी अपना सर झुकाने को तत्पर रहूँगा, कोई भी व्यक्ति किसी प्रकार का प्रतिघात न करेगा। अगर मि० ज़हूर अहमद राजनीतिक आधार पर कॉङ्ग्रेस को चैलेञ्ज दें, तो मैं उनके सामने सर झुकाने को तैयार न हूँगा, लेकिन अगर धार्मिक मामले में वे चैलेञ्ज दें, तो मैं नत-मस्तक होने को तैयार हूँ।

## बड़के भैया का अनर्गल प्रलाप

### "मैं हज़ारों गाँधियों का मुक़ाबला करूँगा"

बम्बई का १३वीं अप्रैल का समाचार है कि, मुसल-मानों की एक साम्प्रदायिक सभा में महात्मा गाँधी की तीव्र आलोचना करते हुए मौलाना शौकतअली ने कहा है, कि मुसलमान महात्मा गाँधी से न्याय की आशा नहीं कर सकते। यदि आवश्यकता पड़ेगी तो मुसल-मानों के लिए मैं अकेले ही हज़ारों और लाखों गाँधी का मुक़ाबला कर सकता हूँ। 'टाइम्स ऑफ़ इण्डिया' के प्रतिनिधि से मौलाना साहब ने कहा है, कि भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी एक ख़तरा हैं। उनका कहना है कि महात्मा गाँधी केवल हिन्दू और मुसलमानों को ही लड़ाना नहीं चाहते, बल्कि मुसलमानों को आपस में भी लड़ाना चाहते हैं। कानपुर, आगरा आदि स्थानों के दङ्गों का उल्लेख कर आपने कहा, कि इन सभी वार-दातों को देखते हुए मुसलमान पृथक निर्वाचन को नहीं छोड़ सकते। महात्मा गाँधी का मुट्ठी भर मुसलमानों की सहायता से आन्दोलन कराना ख़तरे की जड़ है।

* * *

## साहित्य का सपूत

हमें खेद है, स्थानाभाव के कारण इस अङ्क में 'साहित्य का सपूत' शीर्षक नाटक प्रकाशित नहीं हो सका, आगामी अङ्कों में यह धारावाही रूप से छपेगा, पाठकगण क्षमा करें।

—सं० 'भविष्य'

# महात्मा जी के कार्यों की आलोचना और उनका समाधान

## "समझौते से ही हमारे उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो गई है"

दिल्ली के समझौते के बाद से लोगों ने महात्मा जी से प्रश्न पर प्रश्न पूछना शुरू कर दिया है। महात्मा जी ने 'यङ्ग इण्डिया' में इन प्रश्नों के जो उत्तर दिए हैं, नीचे वे ही पाठकों की जानकारी के लिए दिए जाते हैं :—

प्रश्न—वे विद्यार्थी, जिन्होंने आन्दोलन के समय स्कूल छोड़ दिए थे, इस समय क्या करें ?

उत्तर—( १ ) आन्दोलन समाप्त नहीं हुआ है, बल्कि उसने एक भिन्न अर्थात् रचनात्मक स्वरूप धारण किया है।

( २ ) विद्यार्थीगण मादक द्रव्यों के सेवन करने वाले और विदेशी कपड़े का व्यवहार करने वाले लोगों के हृदय पर प्रभाव डाल सकते हैं और उन्हें सुधार सकते हैं।

( ३ ) वे उन बहिनों को सहायता पहुँचा सकते हैं, जो शान्तिमय पिकेटिङ्ग कर रही हैं।

( ४ ) वे गाँवों में रह कर खादी-प्रचार-कार्य कर सकते हैं।

( ५ ) वे शहरों में खादी की फेरी कर सकते हैं।

( ६ ) सभी छात्रों को नित्य-प्रति कम से कम आधा घण्टा चर्खा या तकली कातना चाहिए।

( ७ ) अन्य बातों की जानकारी के लिए वे राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों के रजिस्ट्रारों के पास लिखें।

### विदेशी कपड़े

प्रश्न—इस समय पिकेटिङ्ग का कार्य ढीला पड़ गया है, इस कारण विदेशी वस्त्रों के लिए नए ऑर्डर भेजे जा रहे हैं। बचे हुए विदेशी कपड़ों की भी अच्छी बिक्री हो रही है। इसे रोकने के लिए आप क्या कर रहे हैं ?

उत्तर—इस प्रश्न से यह जान पड़ता है, कि पिकेटिङ्ग का अर्थ दबाव है। यदि बात ऐसी ही है तो भी दबाव डाल कर कोई कार्य करने की अपेक्षा, स्वतन्त्रता अधिक वाञ्छनीय है। मेरा यह विश्वास है कि यदि कार्यकर्तागण अपना कार्य जारी रक्खेंगे, तो जनता विदेशी कपड़ा नहीं ख़रीदेगी। हम लोगों ने बेचने वालों की ओर अधिक और ख़रीदने वालों की ओर कम ध्यान दिया है। अतएव जनता में प्रचार-कार्य की अधिक आवश्यकता है। हमारा उद्देश्य है, समझा-बुझा कर सुधारना, दबाव डालना नहीं। दबाव तो हिंसा का ही एक अङ्ग है। किन्तु शान्तिपूर्वक सुधार अहिंसा और प्रेम का फल है।

प्रश्न—मज़दूरों और किसानों का उपकार करते हुए क्या आप पूँजीपतियों और मज़दूरों की कलह को रोक सकते हैं ?

उत्तर—हाँ, अवश्य ! यदि लोग अहिंसा के मार्ग पर चलें तो इस कलह से बचना सहज है, गत १२ महीनों में यह सिद्ध हो गया है, कि अहिंसा को यदि नीति भी मान लिया जाय, तो क्या सम्भव नहीं हो सकता ? किन्तु जब लोग इसे अपने आचरण का एक सिद्धान्त मान लेंगे तो यह कलह एक असम्भव वस्तु हो जायगी। अहमदाबाद में इसकी परीक्षा की जा रही है। इससे अत्यन्त सन्तोषजनक फल प्राप्त हुए हैं, और बहुत सम्भव है, कि यह पूर्णतया सन्तोषजनक सिद्ध हो जाय। हम पूँजीपतियों का नाश नहीं करना चाहते, बल्कि पूँजीवाद का नाश चाहते हैं। पूँजीपतियों के विषय में मेरा विचार है, कि वे अपने को उन मनुष्यों का विश्वासपात्र समझें, जिनसे उनकी उन्नति होती है और उनकी पूँजी बढ़ती है। मज़दूरों को पूँजीपतियों के सुधार तक ठहरने की आवश्यकता नहीं है। यदि पूँजी एक प्रकार की शक्ति है, तो परिश्रम भी एक प्रकार की शक्ति है। दोनों का उपयोग, विनाशक या रचनात्मक दोनों प्रकार के कार्यों के लिए किया जा सकता है। दोनों को एक-दूसरे पर निर्भर करता है। यदि कोई मज़दूर अपनी शक्ति का अन्दाज़ा पा ले तो वह अपने मालिक का हिस्सेदार बनने के योग्य है। पर यदि वह अपने मालिक की सम्पत्ति का एकमात्र अधिकारी बनना चाहे, तो वास्तव में वह सोने के अण्डे देने वाली मुर्ग़ी की हत्या करना चाहता है। सुयोग और सुबुद्धि में बराबर असमानता रही है और अन्त तक रहेगी। नदी के किनारे रहने वाले किसी मनुष्य को सूखी भूमि पर रहने वाले एक मनुष्य से अधिक अन्न उत्पन्न करने का सुयोग मिल जाता है। यदि असमानता से हमें सामना करना ही पड़े, तो भी आवश्यक समानता हममें बनी रह सकती है। प्रत्येक मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं पर उतना ही अधिकार है, जितना कि पशु-पक्षियों को है। प्रत्येक अधिकार के साथ, उसकी रक्षा के उपाय भी हैं। यदि परिश्रम करना कर्तव्य है, तो परिश्रम के फल से वञ्चित करने वाले के साथ असहयोग करना अधिकारों की रक्षा का साधन है।

### भाव-परिवर्तन

यदि मालिक और मज़दूर के बीच आवश्यक समानता मान ली जाय, तो मालिकों ( पूँजीपतियों ) का नाश हमारा उद्देश्य नहीं होना चाहिए। हमें उनके भावों में परिवर्तन लाने की चेष्टा करनी चाहिए। यदि वे ग़लत राह पर होंगे तो हमारा असहयोग उनकी आँखें खोल देगा। यदि असहयोग करने के बाद हमारे स्थान पर दूसरे लोग आ जायँ, तो इससे हमें भयभीत नहीं होना चाहिए, क्योंकि हम उन पर भी अपना प्रभाव डालने की आशा करते हैं, और उन्हें मालिक की भूलों में सहायता पहुँचाने से रोक सकते हैं। इस ढङ्ग की शिक्षा की प्रगति मन्द है अवश्य, किन्तु इससे लाभ अवश्यम्भावी है। यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है, कि पूँजीपतियों का नाश, अन्त में मज़दूरों का नाश है।

### बेकारी की समस्या

प्रश्न—जो सत्याग्रही क़ैदी जेलों से छोड़ दिए गए हैं, व यदि बेकार हैं तो क्या करें ?

उत्तर—यदि वे काम करने को तैयार हों, और ईमानदार हों, तो इसमें सन्देह नहीं कि किसी कॉङ्ग्रेस संस्था में उन्हें काम मिल जाय। हर एक को काम के लिए कॉङ्ग्रेस या उससे सम्बन्ध रखने वाली संस्थाओं की ओर ताकने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक सच्चा व्यक्ति अपनी योग्यता और सच्चाई के द्वारा काम पा सकता है।

प्रश्न—कॉङ्ग्रेस ने गोलमेज़ कॉन्फ्रेन्स में कोई भाग न लेने का निश्चय किया था। आपका भी यही निश्चय था। किन्तु अब आपने उस ओर बढ़ने का निश्चय कर लिया है। आप इसका क्या उत्तर दे सकते हैं ? क्या आप सदा सत्य के लिए देश का बलिदान करते रहेंगे, और हमें सत्य और अहिंसा की परीक्षा का साधन समझते रहेंगे ? क्या आप इस बात का अनुभव नहीं करते, कि आत्मिक विकास के लिए सारी ज्योति को आप गढ़े में ढकेल रहे हैं ? हम लोगों में से बहुतों का यह विचार है कि आपके सिद्धान्त 'राष्ट्रीय स्वभाव' हो गए हैं, जो पूँजीपतियों के लिए तो लाभदायक हैं, पर पीड़ितों के लिए विष के समान हैं।

उत्तर—समय के साथ व्यवहारों में भी भेद होता है। मूर्खतापूर्ण स्थिरता सङ्कीर्ण मस्तिष्क का भूत है। यदि मैं अस्थिर हूँ, तो मेरी अस्थिरता बुद्धिमत्तापूर्ण है। किन्तु वास्तव में मैं अपने भूत और वर्तमान आचरणों में कोई अस्थिरता नहीं पाता हूँ। गोलमेज़ परिषद् के स्थायी रूप से बॉयकॉट करने का कोई सवाल ही नहीं था। कॉङ्ग्रेस ने इसलिए उसमें जाना अस्वीकार किया था, कि उसकी शर्तें अस्वीकृत कर दी गई थीं। इस समय वह इसलिए जा सकती है, कि उसका मार्ग खुला हुआ है। मैं आशा करता हूँ, कि जो लोग वहाँ जायँगे, वे जाति के सन्देश को वहाँ निश्चित रीति से व्यक्त करेंगे। यहाँ 'सत्य' के लिए अपने देश का बलिदान करने का कोई सवाल नहीं है। इस सम्बन्ध में सब से पहली बात कार्यकारिणी सभा का निश्चय है। दूसरी बात यह है, कि इससे देश को किसी तरह भी हानि नहीं पहुँचाई गई है। किन्तु मुझे यह कहने में सङ्कोच नहीं है, कि यदि 'सत्य' और 'देश' में से, मुझे किसी एक को चुनना पड़े, तो मैं 'सत्य' का ही साथ दूँगा, क्योंकि 'सत्य' मेरे लिए ईश्वर है। ऐसी दशा में मैं 'सत्य' के लिए देश की क़ुर्बानी तक करने से पीछे न हटूँगा। मेरा विश्वास है कि किसी व्यक्ति या जाति ने 'सत्य' का बलिदान कर कुछ प्राप्त नहीं किया है, इसलिए 'सत्य' के लिए देश का भी बलिदान कर देना एक महान त्याग है।

### मेरे सच्चे कार्यकर्ता

जो लोग मेरे सत्य के अनुसन्धान में मेरा साथ देते हैं, वे वास्तव में मेरी परीक्षाओं की कसौटी नहीं हैं। वे वास्तव में मेरे अमूल्य सहकारी हैं, जिन्हें मेरे ही समान सत्य के अनुसन्धान में आनन्द मिलता है, जैसा कि और किसी वस्तु के अनुसन्धान में नहीं मिलता।

( शेष मैटर दवें पृष्ठ के तीसरे कॉलम के नीचे देखिए )

# "अखिल भारतवर्षीय" मुस्लिम-कॉन्फ्रेन्स

## मुट्ठी भर साम्प्रदायिक मुसलमानों का मुल्लापन

नई दिल्ली ५ अप्रैल—आज अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद का विशेष अधिवेशन आरम्भ हुआ। उपस्थित सज्जनों में निम्न-लिखित प्रतिष्ठित सज्जन थे :—

सर मुहम्मद शफ़ी, सर अब्दुल क़ैयूम, सर अकबर ख़ाँ, मलिक फ़ीरोज़ ख़ाँ नून; सेठ अब्दुल्ला हाँरू, डॉ० ज़ियाउद्दीन अहमद, श्री० अब्दुल अज़ीज़ और मौलाना हसरत मोहानी।

स्वागतकारिणी समिति की सभानेत्री बेगम मुहम्मद-अली ने अपने भाषण में कहा कि "यदि आप लोग मेरे पति के बताए हुए मार्ग पर चलेंगे, तो आप निश्चय स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे।"

सभापति मौलाना शौकतअली ने अपने भाषण में, हिन्दू-मुसलमानों के सम्बन्ध में कहते हुए कहा कि "गत कई वर्षों से इन दोनों जातियों ने भारत में अशान्ति फैला रक्खी है। यदि शीघ्र ही समझौता न हुआ, तो गृह-युद्ध का उठ खड़ा होना सम्भव है। ऐसी दशा में पूर्ण स्वराज्य तो दूर रहे, अधूरा स्वराज्य भी हमें नहीं मिल सकता।" आगे आपने कहा कि "भारत की अधिकांश मुसलमान जनता तथा अपने मुसलमान सहयोगियों के लाख आपत्ति पर भी, महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ ही दिया। मुसलमानों से उन्होंने सलाह भी नहीं पूछी। यदि हम लोगों की सलाह मान ली गई होती, और हिन्दू-मुसलमानों के बीच समझौता कर लिया गया होता तो आज भारत में ये साम्प्रदायिक झगड़े न उठ खड़े होते, और स्वराज्य की ओर भी हमें अधिक सफलता मिली होती।" फिर आपने मुस्लिम अधिकारों के सम्बन्ध में फ़र्माया कि "इन अधिकारों की एक सूची १९२९ की अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद में तैयार की गई थी। मुस्लिम लीग ने भी पीछे इसे स्वीकार कर लिया था। यही सूची जिन्ना की १४ शर्तों के नाम से पुकारी जाती है। हम उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं हैं। मृत्यु के पूर्व मौलाना मुहम्मद अली ने भी हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में एक लेख तैयार किया था, जिससे दोनों दलों के लोगों को सन्तोष हो सकता है।" "हम मुसलमानों ने बिना किसी बाहरी दबाव के १९२७ के मार्च महीने में अपने चिर-वाञ्छित पृथक् निर्वाचन को छोड़ कर सम्मिलित निर्वाचन स्वीकार करा लिया था, और मुसलमानों को भी इस पर सहमत करने में हम सफल हुए थे; किन्तु हमारे हिन्दू सहयोगियों ने मद्रास कॉङ्ग्रेस के प्रस्ताव को नामञ्ज़ूर कर, वास्तव में झगड़े का बीज बो दिया। आज मुसलमानों को इसके लिए राज़ी करना असम्भव है। अब हमें हिन्दुओं में भाव-परिवर्तन की प्रतीक्षा करना है।"

परिषद में अन्य कई प्रस्तावों के अतिरिक्त हिन्दू-मुसलिम दङ्गे के सम्बन्ध में निम्न लिखित प्रस्ताव उपस्थित किया गया, जो सर्व-सम्मति से पास हो गया :—

"यह परिषद हिन्दुओं की उद्दण्डता पर शोक प्रकट करती है, जिसकी वजह से बनारस, आगरा, कानपुर, मिर्ज़ापूर आदि स्थानों में दङ्गे हो गए और जिसमें निर्दोष और निःशस्त्र मुसलमान मारे गए तथा मुसलमान औरतों और बच्चों की भी हत्याएँ की गईं।

"इस परिषद को इस बात का पूरा विश्वास है कि कॉङ्ग्रेस सत्याग्रहियों की अहिंसा-प्रवृत्ति केवल एक पाखण्ड है। वास्तव में यह एक निन्दनीय राजनैतिक चाल है, जो एक शक्तिशाली साम्राज्य के सामने चली गई है।

"इस परिषद का यह विश्वास है कि हिन्दुओं का वर्तमान भाव अवश्य ही भारत में गृह-युद्ध उत्पन्न कर देगा। यह परिषद सरकार को चेतावनी देती है कि यदि वह ज़रा भी ग़ाफ़िल रहेगी तो इस अभागे देश का सर्वनाश हो जायगा।"

श्री० ज़हूर अहमद ने इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए कहा—"मुसलमान कॉङ्ग्रेस से दब कर रहें या नहीं, यही प्रश्न इस समय हमारे सामने है। यदि सरकार मुसलमानों की रक्षा नहीं कर सकती है, तो साफ़-साफ़ कह दे, और जब मुसलमान अपनी रक्षा के लिए हथियार ग्रहण करें, उस समय उसे उन पर गोलियों की वर्षा नहीं करनी चाहिए।" इसके बाद वक्ता ने महात्मा गाँधी के एक वक्तव्य का उल्लेख किया, जिसमें उन्होंने कहा था कि एक दिन भारत में गृह-युद्ध होगा, और तब तक जारी रहेगा, जब तक कि दोनों में से एक का नाश न हो जाय। वक्ता ने कहा कि "हमारी शक्ति की परीक्षा आज ही क्यों न की जाय, और उसीके निर्णय के अनुसार कार्य किया जाय?" इस पर बड़े ज़ोर से "अल्लाहो अकबर" की ध्वनि हुई। इसके बाद वक्ता ने कहा कि

---

जब एक प्रेस-प्रतिनिधि ने महात्मा गाँधी को श्री० ज़हूरअहमद का वह भाषण दिखाया, जिसमें उन्होंने कहा है कि "गाँधी जी ने कहा है कि देश में एक गृह-युद्ध होगा, जिसमें दोनों जातियों में से किसी एक का नाश होगा।" तो महात्मा जी ने कहा कि "मैंने जो कुछ कहा है, उसका इससे बढ़ कर दुष्टतापूर्ण अर्थ दूसरा नहीं हो सकता।"

---

मुसलमानों के प्रति सरकार की सहानुभूति न होने का एक मात्र कारण यह है कि सरकार को मुसलमानों की शक्ति का परिचय नहीं मिला है।

मौलाना अब्दुलमजीद बदाउनी ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"कानपुर के वे शहीद धन्य हैं, जिन्होंने मुसलमानों के हृदय से मृत्यु के भय को भगा दिया है।"

श्री० फ़तहमुहम्मद ने कहा कि 'गाँधी जी की जय' का वास्तविक अर्थ "मुसलमानों का क्षय" है।

बम्बई के हाजी अलीमुहम्मद ने कहा कि बम्बई के मुसलमानों ने वहाँ के हिन्दुओं को ऐसा सबक़ सिखाया है कि वे दङ्गा करने का नाम भी नहीं लेंगे।

अन्त में मौलाना शौकतअली ने भाषणों के उत्तेजक भावों की निन्दा करते हुए कहा कि मुसलमान मिल कर कार्य करें, किन्तु प्रतिहिंसा उनका उद्देश्य नहीं होना चाहिए।

मुस्लिम नेशनलिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी श्री० रफ़ी-अहमद किदवई ने निम्न-लिखित सूचना प्रकाशित की है :—

"गत २९वीं मार्च को कॉङ्ग्रेस के पण्डाल में नेशनलिस्ट मुस्लिम पार्टी की एक सभा हुई थी, जिसमें निम्न लिखित सज्जन उपस्थित थे :—मौलाना अब्बुल कलाम आज़ाद, डॉ० अन्सारी, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और मिस सोफ़िया सोमजी। मौलाना अब्बुल कलाम आज़ाद ने अपनी वक्तृता में पञ्जाब, बङ्गाल, बम्बई और सीमाप्रान्त के मुसलमानों को राष्ट्रीय संग्राम में उचित भाग लेने के लिए बधाई दी। उन्होंने कहा कि यह बड़े सन्तोष की बात है कि दलबन्दी हो जाने पर भी, मुसलमानों के एक बड़े हिस्से ने इस आन्दोलन में भाग लिया है।

"डॉ० अन्सारी ने, साम्प्रदायिक झगड़ों को सुलझाने के लिए किए गए कार्यों का उल्लेख किया।

"सभा ने नेशनलिस्ट मुसलमानों की एक परिषद लखनऊ में करने का विचार किया।

"नेशनलिस्ट मुसलमानों ने दिल्ली में होने वाली अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद में अपना प्रतिनिधि न भेजने का निश्चय किया है। तदनुसार किसी राष्ट्रवादी मुसलमान ने उसमें भाग नहीं लिया।"

* * *

---

( ५वें पृष्ठ का शेषांश )

मेरा विश्वास है कि मैं आत्म-विकास के लिए ज़ोर देकर सारी जाति को विपत्ति में नहीं फँसा रहा हूँ, क्योंकि आत्म-विकास और राष्ट्रीय-विकास में घना सम्बन्ध है। कोई भी जाति, व्यक्ति के बिना, जिससे वह बनी है, आगे नहीं बढ़ सकती, और इसी प्रकार, जाति की प्रगति पर बिना प्रभाव डाले, कोई व्यक्ति भी आगे नहीं बढ़ सकता।

अन्तिम दोष मुझ पर बिना विचारे लगाया गया है। मैंने अपना कार्य दक्षिण अफ़्रिका से आरम्भ किया था, और वे कार्य दलितों की ओर से किए गए थे। दलितों को इससे लाभ पहुँचा। फिर हमें, चम्पारन, खेड़ा और अहमदाबाद में भी सफलता मिली। बोरसद और बारडोली के सत्याग्रह में किसानों को बहुत सफलता मिली है। जाति पर इस प्रकार की परीक्षा का क्या फल होता है, यह अभी नहीं कहा जा सकता।

### जनता में जागृति

इन परीक्षाओं का ही प्रभाव है, कि जनता में आज इतनी जागृति फैली हुई है। मैं इससे अपनी प्रशंसा नहीं करता, मैं तो ईश्वर के हाथों का केवल एक यन्त्र हूँ। वास्तव में सत्य और अहिंसा की शक्ति ने ही ऐसा कमाल किया है। यदि हम लोगों ने पूर्ण स्वराज के लिए सत्याग्रह की घोषणा की थी, तो इसी महान उद्देश्य से हम गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में भी जा रहे हैं। यह सम्भव है कि, हमारा उद्देश्य सफल न हो, किन्तु यदि हम सरकार के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दें, तो यह भी हमारी भूल होगी। यदि हम इस समय का उचित उपयोग करें, जहाँ तक सम्भव हो, समझौते की शर्तों का उचित प्रतिपालन करें, विदेशी वस्त्र और मादक द्रव्यों का पूर्ण-रूप से वहिष्कार कर दें; और यदि हम खादी का पूर्ण-प्रचार कर दें, तो गोलमेज़ परिषद में उद्देश्य न सिद्ध होने पर भी हम अपने को युद्ध के लिए विशेष रूप से सुसज्जित पाएँगे। हम लोग कदापि यह विश्वास न रक्खें, कि समझौता हो जाने से ही हमारे उद्देश्य की सिद्धि हो गई है।

* * *

# क्या मुसलमान वास्तव में राष्ट्रीयता के विरोधी हैं ?

## मुस्लिम परिषद् के सम्बन्ध में डॉ० आलम का वक्तव्य

### "दिल्ली की मुस्लिम परिषद एक तमाशा थी"

### "मुस्लिम जनता संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन चाहती है"

डॉ० मुहम्मद् आलम ने, दिल्ली की मुस्लिम-कॉन्फ्रेन्स के सम्बन्ध में, फ़्री प्रेस के प्रतिनिधि को अपना निम्न-लिखित वक्तव्य दिया है :—

"मैं परिषद् में भाग लेने के लिए दिल्ली नहीं गया था, बल्कि मैं यह देखने के लिए गया था कि साम्प्रदायिक समझौते के सम्बन्ध में कुछ उन्नति हुई है या नहीं। इस परिषद् को सभी दल के मुसलमानों की परिषद् कहना उचित नहीं है, क्योंकि वास्तव में इसका सम्बन्ध मुसलमानों के एक विशेष गुट्ट से है, जिनमें अधिकांश केवल मनोरञ्जन के लिए राजनीति में टाँग अड़ाते हैं। इस परिषद् का राष्ट्रीय मुस्लिम दल जमायत-उल-उल्मा और सीमा-प्रान्त के नेताओं ने बहिष्कार किया है। वे इस परिषद् के सङ्गठनकर्ताओं के मत का विरोध करते हैं। इस परिषद् में अनावश्यक बातों पर विचार किया गया है। जो लोग इसके मतों का समर्थन नहीं करते हैं, उन लोगों ने इसमें भाग न लेकर अच्छा ही किया है, क्योंकि इस परिषद् का उद्देश्य निश्चित था और मतभेद के लिए यहाँ स्थान नहीं था। कुछ सदस्यों के विचार भिन्न थे, पर परिषद् का उद्देश्य तो सम्मिलित माँग पेश करना था, इसलिए कहा जाता है कि उन सदस्यों से विचार-परिवर्तन करने के लिए कहा गया। वास्तव में वह परिषद् एक तमाशा थी।

### संयुक्त निर्वाचन

"मेरा विश्वास है कि वे सभी मुसलमान, जिन्होंने भारत के स्वातन्त्र्य युद्ध में किसी प्रकार भी भाग लिया है, इस विषय में एकमत हैं कि साम्प्रदायिक प्रश्नों पर कोई भी समझौता उन्हें तब तक मान्य न होगा, जब तक कि वह संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन के आधार पर न किया गया हो। पृथक निर्वाचन को वे राष्ट्रीय और साम्प्रदायिक दोनों हितों के लिए हानिप्रद समझते हैं। यदि सभी हिन्दू पृथक निर्वाचन के लिए सहमत भी हो जायँ तो भी, व्यक्तिगत रूप से, मैं इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ। केवल मैं ही ऐसा नहीं चाहता, मेरे अनेक मित्र भी ऐसा ही चाहते हैं। मेरा विचार है कि संयुक्त निर्वाचन, कमज़ोर दल वालों का अस्त्र है। इसलिए मुसलमानों को अपने साम्प्रदायिक अधिकारों की रक्षा के लिए संयुक्त निर्वाचन की आवश्यकता समझनी चाहिए। कुछ लोगों का विचार है कि संयुक्त निर्वाचन कमज़ोर दल के लिए हानिप्रद है। किन्तु वास्तव में सिद्धान्त के अनुसार संयुक्त निर्वाचन से ही कमज़ोर दल का हित-साधन हो सकता है। यदि इस सम्बन्ध में वादविवाद खड़ा होगा तो मैं तो संयुक्त निर्वाचन ही के लिए लड़ूँगा। हिन्दू-महासभा पृथक निर्वाचन के लिए भले ही सम्मत हो जाय, मैं सम्मत नहीं हो सकता। एक दिन आएगा, जब हिन्दू पृथक निर्वाचन के लिए प्रयत्न करेंगे। और मुसलमान उनका विरोध करेंगे। आज यह बात असत्य भले ही जान पड़े, किन्तु किसी दिन सत्य सिद्ध होगी। सिन्ध का एक अलग प्रान्त बनाया जाना इसी ढङ्ग का एक उदाहरण है। एक दिन मुसलमानों ने इसका विरोध किया था, और हिन्दू इसके लिए लड़ते थे, किन्तु आज बात बिल्कुल उल्टी है।

### पञ्जाब

"पृथक निर्वाचन, विशेषकर पञ्जाब के लिए बहुत ही हानिकर है। हमें किसी प्रकार भी इसके लिए तैयार नहीं होना चाहिए। दिल्ली-परिषद् में पञ्जाब की ओर से जो लोग गए थे, उनमें से बहुतों ने इस बात का समर्थन किया था। मुस्लिम समाज का अधिकांश भाग राष्ट्रीय दल का अनुयायी है। इसका प्रमाण यह है कि गत सत्याग्रह आन्दोलन में प्रायः १२ हज़ार मुसलमानों ने जेल स्वीकार किया था। इतना ही प्रमाण काफ़ी नहीं है, हम और भी प्रमाण दे सकते हैं कि सारा समाज हमारे साथ है। वास्तव में मुसलमान उन 'राजभक्तों' का, जिनका इस परिषद् में आधिक्य है, साथ नहीं दे रहे हैं। मेरा विश्वास है कि अगले कुछ महीनों में यह बात पूर्णतया सिद्ध हो जायगी, जब कि जनता को इस बात का पता चल जायगा कि किस प्रकार आपस में झगड़े कराए जाते हैं। पृथक्करण की नीति का प्रभाव प्रत्यक्ष है। थोड़े ही दिनों में लोग इसका अनुभव करने लगेंगे। वास्तव में मुसलमान जनता संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन चाहती है, किन्तु उसकी आवाज़ बहुत धीमी है। यदि उनके वास्तविक नेतागण उनकी आवाज़ को अधिक व्यक्त करें, तो पृथक निर्वाचन चाहने वालों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि मुस्लिम जनता संयुक्त निर्वाचन के ही पक्ष में है। वास्तव में, व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से ही कुछ लोग, संयुक्त निर्वाचन का विरोध करते हैं।"

---

## जमायत-उल-उलेमा में मौलाना आज़ाद का भाषण

### "पृथक निर्वाचन की माँग मुसलमानों की कमज़ोरी है"

### "मज़हब की दुहाई देना निन्दनीय है"

मौलाना अब्बुल कलाम आज़ाद ने कराची में होने वाले जमायत-उल-उलेमा के १० वें अधिवेशन में मुसलमानों की नीति के सम्बन्ध में एक प्रभावशाली भाषण दिया है। राजनीति से मुसलमानों का सम्बन्ध बतलाते हुए आप कहते हैं कि १६ वर्ष पहले, मुसलमानों के लिए 'राजनीति' एक अपवित्र पदार्थ थी। इसीलिए बहुत समय तक वे कॉङ्ग्रेस से अलग रहे। इस प्रकार मुसलमानों ने स्वयं अपनी राजनैतिक हत्या कर ली थी।

### ख़िलाफ़त आन्दोलन

जब ख़िलाफ़त आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ तो मुसलमान इस आन्दोलन में कूद पड़े। किन्तु मुसलमानों को यह याद रखना चाहिए कि ख़िलाफ़त, एक धार्मिक समस्या थी, और इसके लिए त्याग कर, उन्होंने न तो हिन्दुओं की ही कुछ सहायता की और न देश के प्रति ही अपने कर्तव्य का पालन किया। इसके विपरीत, उन्हें हिन्दुओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए, क्योंकि उस आन्दोलन में हिन्दुओं ने उनका साथ दिया था। हिन्दुओं ने जब कभी कोई आन्दोलन शुरू किया, मुसलमान दूर हट कर ताकते रहे और जब फल प्राप्त करने का समय आया तो वे सबसे बड़ा भाग लेने के लिए पहुँच गए। क्या मुसलमानों के लिए यह लज्जा की बात नहीं है? क्या देश के प्रति अपने त्याग का उत्तरदायित्व इस प्रकार दूसरों के हिस्से छोड़ देना उनके लिए उचित है? जिस इस्लाम धर्म ने स्वतन्त्रता के लिए अनेक युद्ध किए हैं, क्या उसका भाव यही है? नहीं, इन सभी बातों से तो यह जान पड़ता है कि मुसलमानों ने आत्म-सम्मान खो दिया था, और उनके भीतर देशभक्ति का भाव नहीं रह गया था।

### राष्ट्रीय आन्दोलन और मुसलमान

वर्तमान राष्ट्रीय आन्दोलन में मुसलमानों ने अपने गौरव की रक्षा की है। पञ्जाब, सीमा-प्रान्त, और बङ्गाल में तो वे बहुत आगे रहे हैं। किन्तु तो भी मुसलमानों का एक बहुत बड़ा भाग इस आन्दोलन से अलग रहा है। वे केवल अपने अधिकारों के लिए झगड़ा करते रहे हैं। मुझे अच्छी तरह याद है कि जिस समय मि० मॉण्टेगू भारत में आए थे, और कुछ सुधारों की योजना की गई थी, उसी समय, हैदराबाद के सय्यद बेलग्रामी ने, मुसलमानों की ओर से पृथक निर्वाचन की माँग पेश की थी। वास्तव में यह सब कारवाई शिमला से की गई थी, जहाँ स्वर्गीय नवाब मुहसिन-उल-मुल्क और सर आगा ख़ाँ, मि० मॉण्टेगू से सलाह-मशविरा कर रहे थे।

वास्तव में, पृथक निर्वाचन की माँग मुसलमानों की कमज़ोरी को प्रकट करती है। सरकार इस कमज़ोरी को समझती है। इसलिए वह इसका उपयोग करना चाहती है। इसलिए हमें सावधान हो जाना चाहिए।

### हिन्दू-मुस्लिम एकता

हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में आपने कहा कि वर्तमान परिस्थिति में, देश के सामने यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, जैसा कि गाँधी जी ने कहा है—"जब तक यह समस्या हल नहीं हो जाती है, तब तक, गोलमेज़ परिषद् में जाना और स्वराज्य के लिए प्रयत्न करना व्यर्थ है।"

किन्तु यह प्रश्न धार्मिक नहीं, आर्थिक है। उदाहरण-स्वरूप, बङ्गाल दो भागों में बँटा हुआ है, ज़मींदार और किसान। ज़मींदारों में अधिकांश हिन्दू और किसानों में अधिकांश मुसलमान हैं। यहाँ धर्म का कोई प्रश्न नहीं है। यहाँ तो प्रश्न यह है कि धनवानों से ग़रीबों की रक्षा की जाय। यहाँ धर्म, सभ्यता और प्रथा की दुहाई देना व्यर्थ है। जो लोग धर्म की दुहाई देते हैं, वे वास्तव में रोग के वास्तविक कारण को छिपाते हैं। बात असल यह है कि इस प्रकार के संरक्षण तो प्रत्येक शासन-विधान की प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं। इनके लिए हो-हल्ला मचाना मूर्खता है।

---

## कुमारी सोफ़िया ख़ातून का वक्तव्य

### "स्वाधीनता-समर में भाग लेने वाले मुसलमान ही हज़रत के सच्चे अनुयायी हैं"

### "मि० जिन्ना की १४ शर्तों पर अड़े रहना, वास्तव में भीख माँगना है"

कुमारी सोफ़िया ख़ातून अपनी यूरोप-यात्रा के सिलसिले में दक्षिण अफ़्रिका के केपटाउन नामक शहर को गई हैं। आपने वहाँ से एक वक्तव्य प्रकाशित किया है। वह नीचे दिया जाता है :—

"मुसलमानों ने जाति की स्वतन्त्रता के लिए इतना कम स्वार्थ-त्याग किया है कि उन्हें, साम्प्रदायिक अधिकारों के लिए दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। मि० जिन्ना की १४ शर्तों का समर्थन किसी भी राष्ट्रीयतावादी मुसलमान ने नहीं किया है। जाति की स्वाधीनता के लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों की सम्मिलित माँग ही अपेक्षणीय है। मुसलमानों की मानसिक वृत्ति बहुत हेय हो गई है। वे भिक्षा माँगने पर तुले हुए हैं। जिन्ना की १४ शर्तों पर अड़े रहना, उसी की बार-बार याचना करना, भिक्षा माँगना नहीं तो क्या है? हम योग्यता प्राप्त तो करना चाहते नहीं, किन्तु केवल मुसलमान होने की हैसियत से अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं। मुसलमान शब्द का अर्थ भिक्षुक नहीं, बल्कि स्वाधीन है। जाति की स्वाधीनता के लिए कुछ सच्चे मुसलमानों ने जेल स्वीकार किया है। जब ये जाति के लिए क़ुर्बान करने वाले, हज़रत मुहम्मद के सच्चे अनुयायी कालकोठरी में कालयापन कर रहे थे, उस समय, १४ शर्तों की भीख माँगने वाले मुसलमान नई दिल्ली में आमोद-प्रमोद कर रहे थे और लाट साहब की सलामी बजा रहे थे। द्वैध शासन ने यह सिद्ध कर दिया है कि जाति का मुख वास्तव में काँङ्ग्रेस ही है। किन्तु भला चोर भी धर्म की कथा सुनता है। स्वार्थवादी सम्प्रदाय में रहने की अपेक्षा तो इस जाति की मृत्यु ही अच्छी है। जिन लोगों में मनुष्यत्व का शेष भी नहीं रह गया है, मुसलमानों में वही लोग १४ शर्तों के बिना झोली नहीं हटाना चाहते। ज़रा दक्षिण अफ़्रिका में आकर देखिए, हिन्दू मुसलमानों का स्वार्थ कितना अभिन्न है। पृथ्वी पर चारों ओर घूम कर देखिए, मुसलमान, कौन कहलाने के योग्य हैं। ईराक़ के होम सेक्रेटरी ने भगतसिंह की शोक-सभा में भाषण देते हुए कहा है कि, 'इस केपटाउन के भारतीय मुसलमानों में और किसी भी स्वाधीन देश के मुसलमानों में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु भारतवर्ष में मुसलमानों का एक दल है, जो भिखमङ्गों की भाँति दूसरों के सामने हाथ पसारा करता है।"

* * *

## सीमा-प्रान्त के गाँधी का भाषण

### "काँङ्ग्रेस, हमारे हज़रत की सब से प्यारी वस्तु, स्वतन्त्रता के लिए लड़ रही है।"

### "मुसलमानों को इसका साथ देना चाहिए।"

गत ७वीं अप्रैल को सीमा-प्रान्त के गाँधी, ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार ने, दिल्ली की एक सार्वजनिक सभा में एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया है। अफ़ग़ानी आक्रमण का ज़िक्र करते हुए आपने कहा, कि यह अफ़वाह उन लोगों की फैलाई हुई है, जिन्हें सीमा-प्रान्त की शारीरिक शक्ति और भारत की मानसिक शक्ति की एकता फूटी आँखों भी नहीं सुहाती। महात्मा गाँधी, बर्मा, मद्रास आदि प्रान्तों में तो स्वतन्त्रतापूर्वक जा सकते हैं, किन्तु सीमा-प्रान्त जाने की आज्ञा उन्हें क्यों नहीं दी जाती? क्या सीमा-प्रान्त भारत के अन्तर्गत नहीं है?

साम्प्रदायिक दङ्गों के सम्बन्ध में आपने कहा, कि जो लोग यह चाहते हैं, कि हम ( काँङ्ग्रेसवादी ) इस समय का अपनी शक्ति के सङ्गठन में उपयोग नहीं कर सकें, वे ही इन झगड़ों के लिए उत्तरदायी हैं। मस्जिद के सामने बाजा न बजाने का प्रश्न उपहासास्पद है। धर्म हमें घृणा नहीं, बल्कि प्रेम सिखाता है।

सीमा प्रान्तीय जातियों के प्रति सरकार की नीति के सम्बन्ध में आपने कहा कि सरकार इन्हें दबाने के लिए करोड़ों रुपए ख़र्च करती है, किन्तु यदि वे ही रुपए उनकी शिक्षा में ख़र्च किए जायँ, तो प्रेम और शान्ति के द्वारा उन्हें जीता जा सकता है।

### काँङ्ग्रेस और मुसलमान

काँङ्ग्रेस के सम्बन्ध में आपने कहा—भारत में काँङ्ग्रेस ही एक ऐसी संस्था है, जो ग़रीबों का पक्ष लेती है। हमारे हज़रत मुहम्मद को जो चीज़ सब से अधिक प्यारी थी, काँङ्ग्रेस उसी के लिए लड़ती है। मुसलमानों को काँङ्ग्रेस का साथ अवश्य देना चाहिए। पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो ३५ करोड़ जनता की इच्छा-शक्ति को रोक सके। एक बार स्वातन्त्र्य-युद्ध में अग्रसर हो चुकने पर, कोई वस्तु हमारे मार्ग में बाधा नहीं पहुँचा सकती। अफ़ग़ानों को हिन्दू-मुस्लिम या सिक्ख के झगड़ों से कोई सम्बन्ध नहीं है।

* * *

## "पृथक निर्वाचन से मुसलमानों को कोई लाभ नहीं है।"

### अखिल भारतीय शिया-कॉन्फ़्रेन्स के सभापति का भाषण

लखनऊ में होने वाली अखिल भारतीय शिया-परिषद के सभापति राजा नवाबअली ने परिषद में भाषण देते हुए कहा है कि देश की स्वाधीनता के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता की भारी आवश्यकता है। दोनों पक्ष के जवाबदेह मनुष्यों को इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। इस साम्प्रदायिक मामले का निपटारा, ऊपरी दिल से नहीं, बल्कि भीतरी दिल से होना चाहिए। मुसलमानों के सम्बन्ध में आपने कहा है कि देश की उन्नति के लिए उन्हें हिन्दुओं का साथ देना चाहिए। सब से अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न, पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में आपने कहा कि "मुझे विश्वास है कि पृथक निर्वाचन से मुसलमानों को कोई लाभ नहीं होगा। यदि मुसलमान लोग इस बात पर विचार करें तो उन्हें साफ़ मालूम हो जायगा कि, पृथक निर्वाचन के लिए प्रयत्न कर, वे अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। परिस्थिति पर विचार करके ही यह परिषद संयुक्त निर्वाचन के लिए ज़ोर देती है। दिल्ली की मुस्लिम परिषद में जो प्रस्ताव पास किया गया है कि जब तक १४ शर्तें मञ्ज़ूर न की जाएँगी, तब तक मुसलमान देश की उन्नति के लिए हाथ न बँटा सकेंगे, उसकी ओर ध्यान आकर्षित करते हमें अपार दुःख होता है। यह प्रस्ताव साफ़ शब्दों में, गोलमेज़ परिषद के सामने की गई मुस्लिम नेताओं की राष्ट्रीय माँग का विरोध करता है।"

* * *

## "मौलाना शौकतअली के भाषणों से केवल गुण्डापन ही फैल सकता है!"

### मि० शेरवानी के विचार

मौ० शौकतअली के भाषण और वक्तव्य के सम्बन्ध में पूछने पर मि० टी० ए० के० शेरवानी ने 'लीडर' के सम्वाददाता से कहा है कि "मौलाना शौकतअली के भाषणों और वक्तव्यों को पढ़ कर मुझे अपार दुःख हुआ है। इस प्रकार के भाषणों से गुण्डापन का ही प्रचार हो सकता है। वास्तव में इससे मुसलमानों की हानि ही होगी। राष्ट्रवादी मुसलमानों को इन भाषणों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। उन्हें उचित है कि वे अपने निर्धारित मार्ग पर ही अग्रसर हों। मुसलमानों को अब धोखा नहीं दिया जा सकता। मुसलमान अब राष्ट्रवाद की ओर झुक रहे हैं। मैं मौलाना साहब से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने अपशब्दों को प्रमाणित करने की चेष्टा करें। अहिंसा के अवतार महात्मा गाँधी को चैलेञ्ज करने के पहले, मौलाना साहब यदि स्वयं अपनी कमज़ोरियों और बेवक़ूफ़ियों पर विचार कर लें तो अच्छा हो।"

—गत १३वीं अप्रैल को, आज़ाद-मैदान में एक सर्वसाधारण सभा में भाषण देते हुए, मि० के० एफ़० नरीमैन ने, मौलाना शौकतअली के सम्बन्ध में कहा है कि "मैं मौलाना शौकतअली की परवाह नहीं करता। वे अपने विचारों को बराबर बदलते रहते हैं। न मालूम आगे उनके विचार क्या होंगे। इस प्रकार के डाँवाडोल विचार वाले लोग, शिक्षितों पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते।"

* * *

## सम्प्रदायवादियों के मुँह पर चपत

### सय्यद अब्दुल्ला ब्रेलवी का भाषण

बम्बई का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा में भाषण देते हुए 'बॉम्बे-क्रॉनिकल' के यशस्वी सम्पादक सय्यद अब्दुल्ला ब्रेलवी ने कहा है कि "हम राष्ट्रवादी मुसलमानों ने, संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में अपना पक्का इरादा कर लिया है। भारत के भावी शासन-विधान में हमें संयुक्त निर्वाचन ही मिलना चाहिए, और इसके लिए हम महात्मा गाँधी से भी लड़ेंगे। हमारा विश्वास है कि यदि पृथक निर्वाचन मञ्ज़ूर हो गया, तो दोनों दल के सम्प्रदायवादी झगड़े उपस्थित करेंगे, और आज़ादी का मज़ा ग़रीबों को नहीं, अमीरों को मिलेगा। हम मुसलमान भारत की आज़ादी के लिए युद्ध करने में किसी से कम नहीं हैं, और यह हमारा निश्चय है कि हम तब तक भारत की आज़ादी के लिए लड़ेंगे, जब तक कि कराची काँङ्ग्रेस की सभी शर्तें मञ्ज़ूर न कर ली जायँ। जिन लोगों ने स्वातन्त्र्य युद्ध में भाग नहीं लिया था, वे ही साम्प्रदायिक झगड़ों की जड़ हैं, और उनकी ये हरकतें राष्ट्रवादी मुसलमानों के लिए अपमानजनक हैं। दिल्ली की कॉन्फ़्रेन्स में, वास्तव में मुसलमानों का कोई भी सच्चा प्रतिनिधि नहीं गया था। गत आन्दोलन में भाग लेने वाला एक मुसलमान भी उसमें मौजूद नहीं था। ग़रीबों को कभी उन लोगों के फन्दे में नहीं पड़ना चाहिए, जो लोग उन्हें सम्प्रदाय के नाम पर ठगते हैं, बल्कि उन्हें राष्ट्रवादी मुसलमानों का साथ देना चाहिए।"

* * *







१६ अप्रैल, सन् १९३१

## देश का गलित कोढ़

बीसवीं सदी के इस मध्याह्नकाल में—जबकि पाश्चात्य देशवासी दिनों-दिन अपना क्षेत्र विस्तृत करने की चिन्ता में लगे हैं; अपने अतुल वैभव से सन्तुष्ट न होकर, अन्य निकटवर्ती देशों को हड़प जाने की नित्य नई तरकीबें सोचने में लीन हैं, जबकि बीसवीं सदी का संसार बहुत तीव्र गति से विज्ञान और कला के पथ में अग्रसर हो रहा है; जब कि पाश्चात्य देशवासी अपने हवाई बेड़ों का सङ्गठन करके केवल ४८ घण्टों में इङ्गलैण्ड से भारत पहुँचने की स्कीमें तैयार कर रहे हैं, जबकि छोटे से छोटे राष्ट्र अपने देशवासियों को अधिक से अधिक वैभव, सुख और शान्ति पहुँचाने की चेष्टा में रत हैं—ऐसे उन्नति और विकास के इस युग में अभागे भारत के ३१ करोड़ (नई मनुष्य-गणना के अनुसार ३५ करोड़) निवासी, हिन्दू-मुस्लिम के उस घृणित समस्या को सुलझाने का प्रयत्न कर रहे हैं, जिसमें यह निश्चय करना है, कि बाजा मस्जिद के सामने बजे या उसके पीछे! 'मग़रिब' के पहिले बाजा मस्जिद के सामने बजाया जा सकता है या उसके बाद!! गोकुशी आम सड़कों पर क़ानूनन हो सकती है या लुक-छिप कर!!! मन्दिर में केवल शङ्ख बजाया जाय या घड़ियाल भी साथ बजाए जा सकते हैं!!!

जिन उदाहरणों की चर्चा ऊपर की गई है, निस्सन्देह वे साधारण, अतएव उपेक्षनीय हैं, किन्तु इन साधारण घटनाओं के अन्तराल में देशवासियों की जो दूषित मनोवृत्ति छिपी हुई है, और जो ज़रा सा ठेस लगते ही हिन्दू-मुसलमानों के भीषण दङ्गों के रूप में हमारे सम्मुख प्रकट हो जाती है—जबकि देश का मनुष्यत्व पशुत्व में परिणत हो जाता है—तो उस घृणित मनोवृत्ति की उपेक्षा राजनीतिक दृष्टि से नहीं की जा सकती। देश के वक्षस्थल पर हाल ही में अनुष्ठित होने वाले मिर्ज़ापुर, बनारस, आगरा तथा कानपुर आदि के भीषण दङ्गे हमारी आँखों में उँगली डाल कर उनके कारणों पर विचार करने को हमें बाध्य कर रहे हैं। आए-दिन के होने वाले इन भीषण उपद्रवों के अन्तराल में छिपे हुए कारणों पर समय-समय पर विचार करते रहना हमारा भी एक दुखद्-कर्तव्य रहा है और अधिक से अधिक चिन्तन करने पर जो निष्कर्ष हम निकाल सके हैं, उसकी चर्चा करना ही इस छोटे से लेख का उद्देश्य है। अस्तु,

हमें सब से पहिले उन कारणों पर विचार करना है, जिनके कारण प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलन के बाद देश का वातावरण आज की भाँति कलुषित और हिंसापूर्ण हो जाता है? आख़िर वह कौन सा ऐसा रहस्यपूर्ण कारण था, जिसने सन् १९२१ के सत्याग्रह आन्दोलन के विफल होते ही देश के वातावरण को आज ही की भाँति कलुषित एवं हिंसापूर्ण बना दिया था? इस प्रश्न का उत्तर ही इन जातीय विभेदों और वैमनस्य का कारण सिद्ध हो सकता है और इसी प्रश्न पर हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

यदि संसार की समस्त जातियों के उत्थान पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाय, तो पता चलेगा, कि किसी भी देश में, किसी भी काल में और किसी भी जाति में विभीषणों की, जयचन्दों और अमीचन्दों की तथा मीरजाफ़रों की कमी नहीं रहती। संसार के किसी भी उन्नतशील देश को उदाहरण के तौर पर ले लीजिए, हम आपको इन 'मीर जाफ़रों' के नाम गिना सकते हैं—जो अपना पेट पालने के लिए, अपना नेतृत्व क़ायम रखने के लिए तथा अपना बड़प्पन जताने के लिए—थोड़े से चाँदी के टुकड़ों पर अपना शरीर और अपनी आत्मा ही नहीं, अपना वह देश तक बेचने को तैयार हो जाते हैं, जिसकी मिट्टी और पानी से उनके शरीर की रचना हुई है! इस प्रकार के मानव जाति के कलङ्क यदि भारतीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन में रोड़े अटकाते हों, तो इसमें कौन सा आश्चर्य है?

हमारे दुर्भाग्य से पण्डिताई, पुरोहिताई और महन्ती की भाँति नेतागिरी भी आज लोगों का पेशा और जीवन-यापन का साधन हो गया है। एक-दो नहीं, हम कोड़ियों ऐसे स्वयं-निर्मित नेताओं के नाम गिना सकते हैं, जिनके लिए मुट्ठी भर अन्न का ठिकाना नहीं था, वकालत अथवा बैरिस्टरी का पेशा उन्हें नहीं फला और जो कौड़ी के तीन थे—जिनसे कोई बुद्धिमान व्यक्ति अधिक बात तक करने में अपनी ज़िल्लत समझता था—वे आज इसी नेतागीरी के कारण मालामाल हो गए हैं। जिनके बैठने के लिए ज़मीन नहीं मिलती थी, इसी नेतागीरी की बदौलत उनकी कोठियाँ खड़ी हो गई हैं—जिन्हें दूसरों की चाकरी नहीं मिलती थी, उनके आगे दर्जनों नौकर हाथ बाँधे खड़े रहते हैं! जिस पेशे से बिना हाथ-पैर हिलाए—बिना किसी प्रकार का परिश्रम किए इतना अधिक धन, ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा प्राप्त होती हो, भला कौन मूर्ख उसे ग्रहण करना स्वीकार न करेगा?

दूसरी ओर देश के उन पूज्य नेताओं के त्याग और तपस्या का उदाहरण है, जिन्होंने अपना सर्वस्व देश के श्रीचरणोंपरअर्पित कर दिया है और जो देश की ग़ुलामी की ज़ञ्जीर को एक बार ही तोड़ कर फेंक देने के लिए कटिबद्ध हो गए हैं—वे जनता के प्रिय हैं, पूज्य हैं और हैं उनके सर्वस्व। इन नेताओं की दृष्टि में हिन्दू और मुसलमानों का प्रश्न एक समान प्रश्न है। वे जो कुछ कर रहे हैं, भारतवासियों के लिए कर रहे हैं; हिन्दुओं और मुसलमानों को लक्ष्य कर नहीं। इनका दृष्टि-कोण राष्ट्रीय भावों से ओतप्रोत है, वे साम्प्रदायिक झगड़ों को रोष, घृणा एवं ग्लानि की दृष्टि से देखते हैं। किन्तु पहिली श्रेणी के स्वयम्भू नेताओं का सारा नेतृत्व सीमित रहता है साम्प्रदायिकता के सङ्कीर्ण दायरे में। आज हमारे दुर्भाग्य से हमारा देश अविद्या और जहालत का केन्द्र है। यहाँ की अधिकांश जनता हमारे गौराङ्ग महाप्रभुओं की कृपा से इस सङ्घर्ष के महान युग से कोसों पीछे पड़ी है, अतएव इन साम्प्रदायिक नेताओं की पाँचों उँगलियाँ घी में होने का यह अन्यतम कारण है। वे अपने देशवासियों की इस मूर्खता का अधिक से अधिक लाभ उठा रहे हैं और देश में होने वाले इन सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए ये ही 'नेता' ज़िम्मेदार है! जब तक इन स्वयम्भू नेताओं के विरुद्ध एक बहुत ज़बर्दस्त आन्दोलन उठा कर देशवासियों को इनके स्वार्थपूर्ण हथकण्डों से सचेत नहीं किया जायगा, तब तक इस समस्या का सुलझाया जाना सर्वथा असम्भव है। हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में शिक्षा का अधिक अभाव है, अतएव उनमें हठधर्मी का होना भी स्वाभाविक है और जिस जाति में अविद्या और हठधर्मी का सम्मिश्रण हो, उस जाति को मूर्ख बना कर अपना नेतृत्व क़ायम करना भी अपेक्षाकृत सहज है, ऐसी हालत में यदि मुस्लिम कठमुल्ले अपना उल्लू सहज ही में सीधा कर सकें, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

यदि सूक्ष्म दृष्टि से विगत राष्ट्रीय आन्दोलनों के इतिहास का निरीक्षण किया जावे तो पता चलता है, कि जब-जब देश में राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रादुर्भाव हुआ है, तब-तब राष्ट्रीयता के वेग में साम्प्रदायिक नेताओं का सर्वथा लोप हो गया है—केवल लोप ही नहीं, इनका अस्तित्व तक खटके में पड़ गया है; किन्तु जैसे ही आन्दोलन विफल अथवा स्थगित हुआ, वैसे ही मूर्ख देशवासियों पर इनका आधिपत्य जमता हुआ दिखाई देता है। दूर न जाकर, यदि सन् १९२१ के सत्याग्रह और ख़िलाफ़त आन्दोलन के इतिहास पर विचार किया जावे, तो हमारी इस धारणा का बहुत ही स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है। पाठकों को स्मरण होगा सन्, १९१९-२१ में, जब कि सत्याग्रह आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था—इन साम्प्रदायिक विभेदों का देश में नामोनिशान तक नहीं था, किन्तु जैसे ही चौरीचौरा वाले हत्याकाण्ड के बाद महात्मा गाँधी ने अपने आन्दोलन को स्थगित किया, वैसे ही हिन्दू-मुसलमानों के उपद्रव प्रारम्भ हो गए थे और आज भी ठीक वही समस्या देश के सामने उपस्थित हुई है। पाठक देखेंगे मिर्ज़ापुर, आगरा, बनारस तथा कानपुर के सारे दङ्गे गाँधी-इर्विन समझौते के बाद ही हुए हैं और आज अनेक शहरों में दङ्गा हो जाने की पग-पग पर सम्भावना दिखाई दे रही है। इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है, कि देश के सामने आज जो कार्यक्रम उपस्थित है, उसमें साम्प्रदायिक नेताओं के लिए कोई भी स्थान नहीं है और उनके सामने प्रश्न है अपनी रोटियों का, अपने स्वार्थ का और अपने नेतृत्व का; सन् १९२१ के राष्ट्रीय आन्दोलन के विफल होते ही, "हिन्दू-सङ्गठन" तथा 'तबलीग़' और 'तनज़ीम' के विषैले आन्दोलनों का जन्म हुआ था और इन साम्प्रदायिक आन्दोलनों का नेतृत्व ग्रहण करने वाले वे ही "नेता' थे, जिनके लिए कॉङ्ग्रेस में कोई भी स्थान शेष नहीं रह गया था; किन्तु राष्ट्रीयता के इस प्रबल प्रवाह ने इन जातीय आन्दोलनों को पूरी तरह पनपने नहीं दिया। अतएव दिल मसोस कर इनमें से कुछ अधिक दूरदर्शी साम्प्रदायिक नेताओं ने तो राष्ट्रीय महासभा के चरणों पर अपना मस्तक रख दिया; किन्तु कुछ ऐसे भी नेता थे जिन्होंने अपने अनुचित दम्भ की रक्षा के लिए ऐसा नहीं किया और आज के सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए ये ही मुट्ठी भर स्वयं-निर्मित नेता सर्वथा ज़िम्मेदार हैं और इनके विरुद्ध अगर आज देश की कोई शक्ति आवाज़ उठाने में समर्थ है, तो वह है राष्ट्रीयता की भावनाओं से सनी हुई उन्मत्त नवयुवकों की टोली। जब तक तरुण-भारत इस समस्या को हाथ में लेकर इन साम्प्रदायिक

'नेताओं' के मस्तक पर पाद-प्रहार न करेगा तब तक देश के वातावरण में किसी भी प्रकार का सुधार एक बार ही असम्भव है, अनिश्चित है और बालू में से तेल निकलने की आशा के समान मूर्खतापूर्ण है !!

इस सिलसिले में महात्मा गाँधी से भी हमें एक आवश्यक निवेदन करना है और वह यह, कि उन्हें व्यर्थ में हिन्दू-मुसलमानों की 'समस्या' को सुलझाने के प्रयत्न में अपनी शक्ति और समय का दुरुपयोग न करना चाहिए, बल्कि इसी समय और शक्ति को अशिक्षित देशवासियों को इन साम्प्रदायिक नेताओं के हथकण्डों से सचेत करने में लगाना चाहिए। हिन्दू-मुसलमानों के वैमनस्य का प्रश्न तो तब उपस्थित होता, जब कि देश के सारे मुसलमान एक ही विचार में रँगे होते ! किन्तु यह बात नहीं है। हम देख रहे हैं देश के अधिकांश शिक्षित मुसलमान आज देश की स्वतन्त्रता के लिए अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हैं और महात्मा गाँधी के नेतृत्व में कार्य भी कर रहे हैं। भारतीय मुसलमानों के प्रतिष्ठित नेताओं में से आज मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, डॉक्टर अन्सारी, मौलाना कसूरी, डॉक्टर आलम, मौलाना ज़फ़र अली, मौलाना अताउल्लाशाह बुख़ारी, श्री० आसफ़ अली, श्री० ब्रेल्वी, तथा सर अली और हसन इमाम आदि आदि अनेक गण्य-मान्य मुस्लिम नेता आज महात्मा गाँधी के कन्धे से कन्धा भिड़ा कर राष्ट्रोत्थान के इस महान् आन्दोलन में उनके सहायक हो रहे हैं। सीमा प्रान्त के 'गाँधी' ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ—जिनके अधीन सीमा प्रान्त के लगभग सारे पठान हैं—आज महात्मा जी की आज्ञा पर अपने जीवन तक की भेंट चढ़ाने का आश्वासन कॉङ्ग्रेस के खुले अधिवेशन में दे चुके हैं। आपने अपने दिल्ली और बम्बई के अभिभाषणों में खुले शब्दों में कहा है, कि वे और उनके सारे अनुयायी (ख़ुदाई-ख़िदमतगार) ही नहीं, सीमा प्रान्त के सारे पठान उस ओर होंगे, जिस ओर स्वतन्त्रता होगी। इस स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए यदि हिन्दू अधिक प्रयत्न करेंगे, तो वे सब उनका साथ देंगे, यदि सिक्ख करेंगे तो सिक्खों का साथ दिया जायगा और यदि स्वतन्त्रता के लिए मुसलमान युद्ध करेंगे तो वे मुसलमानों का साथ देंगे। मुसलमानों की विद्वत् परिषद (जमायतुल-उलेमा) आज राष्ट्रीयता की भावनाओं से ओत-प्रोत है; स्थान-स्थान पर राष्ट्रीय मुस्लिम दलों का निर्माण मुसलमान नेता स्वयं बड़े मनोयोग से कर रहे हैं, अखिल भारतवर्षीय शिया-मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स का दृष्टिकोण भी राष्ट्रीय विचारों का पोषक प्रतीत होता है। ऐसी हालत में हमारी तो यह निश्चित-धारणा है, कि हिन्दुओं की ओर से समझौता स्थापित करने के लिए जो भी उद्योग किए जायँगे, उनसे लाभ तो कुछ नहीं, किन्तु निर्धारित उद्देश्य-पूर्ति में वे घातक अवश्य सिद्ध होंगे। हमारा अध्ययन तो यह बतलाता है, कि "मर्ज़ बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की" बालक यदि रोता हो तो उसे पेट भर कर रो लेने देना चाहिए। ज्यों-ज्यों आप उसे चुप कराने का प्रयत्न करेंगे, त्यों-त्यों वह और भी अधिक मचलने लगेगा। जो दृष्टान्त बालकों के सम्बन्ध में दिया गया है, आज के साम्प्रदायिक मुल्लाओं के लिए भी वही दृष्टान्त लागू है। इसका कारण भी स्पष्ट है, आज देश के शिक्षित और दूरदर्शी मुसलमान राष्ट्रीय आन्दोलन में देश के साथ हैं; जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, अतएव जब 'समझौते' का प्रश्न उपस्थित होता है, तो इन 'कट-मुल्लों' की विशेष पूछ होने लगती है, जिनका देश में कोई भी स्थान नहीं है और ऐसे साम्प्रदायिक नेताओं से इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का परामर्श करना देश के इस कोढ़पूर्ण अङ्ग को सर्वथा अनुचित महत्व देना है। अपनी इस धारणा की पुष्टि में प्रमाण देने के लिए हमें दूर न जाना होगा। कराची कॉङ्ग्रेस के लिए प्रस्थान करने के पूर्व देहली में जिस दिन महात्मा गाँधी ने हिन्दू-मुस्लिम विषय पर एक व्याख्यान देते हुए अपने महात्मा-सुलभ-शब्दों में यह कह डाला कि "हिन्दू-मुसलमानों में एकता स्थापित करने के लिए मैं प्रत्येक मुसलमान के पास घुटनों के बल जाऊँगा और उससे इस सम्बन्ध में अपना हाथ बटाने की भिक्षा माँगूँगा।" उसी दिन से साम्प्रदायिक मुल्लाओं की बाछें खिल गई हैं और वे भी अपने को देश का एक अविच्छिन्न अङ्ग समझने और विष-वमन करने लगे हैं।

हम महात्मा गाँधी को सादर विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि तरुण-भारत की दृष्टि में इन साम्प्रदायिक मुल्लाओं का कोई भी स्थान नहीं है और वह इस प्रकार के साम्प्रदायिक नेताओं को देश का गलित कोढ़ मात्र समझता है।

* * *

## मदारी का बन्दर

इस वर्ष का ४थी और पाँचवीं अप्रैल का दिन भारतीय इतिहास का वह दुर्दिन समझा जायगा, जिस दिन मुट्ठी भर साम्प्रदायिक एवं श्री १००८ जगद्गुरु के शब्दों में "देहिपदपल्लवमुदारम" मुसलमानों द्वारा अङ्ग्रेज़ों की भारतीय राजधानी—दिल्ली में "अखिल भारतवर्षीय" मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स का अधिवेशन हुआ था। इस सभा की कार्यवाही और इसके द्वारा पास किए गए प्रस्तावों की जान-बूझ कर हमने अवहेलना की थी और इसी कारण 'भविष्य' के गताङ्क में हमने इन्हें प्रकाशित करना उचित नहीं समझा, पर चूँकि इस अङ्क में इस विषय पर हमें इन स्तम्भों में अपने विचार प्रकट करने थे और जब तक सारी घटनाएँ पाठकों के सामने न रक्खी जायँ, उन पर की गई टिप्पणी उनकी समझ में आसानी से न आती, इसलिए इस कॉन्फ़्रेन्स का संक्षिप्त विवरण पाठकों की जानकारी के लिए अन्यत्र दिया जाता है, जिससे इन मुल्ला-पन्थियों तथा "जी-हुज़ूरों" के हथकण्डे पाठकों की समझ में आ जावें। दूसरी ओर हम राष्ट्रीय विचार के पक्षपाती मुसलमान नेताओं तथा पत्रों के विचार भी उद्धृत कर रहे हैं, जिससे पाठकों को अपनी निजी धारणा निश्चित करने में सुविधा रहे और साथ ही उन्हें हमारे विचारों की सत्यता का प्रमाण भी मिल सके। अस्तु।

इस कॉन्फ़्रेन्स के सभापति की हैसियत से "बड़के भय्या" ने—जो किसी ज़माने में 'मुल्क की आज़ादी' के लिए बर्फ़ के समान घुले जाते थे—मुसलमानों की मङ्गल-कामना का ढोंग रचते हुए, जैसी पोच दलीलें पेश की हैं, उन पर जितनी भी दया प्रकट की जाय, थोड़ी है ! जब कि साम्प्रदायिक मुल्लाओं द्वारा निर्मित इस परिषद का उद्देश्य ही देश की जाग्रत राष्ट्रीय भावनाओं का विरोध करना और महात्मा गाँधी तथा उनके अनुयायियों को गालियाँ देना मात्र था, तो इस परिषद में जो भी न कहा जाता, थोड़ा था। अस्तु।

इलाहाबाद के स्वनाम-धन्य साम्प्रदायिक नेता (जिनके हाथ में कहा जाता है, इलाहाबाद के कुञ्जड़े और क़स्साइयों का नेतृत्व है) श्री० ज़हूर अहमद साहब ने संयुक्त प्रान्त में होने वाले सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए हिन्दुओं तथा कॉङ्ग्रेस एवं महात्मा गाँधी आदि राष्ट्रीय नेताओं को ज़िम्मेदार ठहराते हुए अपने जहालत से भरे हुए प्रस्ताव के समर्थन में फ़र्माया, कि महात्मा गाँधी बहुत दिनों से मुसलमानों के विरुद्ध अपनी चालें चल रहे हैं। उन्होंने (महात्मा गाँधी ने) यहाँ तक कह डाला है कि "यदि दशा शीघ्र न सुधारी गई, तो इस साम्प्रदायिक कलह में हिन्दू अथवा मुसलमानों का सर्वनाश निश्चित है—इत्यादि।" यद्यपि महात्मा गाँधी ने इसका विरोध करते हुए इसको हद दर्जे का गुण्डापन बतलाया है, किन्तु वहाँ तो प्रश्न था अपना उल्लू सीधा करने का; अतएव ज़हूर अहमद साहब ने फ़र्माया कि यदि महात्मा गाँधी का यह हौसला है, तो "मुसलमानों के लोहे की वे परीक्षा क्यों नहीं कर लेते?" महात्मा जी का अहिंसात्मक आन्दोलन ज़हूर अहमद साहब की दृष्टि में कोरा ढोंग है, इत्यादि, इत्यादि।

एक दूसरे मौलाना साहब ने फ़र्माया कि "महात्मा गाँधी की जय" बोलने का स्पष्ट अर्थ है "मुसलमानों की क्षय।"

एक तीसरे मौलाना साहब ने फ़र्माया कि "कानपुर के मुसलमानों ने मर कर मुसल्मानों के हृदयों से मृत्यु का भय निकाल दिया है और राहे-शहादत खोल दी है।"

बम्बई के एक कठमुल्ला ने तो कमाल की फ़राग़दिली और बहादुराना इज़हार कर डाला। आपने फ़र्माया कि "हम बम्बई के मुसलमानों ने हिन्दुओं को बम्बई में ऐसा पाठ पढ़ा दिया है, जिसे यह कम्बख़्त आजीवन स्मरण रक्खेंगे।"

जब-जब इन मुल्लाओं द्वारा अपने इस प्रकार के उद्गार प्रगट किए गए, तब तब "अल्लाह हो अकबर" के नारे लगा कर उपस्थित मुसलमानों ने इन पर अपार हर्ष प्रकट किया—इसी प्रकार के अनेक अनर्गल प्रलाप परिषद् में किए गए। सब से मज़ेदार बात तो यह थी कि सभा-भवन में एक भी व्यक्ति ने इन 'गर्मागर्म तक़रीरों' का विरोध नहीं किया—सारे प्रस्ताव 'सर्वसम्मति' से पास हो गए, पाठकों को हमें बतलाना न होगा, कि इस परिषद् में सम्मिलित होने वाले कुछ ऐसे भी 'नेता' थे, जो समय-समय पर 'हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद' के लिए वक्तव्य आदि निकाल कर अपने भोले देशवासियों की आँखों में धूल झोंका करते हैं। कुछ 'तक़रीरें' ऐसी भी हुईं, जिनके द्वारा हिन्दुओं की हत्याएँ करने का खुला इशारा था, इसका एक उदाहरण ऊपर दिया भी गया है, किन्तु पाठकों को इस भ्रम में न पड़ना चाहिए, कि उनकी 'शान्ति और रक्षा' के पवित्र नाम को कलङ्कित करने वाली सरकार इन मुल्लाओं को गिरफ़्तार करेगी। यह स्वर्गीय खुदीराम बोस और स्वर्गीय चन्द्रशेखर 'आज़ाद' की जीवनियों का प्रकाशन थोड़े ही है, जिससे गवर्नमेण्ट का आसन क्रोध से प्रकम्पित हो उठेगा ! यह "भारत में अङ्गरेज़ी राज्य" थोड़े ही है, जो ज़ब्त कर लिया जायगा। क्योंकि उसमें हिन्दू-मुसलमानों में स्थायी ऐक्य स्थापित करने का सफल प्रयत्न किया गया था। अस्तु।

हमें इन साम्प्रदायिक मुल्लाओं द्वारा प्रकट किए गए विषैले उद्गारों का उतना खेद नहीं है, जितना इस बात पर, कि आज देश के नवयुवकों में इतनी भी शक्ति नहीं है, कि वे इस प्रकार के कठमुल्लाओं के इन अनर्गल प्रलापों को प्रकट करना एक बार ही असम्भव कर सकें !

पाठक देखेंगे, "बड़के भय्या" ने सारा विष वमन किया है अपने "छोटके भय्या" स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद अली की आड़ लेकर—उन्होंने केवल "छोटके भय्या" के मृत्यासन्न उद्गारों को इस कॉन्फ़्रेन्स में अपने भोले देशभाइयों के सामने अपनी तक़रीर के रूप में रक्खा है। स्वर्गवासी मौलाना मोहम्मद अली के जीवनकाल में मौलाना शौकतअली की कोई बात भी नहीं पूछता था, यह एक अप्रिय-सत्य है। भाई की मृत्यु के कारण 'नेतागीरी' की जो जगह ख़ाली हुई है, उसकी पूर्ति उनके लिए आवश्यक है और उनके इस रिक्त स्थान को हथियाने के लिए वे जो भी न करें, थोड़ा है। किन्तु इस सिलसिले में हम मौलाना शौकतअली साहब का ध्यान स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद अली के उस व्याख्यान की ओर आकर्षित करना चाहते हैं, जो उन्होंने ३०वीं अक्टूबर सन् १९२७ को कलकत्ते में दिया था, उस व्याख्यान का कुछ महत्वपूर्ण अंश इस प्रकार है:—

"To-day we effected a revolutionary change. To-day we say to Mussalmans, you are free to kill cows, and we say to the Hindus you are free to play music before mosques. There is no longer the old competition of snatching some right or other from either community. There is no competition of force or fraud, but a healthy competition of love, kindness and consideration. I announce to-day in the Calcutta of Deshbandhu Das, that the Indian National Congress was never more Indian, national or greater than she is to-day. Following what she did in Bombay, she has to-day adopted a resolution which was a challenge to both Hindus and Mohamedans.

The challenge to the Hindus is that they are free to play music before any mosque at any time and no Mussalman is entitled to interfere with them and the only guard that has been placed over them is their own Hindu conscience. And we say to Mussalmans if you want to kill cows—which your religion does not enjoin but only permits—kill as many cows as you like. But if there is still a small voice in your heart, called the Muslim-Conscience, a sight that your blind eyes may not see but *Allah* sees, then defy that voice, defy that conscience and step from the side of *Allah*. The nobility of your religion—the nobility of your race is on trial to-day ! To-day the question is whether the Hindus are going to be more sparing or considerate or the Mussalmans. I am a Mussalman and I do not believe, what the Hindus believe, but if to *Param Brahma Mahadev* or *Ram* or *Allah* the shedding of cows blood is a sin, I tell you that the All India Congress Committee has earned a great reward from that *Allah* by saving so many cows; while cows were not free to be killed, more were killed. To-day when they are free, I challenge the Mussalmans to kill cows after this, if they can manage with goats instead. Every cow that will be saved, will be saved to the account of the All India Congress Committee. In the same way, it is a sin to disturb Mussalmans in their prayer in Mosques. I say the sin will not be committed now and reward for this will be the reward of the Congress. *From to-day you will see the dawn of a new era*—an era in which cows will be spared, not because you put restrictions, not because you put Sir Charles Tegart at the head of the procession, but because you put Hindu and Mussalman conscience at the head"

इन पंक्तियों का तात्पर्य यह है कि आज हम लोगों में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। आज हम लोग हिन्दू और मुसलमान, किसी भी जाति के पथ में कोई रुकावट उपस्थित नहीं कर रहे हैं। आज हम मुसलमानों से कहते हैं, तुम गोकुशी के लिए आज़ाद हो, और साथ ही हिन्दुओं से भी कहते हैं—तुम मस्जिदों के सामने बाजा बजाने के लिए स्वतन्त्र हो। आज पुरानी प्रतिस्पर्धा की कोई ऐसी बात नहीं है, कि एक जाति दूसरी जाति के अधिकारों को बलपूर्वक छीने। अब आपस में बल अथवा मक्कारी द्वारा नहीं, वरन् पारस्परिक प्रेम, दयालुता और न्याय में प्रतिस्पर्धा दिखाने का अवसर है। मैं आज देशबन्धु दास के कलकत्ते में यह बात घोषित करता हूँ, कि आज की अपेक्षा भारतीय कॉङ्ग्रेस कमिटी कभी भी अधिक राष्ट्रीय तथा महान् न थी। बम्बई वाली बैठक का अनुगमन करते हुए आज इसने एक ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत किया है, जोकि हिन्दू और मुसलमान दोनों को चुनौती ( Challenge ) देने वाला है।

हिन्दुओं को इस बात का चैलेञ्ज है, कि वे किसी भी मस्जिद के सामने, किसी भी समय बाजा बजाने के लिए स्वतन्त्र हैं और किसी भी मुसलमान को उन्हें इस कार्य में बाधा देने का नैतिक अधिकार नहीं है। किन्तु उनके इस कार्य का उत्तरदायित्व उनके हिन्दुत्व और उनकी आत्मा पर है! इसी प्रकार हम मुसलमानों से भी कहते हैं, कि यदि तुम गोकुशी करना चाहो—गोकुशी, जिसे करने को तुम्हारा मज़हब तुम्हें बाध्य नहीं करता, केवल जायज़ मात्र क़रार देता है, तो तुम जितनी गाएँ ज़िबह करना चाहो, कर सकते हो। लेकिन तुम्हारे दिलों में यदि कोई ऐसी आवाज़ उठे—वह आवाज़, जिसे इस्लामी हिदायत अथवा आत्मा की पुकार कहते हैं—जिसे तुम्हारी अन्धी आँखें नहीं देख सकतीं, लेकिन पाक-परवरदिगार देखता है—तो उस आवाज़ को, उस मज़हबी हिदायत को अपनी छाती से बाहर कर दो और ख़ुदा को अपने दिलों से निकाल दो! आज तुम्हारे मज़हब का यक़ीन, तुम्हारी क़ौम का यक़ीन परीक्षा की कसौटी पर चढ़ा हुआ है। आज प्रश्न यह है, कि हिन्दू अधिक धर्मपरायण और सहिष्णु हैं या मुसलमान ज़्यादा मज़हब-परस्त और यक़ीन वाले हैं। मैं मुसलमान हूँ और मैं उन मज़हबी बातों में विश्वास नहीं करता, जिसमें हिन्दुओं का विश्वास है—लेकिन यदि परब्रह्म महादेव या राम अथवा अल्लाह के सामने गोकुशी करना गुनाह है, तो मैं आपसे यह कहता हूँ, कि अखिल भारतवर्षीय कॉङ्ग्रेस कमिटी ने इतनी गौओं की जानें बचा कर आज सब से अधिक सवाब कमाया है। जब गोकुशी करने की आज़ादी कॉङ्ग्रेस ने न दी थी, तो बहुत अधिक गौएँ ज़िबह होती थीं और आज, जब उसकी ओर से आज़ादी हो गई है, तो मैं मुसलमानों को आज चैलेञ्ज देता हूँ, कि यदि उनका उद्देश्य बकरों की क़ुर्बानी करने से ही सिद्ध न होता हो, तो वे अवश्य गोकुशी करें। प्रत्येक गाय, जो क़ुर्बानी से बचेगी, वह कांङ्ग्रेस के हिसाब में बचेगी ( अर्थात् इसका सारा श्रेय कांङ्ग्रेस ही को होगा )। इसी तरह मुसलमानों को मस्जिद में नमाज़ पढ़ते समय अड़चनें पहुँचाना गुनाह है और मैं आज खुले शब्दों में कहता हूँ, कि भविष्य में यह पाप कदापि न किया जायगा और इसका पुण्य भी कांङ्ग्रेस ही सञ्चित करेगी। आज एक नए युग का उदय हुआ है—उस युग का, जिसमें गाएँ ज़िबह होने से बचेंगी और नमाज़ ख़लल से बचेगी। इसलिए नहीं, कि इन कार्यों में आपने रुकावटें पैदा कर दी हैं, इसलिए भी नहीं कि सर चार्ल्स टेगार्ट ( उस समय के कलकत्ता-पुलिस के कमिश्नर, जो हाल ही में विलायत चले गए हैं ) जुलूस के आगे हैं, बल्कि इसलिए, कि हिन्दुओं और मुसलमानों के सिर पर उनके मज़हबों का क़र्ज़ लाद दिया गया है।"

मौलाना शौक़तअली साहब बार-बार इस बात को अपने व्याख्यानों में दोहराते फिरते हैं, कि यद्यपि स्वर्गीय मौलाना मोहम्मदअली उनकी गोद के खिलाए हुए थे, तथापि बहुत सी बातों में 'छोटके भय्या' आपके गुरु थे। क्या हम आशा करें कि "बड़के भय्या" स्वर्गीय मौलाना की इन पंक्तियों से शिक्षा ग्रहण करेंगे और अपने मुल्लापन की हरकतों से बाज़ आवेंगे? हम "बड़के भय्या" और उनके अनुयायी, समय के कठ-मुल्लाओं से करबद्ध प्रार्थना करना चाहते हैं, कि अधमरी मुस्लिम जाति पर अब वे अधिक दया का प्रदर्शन करके सारी जाति के लिए क़ब्र न खोदें—स्वयं जिएँ और दूसरों को जीने दें! हम उन्हें यह भी बतला देना चाहते हैं कि मुल्लापन का वह युग लद गया, जब वे मदारी की भाँति अपने बन्दरों को नचाया करते थे। बम्बई की ताज़ी घटना से उन्हें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जिस वेग से क्रान्ति की लहर आज भारत में हिलोरें ले रही है, वह इस मुल्लापन के निन्दनीय अवलम्ब को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देख सकती। अब भी अधिक विलम्ब नहीं हुआ है, यदि मौलाना साहब तथा उनके अनुयायी अपनी की हुई इन बेजा हरकतों का सच्चाई से प्रायश्चित्त करने का राष्ट्र को विश्वास दिला सकें, तो सम्भवतः वह उन्हें क्षमा कर दे, किन्तु यदि ऐसा न किया गया तो उनके लिए, उनके अनुयायियों के लिए तथा उस खूँटे के लिए भी, जिसके बल पर आज कठ-मुल्लाओं की सारी मण्डली उन्मत्त हो रही है—इसका परिणाम बहुत घातक सिद्ध हो सकता है।

अन्त में हम अपने उन भोले मुस्लिम भाइयों को भी सचेत कर देना चाहते हैं, जिनकी मूर्खता का ये लोग सरासर अनुचित लाभ उठा रहे हैं और उनकी सेवा की आड़ में उनके गलों पर छुरियाँ चला रहे हैं! मदारी के डमरू की आवाज़ पर बन्दरों की भाँति नाचने से उन्हें साफ़ इन्कार कर देना चाहिए। इसी में उनका, उनके परिवार का और उनके देश का कल्याण है!

* * *

## अज्ञात व्यक्तियों से—

विगत सप्ताह सारे देशवासियों के इतना अधिक विरोध तथा अनुनय-विनय करने पर भी देश के प्राङ्गण में कुछ ऐसी निर्मम हत्याएँ तथा हिंसात्मक काण्ड अनुष्ठित हो गए हैं, जिनके कारण विचारशील व्यक्तियों को भविष्य के लिए बड़ी चिन्ता हो रही है। मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की दिन-दहाड़े निर्मम हत्या, देहली-शिमला एक्सप्रेस ट्रेन को उलट देने का निष्फल प्रयत्न, पेशावर के असिस्टेण्ट कमिश्नर—कैप्टन बार्न्स पर आक्रमण करने का उद्योग आदि के अतिरिक्त दो-तीन राजनैतिक डकैतियों का भी सन्देह किया जाता है, इधर-उधर दो-चार बमों आदि के फटने के समाचार भी आए हैं। एक ऐसे समय, जबकि देश के भावी शासन-विधान की योजना पर विचार किए जाने की बहुत-कुछ सम्भावना है, इस प्रकार के उपद्रवों का होना, उन अज्ञात व्यक्तियों के लिए वास्तव में बहुत लज्जाजनक है, जो इन उपद्रवों के लिए ज़िम्मेदार हैं।

हम इस बात को सर्वथा स्वीकार करने को तैयार हैं, कि गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार देश के उन नवयुवकों को—जिनका विश्वास हिंसात्मक क्रान्ति में है, अथवा उनके उन साथियों को, जो एक अनिश्चित-समय के लिए जेल में पड़े सड़ रहे हैं—कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं हुआ है; और यदि वे यह कहें, कि जिस प्रकार महात्मा गाँधी ने सरदार भगतसिंह आदि की फाँसी हो जाने पर अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहा था, कि गाँधी-इर्विन समझौते में इस प्रकार का कोई विधान—कोई शर्त नहीं थी, जिसके अनुसार महात्मा गाँधी लॉर्ड इर्विन का हाथ फाँसी के वारण्ट पर हस्ताक्षर करने से पकड़ सकें; ठीक उसी प्रकार हिंसावादी

भी यह कह सकते हैं, कि गाँधी-इर्विन समझौते में इस प्रकार की भी कोई शर्त व्यक्त नहीं है, कि इस समझौते की सुदीर्घ अवधि में भारत में किसी भी प्रकार के हिंसात्मक काण्ड अनुष्ठित न होंगे। हिंसात्मक क्रान्ति के पक्षपाती यह भी कह सकते हैं, कि इस समझौते से उन्हें किसी भी प्रकार की दिलचस्पी नहीं है और न उन लोगों ने कभी महात्मा गाँधी का अहिंसात्मक नेतृत्व ही स्वीकार किया है—उनका आन्दोलन सर्वथा स्वाधीन है, अतएव उनके इस आन्दोलन का प्रभाव गाँधी-इर्विन समझौते पर न पड़ना चाहिए, इत्यादि।

एक हद तक हम उन नवयुवकों के मनोभावों की कल्पना कर सकते हैं और साथ ही इस समझौते द्वारा उन्हें होने वाली निराशा का भी अनुभव कर सकते हैं, किन्तु हम उनके इन विचारों का समर्थन वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए, कदापि नहीं कर सकते। इस सिलसिले में हम इन नवयुवकों को केवल इतना ही स्मरण दिलाना चाहते हैं कि आख़िर उनका ध्येय क्या है? यदि हम भूल नहीं करते, तो उनका एक मात्र ध्येय है भारत की पराधीनता की बेड़ी को तोड़ कर भारतवासियों के मानवोचित अधिकारों की रक्षा करना। यदि वास्तव में उनका यही ध्येय है और यदि उनके उद्देश्यों को समझने में हमने भूल नहीं की है, तो हम हिंसात्मक विचार के पोषकों का ध्यान देश की वर्तमान राजनीतिक स्थिति पर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझते हैं। हम स्वीकार करते हैं, कि यदि गवर्नमेण्ट ज़रा बुद्धिमानी से परिस्थिति को समझने का प्रयत्न करती, तो वर्तमान विषम परिस्थिति के उत्पन्न होने की सम्भावना ही नहीं थी—आज यदि समस्त राजनैतिक अपराधों के बन्दी जेल से मुक्त कर दिए गए होते, जैसा कि हम 'भविष्य' के इन्हीं स्तम्भों में विस्तृत रूप से लिख चुके हैं, तो हम गवर्नमेण्ट को इस बात का विश्वास दिलाते हैं, कि कुछ दिनों के लिए भारत से हिंसात्मक आन्दोलनों का सर्वथा लोप हो गया होता और तब तक इन काण्डों की पुनरावृत्ति की कोई सम्भावना न होती, जब तक गवर्नमेण्ट अपने दमन, अत्याचार एवं स्वेच्छाचारिता द्वारा इस आन्दोलन का पुनः आवाहन न करती। गवर्नमेण्ट ने देश की संयुक्त पुकार को ठुकरा कर वास्तव में बड़ी भयङ्कर और घातक भूल की है; किन्तु साथ ही हम यह भी नहीं चाहते, कि इस भूल का उत्तर भूलों से ही दिया जाय। हमारी तो निश्चित-धारणा है, कि शासक जाति द्वारा की हुई भूलों के प्रायश्चित्त तथा सुधार के लिए उसे अधिक से अधिक समय और साधन देना राजनीति का अन्यतम पहलू है और हमारे जिन पाठकों को हमारे इन विचारों में किसी प्रकार का सन्देह हो, वे किसी भी पराधीन देश के उत्थान के इतिहास को पढ़ कर अपनी इस शङ्का का समाधान कर सकते हैं।

हमारा ख़्याल है, आज हिंसात्मक विचारों के अधिकांश पक्षपाती स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के आदर्शों तथा उनके विचार के क़ायल हैं। यदि यह बात ठीक है, तो हम स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की ही वे पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत करना चाहेंगे, जो उन्होंने, कहा जाता है, अपने किसी मित्र को दूसरी फ़रवरी अर्थात् गाँधी-इर्विन समझौते के एक दिन पूर्व लिखी थीं। (आपका यह पत्र अन्यत्र प्रकाशित भी हो रहा है) आपका कहना है:—

"मेरा यह दृढ़ विश्वास है, कि हम बम और पिस्तौल के उपायों से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। यह बात हिन्दोस्तान रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से आसानी से मालूम हो जाती है। केवल बम फेंकना, न सिर्फ़ व्यर्थ है, परन्तु बहुत बार तो हानिकारक भी है।"

इस समय समस्त भारत ने महात्मा गाँधी का नेतृत्व स्वीकार कर लिया है और अपनी हाल की सफलताओं को दृष्टि में रखते हुए, देशवासियों का विश्वास है, कि वे महात्मा जी के इस अहिंसात्मक आन्दोलन द्वारा अपना इच्छित ध्येय प्राप्त कर सकेंगे, एक ऐसी परिस्थिति में—एक ऐसे अवसर पर, जब कि देश के भावी शासन-विधान पर विचार किया जा रहा हो, इन हिंसात्मक काण्डों का होना सरासर मूर्खता का परिचायक है। महात्मा जी को भी इन दुर्घटनाओं से अपार क्लेश हुआ है और उन्होंने मिदनापुर (बङ्गाल) के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की निर्मम हत्या के सम्बन्ध में जो वक्तव्य एक प्रेस-प्रतिनिधि को दिया है, उससे हिंसात्मक विचार के प्रत्येक पोषक को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। आपने कहा है:—

"मुझे इस हत्या से अपार दुःख हुआ है। इस प्रकार की हत्याएँ करने वाले नवयुवक किसी भी प्रकार की देश की भलाई नहीं कर रहे हैं। उन्हें यह स्वीकार करना होगा, कि गत वर्ष के अहिंसात्मक आन्दोलन द्वारा देश को अपार लाभ हुआ है। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है, कि यदि हिंसात्मक कार्य न किए गए होते तो इस आन्दोलन को और भी सफलता मिलती। मैं अब भी उन नवयुवकों से कहता हूँ, कि वे उस समय तक अपना कार्य बन्द किए रहें, जब तक कॉङ्ग्रेस का सिद्धान्त सत्य और अहिंसापूर्ण है और जब तक वह इन सिद्धान्तों के अनुसार कार्य कर रही है।

"यदि वे धैर्य धारण कर ही नहीं सकते, तो उन्हें समय की कोई निश्चित सीमा निर्धारित कर लेना चाहिए और अपने निर्धारित समय तक उन्हें केवल प्रतीक्षा ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि इसका प्रचार भी करते रहना चाहिए।"

महात्मा गाँधी इस वक्तव्य से पूर्व भी कई बार अपने इन्हीं विचारों को प्रकट कर चुके हैं। उन्होंने अपना आन्दोलन प्रारम्भ होने के पूर्व ही कहा था, कि "यदि उनका यह आन्दोलन विफल हो गया, जिसकी बहुत कम सम्भावना है, तो उन्हें हिंसात्मक विचार के पोषकों की राह में रोड़े अटकाने का कोई नैतिक अधिकार न होगा और वे अपने आन्दोलन की इस विफलता को, यदि ऐसा हुआ, तो अहिंसात्मक आन्दोलन की पराजय समझेंगे।"

वर्तमान युग के महान तपस्वी के इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुए, हम देश के नाम पर उन अज्ञात व्यक्तियों से भिक्षा माँगते हैं, जो इस प्रकार के उद्दण्डतापूर्ण काण्डों के लिए ज़िम्मेदार हैं—कि देशोत्थान के इस महान आन्दोलन में वे बाधक न बनें और अपने विपक्षियों को मुँह चिढ़ाने का अवसर कदापि न दें। यदि उन्होंने हमारी इस प्रार्थना पर समुचित ध्यान न दिया, तो स्वतन्त्रता के वर्तमान आन्दोलन की विफलता का, यदि ऐसा हुआ तो—सारा कलङ्क उन्हीं के मत्थे मढ़ा जायगा और यह सर्वथा उचित भी होगा।

* * *

## भूल-सुधार

'भविष्य' के गताङ्क की कुछ कॉपियों में देहली में होने वाली कॉन्फ़्रेन्स के मुसलमानों में मार-काट हो जाने का समाचार छप गया था, यह मार-काट बम्बई की एक सभा में हुई थी, देहली में नहीं। जिसमें एक मुसलमान की मृत्यु हुई और ६ घायल हुए थे। हमें इस भूल के लिए वास्तव में बहुत खेद है। पाठकगण अपनी कॉपियों में सुधार लेने की कृपा करें

# कानपुर का भीषण दंगा

## डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का जनता की शिकायतों को झूठा साबित करने का निन्दनीय प्रयत्न

### "हमने जो हथियार दिए हैं, उनका प्रयोग क्यों नहीं करते ??"

सहयोगी 'लीडर' को कानपुर के ज़िला मैजिस्ट्रेट की, वहाँ के दङ्गे के सम्बन्ध में एक चिट्ठी मिली है। वह इस प्रकार है:—

"कानपूर में इस बात की अफ़वाह है, और कुछ समाचार-पत्रों ने भी इस बात का ज़िक्र किया है कि यहाँ के दङ्गे के समय अगर किसी अधिकारी से सहायता माँगी जाती थी, तो वे उत्तर देते थे—"गाँधी या कॉङ्ग्रेस के पास जाओ।" मैं अपनी और ज़िले के अन्य अधिकारियों की ओर से, यह कह देना चाहता हूँ कि यह बात बिलकुल मनगढ़न्त है। किसी सहायता चाहने वाले से हम लोगों में से किसी ने भी ऐसी बात नहीं कही है; बल्कि जहाँ कहीं भी सहायता दी जा सकती थी, वहाँ हम सहायता देने का प्रत्येक प्रयत्न करते थे। इस प्रतिवाद को कृपया अपने पत्र में छाप दें।"

'लीडर' इस पत्र के सम्बन्ध में लिखता है:—

"इस पत्र का उल्लेख करते हुए हम कह देना चाहते हैं, कि जिस अफ़वाह का प्रतिवाद ज़िला मैजिस्ट्रेट मि० सेल ने किया है, वह कानपुर में घर-घर फैली हुई है। दो दिन हुए, हमें वहाँ के एक प्रतिष्ठित सज्जन की चिट्ठी मिली थी, जो इस प्रकार है:—

"दङ्गे के समय, २५वीं तारीख़ को, मेरे और मि० सेल के बीच जो बातचीत हुई है, उसका कुछ अंश मैं यहाँ पर देता हूँ।

"मैंने फ़ोन के द्वारा उनसे सहायता माँगी। मि० सेल ने कहा कि गाँधी के पास जाओ, हम कुछ नहीं कर सकते। मैंने बलवाइयों द्वारा श्री० द्वारिकाधीश का मकान जला दिए जाने की बात भी मि० सेल से कही थी।"

इस सम्बन्ध में एक और सज्जन ने, निम्नलिखित पत्र भेजा है:—

"२४वीं और २५वीं तारीख़ को, मेरे और मि० सेल के बीच जो बातचीत हुई, उसका एक अंश मैं यहाँ पर देता हूँ। मैंने उन्हें इस बात की सूचना दी कि मुसलमानों का एक दल हमारे मन्दिर और कोठी पर हमला कर रहा है, और वहाँ पुलिस का कोई प्रबन्ध नहीं है। मैंने उनसे प्रार्थना की कि वे कुछ हथियारबन्द सिपाही सहायता के लिए दें। उन्होंने उत्तर दिया कि, 'हमने जो हथियार दिए हैं, उनका प्रयोग क्यों नहीं करते?' उन्होंने यह भी कहा कि 'हम कुछ नहीं कर सकते' और अधिक सुनने का समय नहीं है।'

मुस्लिम सज्जनों की एक कमिटी ने भी, जो इस दङ्गे की जाँच के लिए नियुक्त हुई थी, अधिकारियों की लापरवाही के सम्बन्ध में अपना यह वक्तव्य प्रकाशित किया है:—

"अधिकारियों की लापरवाही के सम्बन्ध में, जो बातें सुनने में आई हैं, वे दुःखजनक हैं। लोगों ने आँखों देखी कितनी ही घटनाओं का बयान दिया है, जिनमें बलवाइयों के हाथ से लोगों को बचाने के लिए, अधिकारियों ने चेष्टा नहीं की। प्रतिष्ठित मनुष्यों की बातों पर भी ध्यान नहीं दिया जाता था। कोतवाल और उसके अधीन कार्य करने वालों की भी शिकायतें हमारे पास आई हैं।"



# पिकेटिङ्ग

[ श्री० हरिश्चन्द्र जी वर्मा, विशारद ]

इन्दु 'भविष्य' पढ़ने में निमग्न थी। बाबू काशीनाथ ने दबे पाँव कमरे में प्रवेश कर, हाथ का बण्डल उसके समीप चारपाई पर फेंक दिया। आहट सुन इन्दु चौंक पड़ी। काशीनाथ खिलखिला कर हँसे। इन्दु सकुचा कर एक ओर खड़ी हो गई। कोट उतारते हुए काशीनाथ ने पूछा—क्या पढ़ रही थी ?

हाथ के पत्र के 'टाइटिल पेज' को पति की ओर करके इन्दु ने कहा—कुछ नहीं, 'भविष्य' देख रही थी।

काशीनाथ चुप रहे। इन्दु ने एक दबी दृष्टि से बण्डल की ओर देख कर उनसे पूछा—यह क्या ले आए ?

"देख न लो।"

इन्दु ने पत्र को चारपाई पर रख कर बण्डल हाथ में उठा लिया। उसे एक बार हाथ से दबा कर देखने के उपरान्त उसने खोला, उसमें एक सूट तथा एक कमीज़ का कपड़ा था। क्षण भर कपड़े को देख, इन्दु ने उसे चारपाई पर पटक दिया और पति की ओर देख कर बोली—फिर विलायती ख़रीद लाए।

"तो ?"

"भला, कभी आपको समझ भी आवेगी ? समस्त देश में तो स्वदेशी की धूम है, स्थान-स्थान पर पिकेटिङ्ग हो रही है, परन्तु आप अब भी विदेशी के ही पीछे पड़े हैं।"

"तो ?"

"फिर वही तो। आप भी देश के लिए कुछ करेंगे या नहीं ? लोग तो तन-मन धन से स्वदेश-सेवा में लगे हैं और आप स्वदेशी वस्त्र तक नहीं पहन सकते ?"

"अजी स्वदेशी कपड़ा अच्छा भी होता है ?"

"होता क्यों नहीं ; एक से एक बढ़ कर होता है। कभी आपने देखा, ख़रीदा या पहना हो तो जानें।"

"ख़ैर, मेरे लिए विदेशी ही अच्छा है, मैं स्वदेशी नहीं पहनता।"

"पहनते कैसे नहीं ? आपको पहनना पड़ेगा।"—इन्दु ने आवेश में कहा।

काशीनाथ हँसे, बोले—अरे वाह !!

"अच्छा देखिएगा।"

२

एक दिन प्रभा ने पाठशाला से लौट कर इन्दु से कहा—माता जी ! आज एक नवीन समाचार सुनने में आया है।

"क्या ?"—इन्दु ने कौतूहलवश पूछा।

"कॉङ्ग्रेस के महिला-मण्डल ने यह प्रस्ताव पास किया है कि यदि एक सप्ताह के भीतर नगर के समस्त वकील स्वदेशी पहनने की प्रतिज्ञा न करें, तो उन पर पिकेटिङ्ग लगाया जावे और विदेशी-धारियों को कचहरी जाने से रोका जावे।"

साश्चर्य इन्दु ने कहा—अच्छा !!

"……।"

"तब तो उन्होंने वकीलों को इसका नोटिस दे दिया होगा ?"

"जी हाँ ; सबको प्रतिज्ञा-पत्र लिखने होंगे।"

"यह ठीक है।"

"अब तो पिता जी को भी प्रतिज्ञा करनी होगी ?"

# सुख-स्मृति

[ प्रो० रामकुमार जी वर्मा, एम० ए० ]

समय की शीतल साँस

तेरे जीवन का यह पहिला दिन है पहली रात
उसी समय तूने छीने जीवन तरुवर के पात
तू हँसता है, छूता है जग के सूखे कङ्काल
शिशुपन की क्रीड़ा में जीवन का यह रूप कराल !
वृद्ध सो रहा था तेरा ही स्वप्न रहा था देख
तीन पंक्तियों में मस्तक पर था आशा का लेख
वह आशा जो जर्जरपन में ले युवती का रूप
कङ्कालों से खेला करती तेरे ही अनुरूप !
तेरा जीवन है जग के फूलों का जीवन-नाश
शून्य बन गया है तेरी क्रीड़ा से यह आकाश
मेरा जीवन तो तुझसे भी शीतल है ओ क्रूर
क्यों रहता है फिर मेरे जीवन से इतना दूर ?
सुख-स्मृति वर्षा-ऋतु की सरिता की है तरल तरङ्ग
उठ कर पत्थर से ठोकर खाकर होती है भङ्ग
तेरे दुख में, सुख-स्मृति से मिलती है अधिक मिठास
तुझमें ही मेरा बसन्त है, तुझमें अमर विलास

समय की शीतल साँस

* * *

इन्दु मुस्कराई। उसने कहा—हाँ, अब तनिक उन्हें मालूम होगा।

प्रभा के भी अधरों पर मुस्कान की हल्की लाली दौड़ गई। उसने कहा—तो आप पिता जी से पूछिएगा।

"अच्छा।"—कह कर इन्दु चुप हो रही।

दूसरे दिन सन्ध्या को इन्दु ने पति से पूछा—आपने प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए ?

"नहीं तो ; क्यों ?"—वे मुस्कराए।

इन्दु उनका उत्तर सुन कर चकराई। उसे कुछ कहते न बन पड़ा। अन्त में उसने कहा—क्या कोई हानि थी ?

"हानि कैसे नहीं थी ? इन कॉङ्ग्रेस वालों को किसी के वस्त्रों से क्या मतलब ? कोई स्वदेशी पहने या विदेशी, वे किसी को रोकने वाले कौन होते हैं ?"

"वे बेचारे किसी को क्यों रोकेंगे। वे तो नम्रता-पूर्वक, हाथ जोड़, पैरों पड़, अनुनय-विनय करते हैं। मानिए न मानिए, आपको अख़्तियार है।"

"अजी नहीं। बात यह है कि 'बार' के कुछ वकील खद्दरधारी हैं। उन्हीं के बल पर……।"

इन्दु ने बात काट कर कहा—सम्भव है यही हो। परन्तु उसका सरल उपाय यही है कि आप भी प्रतिज्ञा-पत्र लिख कर स्वदेशी पहनना आरम्भ कर दीजिए।

काशीनाथ ने उठते हुए कहा—प्रतिज्ञा-पत्र क्यों लिखूँ ?

"उसमें हानि ही क्या है ?"

"क्यों नहीं है ?"

"परन्तु यह आपका हठ कब तक चलेगा ?"

"जब तक चले।"—कह कर काशीनाथ उठ कर बाहर चले गए।

३

इधर कई दिनों से 'बार एसोसिएशन' पर बड़े ज़ोर की पिकेटिङ्ग हो रही थी। प्रतिदिन प्रातःकाल ही से स्वयंसेविकाओं का दल 'बार' को घेर लेता। स्वदेशीधारी आते और बे रोक-टोक भीतर चले जाते, परन्तु जहाँ कोई विदेशी-धारी आया, तुरन्त ही वे पंक्तिबद्ध होकर तथा हाथ जोड़ कर खड़ी हो जातीं और उनसे भीतर न जाने की प्रार्थना करतीं। उनके न मानने पर पैर छूतीं, अनुनय-विनय करतीं और यथासम्भव उन्हें भीतर जाने से रोकतीं। बाबू काशीनाथ प्रथम तो दो-एक दिन कचहरी ही न गए ; सोचते रहे कि क्या करें ? परन्तु आज उनका एक विशेष मुक़दमा था, जिसमें उन्हें अवश्य जाना था। अतः वे कचहरी पहुँचे। पहले तो कुछ देर तक सबकी दृष्टि बचा कर इधर-उधर टहलते रहे, फिर मुक़दमे की पेशी का समय हो आया देख, कचहरी के द्वार पर पहुँचे, तो देखा कि वहाँ चार-पाँच स्वयंसेविकाएँ खड़ी हैं। इन्हें आगे बढ़ते देख कर एक ने अति कोमल स्वर में कहा—भाई साहब, आप………।

बात पूरी भी न हो पाई थी कि काशीनाथ, "चुप रहो जी, तुम्हें मुझे रोकने का कोई अधिकार नहीं" कह कर उसे एक ओर हटाते हुए भीतर घुस गए। स्वयंसेविकाएँ भौंचक्की सी खड़ी रह गईं। उन्हें किसी सभ्य पुरुष से ऐसी आशा न थी।

४

उस दिन सन्ध्या को जब बाबू काशीनाथ घर लौटे, तो इन्दु ने पूछा—आज कचहरी गए थे ?

"क्यों नहीं जाता ?"—गर्व से काशीनाथ ने उत्तर दिया।

"क्या आज पिकेटिङ्ग नहीं थी ?"

"थी क्यों नहीं।"

"तब तो स्वयंसेविकाओं ने बड़ी प्रार्थना की होगी।"

"सो क्यों नहीं। परन्तु उनकी सुनता कौन है। जहाँ एक बार डाँट कर 'चुप रहो, तुम्हें हमें रोकने का कोई अधिकार नहीं' कहा कि रास्ता साफ़ हो गया।"

इन्दु के कोमल हृदय पर एक आघात लगा। उसे पति से ऐसी आशा न थी। उसने मन में कहा—"इतना कठोर व्यवहार! इतनी असभ्यता!!" उसके नेत्र डबडबा आए। परन्तु कुछ ही क्षण में उसने अपने को सँभाल लिया और मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए उसने कहा—"परन्तु यह तो आपने अच्छा नहीं किया!"

उसकी इस मुस्कान में आन्तरिक पीड़ा की स्पष्ट झलक थी। बाबू काशीनाथ ने कुछ उत्तर न दिया। वे पास ही पड़े हुए समाचार-पत्र को उठा कर उसके पृष्ठ लौटने लगे। इन्दु उनके पास से उठ कर बाहर चली गई।

५

दूसरे दिन जब बाबू काशीनाथ कचहरी पहुँचे तो वहाँ अजीब खलबली मची थी। आज स्त्रियों के अतिरिक्त पुरुष भी अधिक संख्या में उपस्थित थे। बाबू काशीनाथ उधर न जाकर पास के पार्क में बेञ्च पर जा बैठे। बारह बजने पर उनके मुहर्रिर ने आकर उन्हें चलने को कहा। वे धीरे-धीरे पुनः उसी द्वार पर पहुँचे। स्वयंसेविकाएँ इन्हें आते देख, उठ खड़ी हो गईं। जब वे उनके समीप पहुँचे तो अकस्मात् ठिठक गए। प्रथम तो नेत्रों पर विश्वास ही न हुआ, परन्तु फिर जो देखा तो इन्दु को सबके मध्य में खड़ा पाया। आश्चर्य तथा क्रोध से उनका मुख तमतमा उठा। एक पग आगे बढ़ कर उन्होंने पूछा—इन्दु! तुम यहाँ कहाँ?

इन्दु अब तक चुपचाप खड़ी थी। पति का प्रश्न सुन कर उसने नम्रता से कहा—आवश्यकतावश आज मैं भी यहाँ आने पर बाध्य हुई हूँ।

"आवश्यकता!"—आश्चर्य से काशीनाथ ने कहा।

इन्दु ने कुछ उत्तर न दिया। वह उसी तरह ही अचल भाव से खड़ी रही। अन्य सब स्वयंसेविकाएँ भी चुप खड़ी इस अपूर्व दृश्य को देख रही थीं। काशीनाथ ने कहा—अच्छा हटो, मुझे जाने दो; देर हो रही है।

इन्दु ने पृथ्वी पर लेटते हुए कहा—आप मेरी छाती पर पैर रख कर जा सकते हैं।

काशीनाथ तनिक बिगड़े। बोले—क्या पागल हो गई हो? लज्जा भी नहीं आती; उठो, मुझे जाने दो।

इन्दु टस से मस भी न हुई। वह उसी प्रकार पति की ओर देखती रही। इन्दु की इस ढिठाई पर काशीनाथ जल उठे। उनके नेत्र लाल हो गए। क्रोधित स्वर में उन्होंने कहा—हटो, मुझे भीतर जाने दो।

इन्दु ने बात अनसुनी कर दी। काशीनाथ ने फिर कहा—मैं भीतर अवश्य जाऊँगा।

"तो मेरी छाती पर पैर रख कर जा सकते हैं।"

"देखो, अच्छा न होगा, द्वार छोड़ दो।"—उन्होंने फिर कहा।

इन्दु चुप रही; उसने कुछ उत्तर न दिया।

"हटती हो या नहीं?"—काशीनाथ ने ज़रा गर्म होकर कहा। परन्तु इन्दु पर जूँ तक न रेंगी, वह उसी भाँति पड़ी रही। काशीनाथ अधिक सहन न कर सके। पैर उठा कर वह तीव्रता से इन्दु के ऊपर होकर निकल गए। इन्दु काँप गई। उसे पति से ऐसी आशा न थी। दर्शक विमूढ़ नेत्रों से देख रहे थे। उन्होंने दाँत तले उँगली दबा ली।

६

सन्ध्या को कचहरी से निकलने के बाद जब काशीनाथ ने सुना कि इन्दु गिरफ़्तार हो गई, तो वे सन्न से रह गए। उनका हृदय अपने प्रति क्षोभ से भर गया। मार्ग में यही सोचते रहे कि मैंने भूल की, जो इतना क्रोध कर बैठा। यदि एक दिन कचहरी न जाता तो क्या हो जाता? परन्तु क्या इसमें इन्दु का अपराध न था? भला उसे इतने पुरुषों में बिना मेरी आज्ञा के छिप कर जाने की क्या आवश्यकता थी? फिर बार-बार कहने पर भी वह अपने ही हठ पर अड़ी रही। आख़िर कोई कब तक सहन करता?

## खादी

[ डॉ० माताप्रसाद त्रिपाठी "महेश" ]

राष्ट्र का सन्देश सुना, उर में जगाया जोश;
सत्य की पताका फहरा दी सीधी-सादी है।
हिंसा को मिटा के प्रगटाया है अहिंसा भाव;
भारत में क्रान्ति की लहर लहरा दी है॥
ज़ालिमों के ज़ुल्म को मिटाया है 'महेश' देश-
दारिद्र दबा के सुख-शान्ति बरसा दी है।
सत्वर स्वदेश हित लाएगी स्वराज्य ऐसो—
सुखद स्वतन्त्रता की शान शुद्ध खादी है॥

* * *

घर पहुँचने पर बाबू काशीनाथ ने देखा, प्रभा उदास मुँह किए बैठी है। उसे माता की गिरफ़्तारी का समाचार पहले ही मिल चुका था। उसने कातर दृष्टि से पिता की ओर देखा। काशीनाथ के हृदय में एक चोट सी लगी। उस दिन उनका मन किसी कार्य में न लगा, उनके नेत्रों के सामने वही दिन का दृश्य घूमता रहा।

दूसरे दिन उन्होंने सोचा कि आज कचहरी न जाऊँगा, परन्तु तुरन्त ही मन में यह विचार आया कि यदि आज न गया तो मित्र लोग कहेंगे कि एक ही दिन में डर गए। वे कचहरी जाने को तैयार हो गए। वे रास्ते से जा रहे थे, परन्तु उनका ध्यान कहीं और ही था। उन्होंने देखा कि हर स्थान पर लोग उन्हीं की चर्चा कर रहे हैं। कचहरी पहुँचने पर उनके मित्र कैलाशनारायण मिले। इन्हें देख हाथ मिलाते हुए वे बोले—कहिए कल तो ख़ूब निबटी।

काशीनाथ ने कुछ उत्तर न दिया। वे मित्र की ओर देखते रहे। कैलाश ने उनकी पीठ पर हाथ मारते हुए कहा—परन्तु यार! तुम्हारी बीबी निकली तो बड़ी दिलेर!

काशीनाथ फिर भी चुप रहे। कैलाश ने पूछा—आज कचहरी जाओगे?

"यही तो सोच रहा हूँ।"—उन्होंने उत्तर दिया।

कैलाश—आओ न, अब क्या है? तुमने तो कल ही बाज़ी मार ली। अब क्या डर है?

दोनों मित्र कचहरी की ओर बढ़े। द्वार पर पहुँचे तो देखा कि आज प्रभा सामने खड़ी है। काशीनाथ चौंक पड़े। उनका हृदय बैठ गया। वे जिस साहस से यहाँ तक आए थे वह बिखर गया। प्रभा से यह बात छिपी न रही। उसने पिता के मुख पर भावों का परिवर्तन देखा, परन्तु वह हिली नहीं। बड़ी कठिनता से साहस बटोर कर काशीनाथ ने पूछा—प्रभा, तुम यहाँ क्यों?

प्रभा बोली—"पुत्री को माता का साथ देना चाहिए। मैं भी आज वही करूँगी। कल आप माता जी की छाती पर पैर रख कर भीतर गए थे, आज आपको मेरे ऊपर से जाना होगा।" उसकी आवाज़ भर्राई हुई थी, आँखें डबडबा आई थीं और चेहरा लाल हो आया था।

प्रभा पृथ्वी पर लेट गई। काशीनाथ का कलेजा हिल गया। जो हृदय पत्नी की विनय पर न पसीजा था, वह पुत्री के तिरस्कारपूर्ण शब्दों से पिघल गया। वे अधिक सहन न कर सके। हाथ के पत्र फेंक, झपट कर उन्होंने प्रभा को उठा कर हृदय से लगा लिया। स्नेहवश प्रभा का कण्ठ रुँध गया। उसके नेत्रों से आँसू झरने लगे। काशीनाथ ने डबडबाए नेत्रों से कहा—प्रभा, मुझे क्षमा करो। मेरा हृदय......।

वे आगे कुछ न कह सके। दोनों इसी प्रकार घर को लौट आए।

७

इन्दु को ६ मास के कारावास का दण्ड मिला। अनेक प्रयत्न करने पर भी बाबू काशीनाथ उसे बचा न सके। क्योंकि वह मुक़दमे की पैरवी कराने को किसी तरह राज़ी न हुई।

इस बात को अब दो मास हो गए। काशीनाथ इस बीच में पूर्णतया बदल गए। अब उनके घर में खादी ही खादी दिखाई देती थी, विदेशी वस्त्र नाम को भी न था।

इधर देश की राजनैतिक स्थिति में भी परिवर्तन हुआ, महात्मा जी तथा वायसराय महोदय के समझौते के अनुसार देश के समस्त राजनैतिक क़ैदी छोड़े जाने लगे। आज इन्दु के छूटने का दिन था। बाबू काशीनाथ प्रभा को लेकर स्वयं जेल गए थे। सहस्रों मनुष्यों की भीड़ थी। ठीक ९ बजे इन्दु अन्य क़ैदियों के साथ बाहर निकली। महात्मा गाँधी, भारत-माता आदि की जय-जयकार से गगन थर्रा उठा। फिर पुष्पों की वर्षा हुई, प्रत्येक क़ैदी के गले में मालाएँ डाली गईं। फिर सब एक-दूसरे से मिले। प्रभा ने आगे बढ़ कर माता के चरण छुए। इन्दु ने झपट कर पति की पद-धूलि मस्तक पर लगा ली। फिर पति को सिर से पैर तक खादी-वेश में देख कर वह एक बार मुस्कराई। उसकी इस मुस्कान में विजय की स्पष्ट छाया थी!

लज्जावश काशीनाथ का मस्तक झुक गया।

* * *

# वारन हेस्टिंग्ज़ और महाराज चेतसिंह

[ पं० तेजनारायण काक, 'क्रान्ति' ]

काशी के विद्रोह के कई बर्षों बाद जब हाउस ऑफ़ कॉमन्स में वारेन हेस्टिंग्ज़ का मुक़द्मा चल रहा था, तब उसके ऊपर शत्रुओं द्वारा लगाए गए बीस मुख्य अभियोगों में से "काशी के महाराज चेतसिंह के साथ किया गया नीच और घृणित व्यवहार" भी एक था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हेस्टिंग्ज़ के शत्रुओं ने, जिनमें बर्क, फ़ॉक्स, शारिडान प्रभृति अनेकों दिग्गज वाग्मी थे, अपनी वाक्य-कुशलता द्वारा उसके छोटे से छोटे दोष को भी तिल का ताड़ बनाने में ज़रा सी कोर-कसर न रक्खी, पर केवल इसीलिए हम ग्लीग महाशय अथवा हेस्टिंग्ज़ के अन्य प्रशंसकों के इस कथन से कदापि सहमत नहीं हो सकते कि हेस्टिंग्ज़ का प्रत्येक काम न्याय-युक्त था और उसने जो कुछ किया वह ठीक किया। क्या हेस्टिंग्ज़ के हित-विधायक मित्र विलियम पिट का महाराज चेतसिंह से सम्बन्ध रखने वाली घटना में उसे दोषी ठहराना इस बात का अकाट्य प्रमाण नहीं है कि उसके शत्रु ही नहीं, वरन् मित्र भी उसके दोषों को स्वीकार करते थे। हेस्टिंग्ज़ को निर्दोष सिद्ध करके उसकी प्रशंसा के व्यर्थ के पुल बाँधने को यदि पानी के ऊपर लकीर खींचने के समान निष्फल कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति न होगी। दोष प्राणि-मात्र से होते आए हैं और यदि हेस्टिंग्ज़ से भी कोई अपराध हो गया तो यह किसी सांसारिक नियम का अपवाद नहीं कहा जा सकता। अपराध तो वास्तव में उन सज्जनों का है, जिन्होंने जान-बूझ कर सच्ची बातों को झूठ तथा अप्रामाणिक सिद्ध करने में अपना बहुत सा अमूल्य समय व्यर्थ ही नष्ट किया है।

महाराज चेतसिंह सम्बन्धी घटना का संक्षिप्त ब्योरा इस प्रकार है। सम्राट औरङ्गज़ेब की मृत्यु के पश्चात् मुग़ल साम्राज्य की नींव डावाँडोल होने लगी। सारे देश में अराजकता फैल गई। फिर क्या था, जिसे देखिए वही अपनी मनमानी करने लगा। प्रत्येक सूबे का सूबेदार स्वतन्त्र बन बैठा। यहाँ तक कि देहली के आस-पास के कुछ भाग को छोड़ सारा देश मुग़लों के हाथ से निकल गया। ठीक इसी समय बनारस के राजा ने भी अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करवा दी। अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने बनारस को हस्तगत करने का यह अच्छा अवसर देखा। एक छोटा सा राज्य कब तक इतने बड़े सूबेदार का सामना करता? अन्त में बनारस के राजा को अवध के नवाब से हार माननी पड़ी और उसके अधीनस्थ होकर रहना पड़ा। विधाता की गति जानी नहीं जाती। अवध के नवाब को यह स्वप्न में भी ख़्याल नहीं था कि जिस बनारस को उसने बड़ी लालसा से इतने रक्तपात के पश्चात् विजय किया है, वही अब उससे छीन लिया जायगा। और यही कौन जानता था कि अवध के कुत्सित शासन से निकल कर थोड़े ही समय में बनारस को एक विदेशी जाति का दासत्व स्वीकार करना पड़ेगा, एक गहरे गर्त से निकल उससे भी अधिक भयानक तथा अन्धकारमय कूप में गिरना पड़ेगा? किन्तु हुआ ऐसा ही। रुहिला-युद्ध की समाप्ति होने के थोड़े ही समय उपरान्त शुजाउद्दौला की मृत्यु हो गई। उसके मरने पर उसके पुत्र आसफ़उद्दौला से जो नई सन्धि हुई, उसके अनुसार बनारस अङ्गरेज़ों को मिला। इसी समय से बनारस के महाराज चेतसिंह को साढ़े बाईस लाख रुपया प्रति वर्ष कम्पनी को कर-स्वरूप देना पड़ता था। चेतसिंह ने कभी रुपया चुकाने में विलम्ब नहीं किया। कदाचित इसी के फल-स्वरूप जब सन् १७७८ में अङ्गरेज़ तथा फ़ान्सीसियों के



स्वर्गीय काशी-नरेश महाराज चेतसिंह

बीच युद्ध छिड़ा, तो वारन हेस्टिंग्ज़ ने बँधे हुए वार्षिक कर के अतिरिक्त युद्ध के व्यय के लिए महाराज से पाँच लाख रुपए और माँगे। इस आदेश का पत्र जिस समय बङ्गाल काउन्सिल के सामने रक्खा गया तो उसके मेम्बरों ने उसकी कड़ी भाषा की आलोचना करते हुए उसे कुछ विनम्र बनाने की इच्छा प्रकट की। वे चाहते थे कि पत्र में 'Demand' शब्द की जगह 'Request' रख दिया जाय। क्योंकि उनका कहना था कि कर के अतिरिक्त चेतसिंह से और कुछ लेने का कम्पनी को कोई अधिकार नहीं है। वास्तव में बात भी ऐसी ही थी। परन्तु हेस्टिंग्ज़ यह सब कब मानने वाला था? उसके मतानुसार कम्पनी को जब चाहे जितना रुपया लेने का अधिकार प्राप्त था। अन्त में बहुत वाद-विवाद के बाद हेस्टिंग्ज़ ही की बात रही और वह पत्र ज्यों का त्यों महाराज चेतसिंह के पास भेज दिया गया। उत्तर में जब उन्होंने कहला भेजा कि रुपया उनसे केवल एक ही वर्ष के लिए लिया जावे तो उनकी इस "धृष्टता" पर चिढ़ कर हेस्टिंग्ज़ ने हुक्म दिया कि सब वर्षों का रुपया एक ही साथ चुकाना होगा। चेतसिंह बहुत घबराए और उन्होंने प्रार्थना-पत्र भेज कर हेस्टिंग्ज़ से रुपया चुकाने के लिए छः-सात महीने की मोहलत माँगी। पर अब हेस्टिंग्ज़ के क्रोध का वारापार नहीं रहा। भला उसे इतनी मानहानि कहाँ सहनीय थी? महाराज को उसी समय कहलाया गया कि या तो वे रुपया पाँच दिन के भीतर ही दे डालें, नहीं तो कम्पनी की ओर से समझ लिया जायगा कि वे ऐसा करने से इन्कार करते हैं। फिर इसका क्या परिणाम निकलेगा, यह वे भली-भाँति विचार सकते हैं। अपनी प्रार्थना का कुछ फल न निकलते देख, चेतसिंह ने किसी तरह सब रुपया जुटा कर नियत समय के भीतर ही कम्पनी के हवाले किया।

सन् १७७९ में रुपए की माँग फिर दोहराई गई। अबकी बार चेतसिंह ने बड़ी नम्रता-सहित प्रार्थना की कि कम्पनी से उन्होंने जो सन्धि की थी, उसके अनुसार कर के अतिरिक्त रुपया देने के लिए वे बाध्य नहीं हैं। हेस्टिंग्ज़ ने बिना कुछ सोचे-विचारे अङ्गरेज़ सेना को बनारस पर धावा बोल देने की आज्ञा दे दी। किन्तु चेतसिंह व्यर्थ का झगड़ा मोल लेना नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने पचास हज़ार पौण्ड दे दिए। हेस्टिंग्ज़ ने इतने पर भी उनका पीछा नहीं छोड़ा और उन पर धावा करने को जो सेना भेजी गई थी, उसको किसी प्रकार की क्षति न पहुँचने पर भी उसके व्यय के लिए दण्ड-स्वरूप दो हज़ार पौण्ड और वसूल कर लिए। तीसरी बार फिर सन् १७८० में चेतसिंह से पाँच लाख रुपए माँगे गए। सीधी तरह प्राण न छुटते देख अबकी महाराज ने दूसरी युक्ति का आश्रय ग्रहण किया। उन्होंने हेस्टिंग्ज़ को बीस हज़ार पौण्ड घूँस में भेजे। कहते हैं, पहिले तो उसने इन्हें लेने से इन्कार किया, किन्तु पीछे न जाने क्या सोच कर ले लिया। इसी बात को उसके प्रतिद्वन्द्वी मुक़द्मे के समय ले उड़े थे। बहुतों का मत है कि कम्पनी के कोषागार में टोटा आ जाने के कारण ही उसने यह रक़म लेना स्वीकार किया था और उसने उसे व्यय भी कम्पनी ही के ख़र्च में किया। किन्तु यदि उसकी अन्तरात्मा दोषी नहीं थी, तो उसने इस मामले को, अपने काउन्सिल के मेम्बरों से ऐसा कह कर कि यह रुपया मैं कम्पनी को अपने पास से देता हूँ, पाँच महीने

तक प्रकट क्यों नहीं होने दिया? सब से अधिक आश्चर्य की बात यह है कि डाइरेक्टरों तक को इसकी कानोंकान खबर न होने पाई। हमें तो अवश्य कुछ दाल में काला दिखाई देता है। मालूम होता है कि पहिले लालच में पड़ कर उसने रुपया स्वीकार कर लिया, पर फिर भेद खुल जाने के भय से ऊपर लिखा हुआ बहाना बना, मामले को दबा दिया। वस्तुतः बात कुछ भी क्यों न हो, कम से कम हेस्टिंग्ज़ के लिए सब से सीधा मार्ग उपहार को अस्वीकार कर देना ही होता। केवल इतने ही पर बस न करके उसने वह पाँच लाख रुपया भी चेतसिंह से ले लिया और साथ ही दस हज़ार पौण्ड जुर्माने के तौर पर भी लिया। हेस्टिंग्ज़ भली-भाँति जानता था कि चेतसिंह ने बीस हज़ार पौण्ड इसीलिए दिए हैं कि उनसे पाँच लाख रुपया न लिया जाय। इतना जानते हुए भी जब उसने चेतसिंह के साथ छल तथा कौशल से काम लिया तो हम दावे के साथ कह सकते हैं कि सन् १७८३ में सिलेक्ट कमिटी की रिपोर्ट में इस मामले के प्रति जो कुछ लिखा था, वह अक्षरशः सत्य है। पाठकों के मनोरञ्जनार्थ हम उसे यहाँ उद्धृत करते हैं :—

"The complication of cruelty and fraud in this transaction admits of few parallels. Mr. Hastings.... displays him self as a zealous servant of the company, bountifully giving from his own fortune ......on the credit of supplies, derived from the gift of a man whom he treats with the utmost severity and whom he accuses in this particular of disaffection to the company's cause and interests. With £. 23,000 of the Raja's money in his pocket, he persecutes him to his destruction."*

इस विषय में अधिक टीका-टिप्पणी करना व्यर्थ है।

इतना सब कुछ हो जाने पर भी हेस्टिंग्ज़ को शान्ति नहीं मिली। थोड़े ही समय पहले दक्षिण के युद्धों में कम्पनी का बहुत रुपया चुक गया था। यदि रुपया नहीं मिलता तो दिवाला निकल जाने का भय था। गवर्नर हेस्टिंग्ज़ ने सोचा, चेतसिंह हाथ में है ही, इसीसे रुपए ऐंठना चाहिए। इससे अच्छा असामी और कहाँ मिल सकता है? उसने तुरन्त एक उपाय खोज निकाला। चेतसिंह को कहलाया गया कि वह दो हज़ार घुड़सवार फ़ौज अङ्गरेज़ों को अपने पास से दे। हेस्टिंग्ज़ ने सोचा था कि जब महाराज तङ्ग आ जावेंगे और ऐसा करने से इन्कार करेंगे, तो वह तुरन्त उन्हें आज्ञा भङ्ग करने के अपराध में फाँस कर रुपया देने पर बाध्य करेगा और यदि ऐसा न हो सका तो अवध के हाथों बनारस फिर से बेच दिया जायगा। किन्तु यहाँ तो बात ही उलटी पड़ गई। महाराज ने बड़ी कठिनाई से एक हज़ार फ़ौज इकट्ठी करके कहला भेजा कि वह बङ्गाल सरकार का हुक्म मानने को प्रस्तुत हैं। हेस्टिंग्ज़ ने किसी तरह दाल गलती न देख चुप्पी साध ली, मानो उसे यह खबर मिली ही नहीं; क्योंकि उसे तो महाराज से पचास हज़ार पौण्ड दण्ड में लेने थे। उसने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है। वह लिखता है :—

"I resolved to draw from his guilt the means of relief to the company's distres—to make him pay largely for his pardon, or to exact severe vengeance for past delinquency."†

उसने यह भी स्वयं ही लिखा है कि उसकी ओर से चेतसिंह को कोई उत्तर नहीं दिया गया था।‡

इतनी दूर से काम न बनता देख वारन हेस्टिंग्ज़ ने बनारस जाना ही स्थिर किया। वह जुलाई में कलकत्ते से रवाना हो गया। महाराज चेतसिंह उसकी अगवानी के लिए ६० मील चल कर बक्सर आए और बहुत आदर-सत्कार के साथ उसे काशी लिवा ले गए। यहाँ तक सुनने में आता है कि उन्होंने स्वयं अपनी पगड़ी उसके पैरों में रक्खी थी। बनारस आने पर हेस्टिंग्ज़ ने महाराज से मुलाक़ात करने से इन्कार किया और केवल अपनी शर्तें लिख कर उनके पास भिजवा दीं। उसी पत्र में उन पर आज्ञा उल्लङ्घन और कर देने में आनाकानी करने के दोष भी लगाए गए थे। चेतसिंह ने बड़ी नम्रता से अपने ऊपर लगाए गए झूठे आक्षेपों का उत्तर लिख भेजा। पर हेस्टिंग्ज़ तो रुपया लेने पर तुला हुआ था। वह इन सब बातों को कैसे मानता? उसने महाराज के पत्र को झूठा तथा अपमानसूचक बतला कर उन्हें तुरन्त गिरफ़्तार कर लिया और उनके पहरे पर दो पल्टनें नियुक्त करवा दीं।

संसार का यह नियम है कि जब कोई वस्तु, चाहे वह कितनी ही तुच्छ क्यों न हो, बहुत दबाई जाती है, सीमा से अधिक दबाई जाती है, तब कभी न कभी उसका प्रतिघात अवश्य होता है। बनारस की प्रजा इतने दिन से खून का घूँट पिए अपने राजा पर अङ्गरेज़ सरकार द्वारा किए गए अत्याचारों को चुपचाप देख रही थी। पर अब उसका क्रोध असह्य हो गया। वह भीषण ज्वालामुखी की भाँति भड़क उठा। क्या वह अपनी आँखों के सामने अपने प्यारे देव-तुल्य राजा को एक विदेशी गवर्नर द्वारा पददलित होते देख सकती थी? कदापि नहीं। शहर में भयानक बलवा मच गया, भीषण मार-काट जारी हो गई। असंख्य अङ्गरेज़ सिपाही क़त्ल कर दिए गए और बचे-खुचों ने भाग कर अपने प्राणों की रक्षा की। पर ऐसे भयङ्कर समय में वारन हेस्टिंग्ज़ ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। इसे यदि उसका मानसिक स्थैर्य न कहें तो और क्या? अनेक दुर्गुण होने पर भी उसमें एक बड़ा भारी गुण था। वह था यही उसका मानसिक स्थैर्य। इसी के प्रताप से उसने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी बड़ी योग्यता से इतने उत्तरदायित्वपूर्ण पद का कार्य भली-भाँति सम्चालन किया। उसने प्रति दिन की भाँति ही, मानो कुछ हुआ ही नहीं था, दो पत्र लिखे। उनमें से एक तो उसकी स्त्री के नाम था, जिसमें उसने उसे लिखा था कि वह खूब सुरक्षित है, और दूसरा कम्पनी के नाम, जिसमें उन्हें बनारस सहायक सेना भेजने का आदेश किया गया था। अब कठिनाई यह थी कि पत्र लेकर जावे कौन, चारों ओर तो चेतसिंह की सेना ने घेर रक्खा था। अन्त में यह निश्चित हुआ कि कुछ स्वामिभक्त हिन्दू सिपाहियों के कानों के छिद्रों में, जो कि प्रायः बहुत बड़े हुआ करते थे और जिनमें बड़े-बड़े सोने के छल्ले पहिने जाते थे, वह पत्र लपेट कर डाल दिए जावें और फिर उन्हें भेज दिया जावे। इसमें सन्देह होने की कोई गुञ्जाइश भी नहीं थी, क्योंकि बहुधा यात्रा के समय लुट जाने के भय से लोग छल्ले उतार कर उनके स्थान में काग़ज़ अथवा और कोई चीज़ डाल लिया करते थे, ताकि कान बन्द न हो जावें। अस्तु, जिस किसी तरह दोनों पत्र निश्चित स्थान पर पहुँचा दिए गए।

इसी बीच में समय पाकर चेतसिंह निकल भागे। उन्होंने एक बार फिर हेस्टिंग्ज़ से सन्धि करने का प्रस्ताव किया, लेकिन उसने उसे अस्वीकार कर दिया। इधर एक नई घटना और घटी। एक नासमझ अङ्गरेज़ युवक ऑफ़िसर ने महाराज चेतसिंह के पड़ाव पर आक्रमण कर दिया। उसका ऐसा करना था कि सारी प्रजा उसकी सेना पर टूट पड़ी और उसे छिन्न विच्छिन्न कर दिया। अवध की प्रजा नवाब के शिथिल शासन से अत्यन्त अप्रसन्न थी ही, उसे जब काशी के विद्रोह के समाचार मिले तो उसने भी नवाब के विरुद्ध कर न देने की बग़ावत शुरू कर दी। पर अब तक हेस्टिंग्ज़ के गुप्तादेशानुसार अङ्गरेज़ों की एक बड़ी भारी सेना काशी में आ पहुँची थी। उसने शीघ्र ही विद्रोहियों का दमन करके वहाँ फिर से शान्ति स्थापित कर दी। महाराज चेतसिंह पर बग़ावत खड़ी करने तथा कृतघ्नता का दोष लगा कर उन्हें ग्वालियर भेज दिया गया। गद्दी का अधिकारी उनका भतीजा बनाया गया और उसके साथ जो नई सन्धि हुई, उसके अनुसार बनारस को साढ़े बाईस लाख से बढ़ा कर चालीस लाख रुपया बङ्गाल सरकार को कर में देने का तय पाया।

यही संक्षेप में काशी के विद्रोह की दुखद कहानी है। समस्त कथा को पढ़ जाने पर हमारे समक्ष तीन प्रश्न उपस्थित होते हैं, जिन पर हमें पृथक-पृथक सुचारु रूप से विचार करना होगा। प्रथम तो यह कि कर के अतिरिक्त हेस्टिंग्ज़ को चेतसिंह से रुपया लेने का अधिकार था अथवा नहीं? दूसरे जब चेतसिंह ने हेस्टिंग्ज़ की प्रत्येक माँग की पूर्ति कर दी, तो उन्हें क़ैद क्यों किया गया? हमारा अन्तिम प्रश्न इस बात का विवेचन करना होगा कि हेस्टिंग्ज़ का यह कार्य कहाँ तक सराहनीय कहा जा सकता है?

यह विषय बड़ा विवादग्रस्त है कि महाराज

* Reports of the House of Commons, Vol vi. p. 582.

† Macaulay's *Warren Hastings*. (Ward Lock), p. 98.

‡ See His Narrative of the Insurrection which happened in the Zemeendary of Benares.

चेतसिंह से बङ्गाल सरकार का वास्तविक सम्बन्ध क्या था। कुछ लोगों के कथनानुसार तो चेतसिंह कम्पनी के आश्रित एक साधारण ज़मींदार थे और समय पर धन तथा धन से कम्पनी की सहायता करना उनका कर्तव्य था। परन्तु कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो इस बात से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि चेतसिंह एक स्वतन्त्र राज्य के अधिकारी थे और वारन हेस्टिंग्ज़ को उनसे कर के अतिरिक्त और कुछ लेने का कोई अधिकार नहीं था। हमें दोनों ही पक्ष के कथन ठीक नहीं जँचते। वास्तव में बात कुछ और ही थी। हम ऊपर लिख आए हैं कि उस समय भारत की राजनैतिक स्थिति बहुत ही अस्थिर थी। मुग़ल साम्राज्य का ह्रास हो चुका था और चारों ओर अशान्ति तथा अराजकता की आँधी सी चल रही थी। ऐसे समय में, जब कि क़ायदे और क़ानून का अस्तित्व ही नहीं हो सकता, धूर्त्त और कपटी लोगों की ख़ूब बन आई थी और वे अपनी मनमानी कर रहे थे। यह बात हेस्टिंग्ज़ की पैनी दृष्टि से छिपी न रह सकी। अपना कार्य साधन करना ही उसका एकमात्र ध्येय था। चाहे उसके लिए कितनी ही धूर्त्तता अथवा कूटनीतिज्ञता से काम क्यों न लेना पड़े, कितने ही अकाण्ड-ताण्डव क्यों न करने पड़ें, इसकी उसे ज़रा भी परवा न थी। उसने तुरन्त अपना पथ निश्चित कर लिया। जब कभी कम्पनी को यह सिद्ध करने की आवश्यकता होती कि बङ्गाल से कर लेने का उन्हें अधिकार है, तो तुरन्त मुग़ल सम्राट की मुहर की हुई फ़र्मान दिखा दी जाती। पर इस फ़र्मान को देने वाला नाम-मात्र का सम्राट अन्धा शाहआलम था, यह नहीं बतलाया जाता था। उस समय वह भारत के शाहन्शाह दिल्लीश्वर सम्राट शाहआलम हो जाते थे। परन्तु जहाँ बादशाह ने बङ्गाल से कर लेने का अधिकार प्रकट किया कि उसे तुरन्त एक नाम-मात्र का सम्राट बता कर दुत्कार दिया जाता। कहने का तात्पर्य यह है कि चेतसिंह न तो ज़मींदार ही कहे जा सकते हैं और न स्वतन्त्र राजा ही। वास्तव में वह थे केवल वारन हेस्टिंग्ज़ के हाथ का एक खिलौना। यही कारण था कि उसने जब जैसा चाहा, वैसा ही महाराज चेतसिंह से कराया। ज़मींदार बना कर उनसे रुपया वसूल किया और स्वतन्त्र राजा कह कर उन्हें अपनी ओर मिलाए रक्खा। किन्तु हम इसमें हेस्टिंग्ज़ का कोई बड़ा भारी दोष नहीं समझते, क्योंकि उस समय का यह एक साधारण नियम-सा हो गया था। हाँ, इतना तो अवश्य कहना ही होगा कि अङ्गरेज़ी सभ्यता के "आदर्श सिद्धान्तों" की दृष्टि से उसका यह कार्य निन्दनीय था।

चेतसिंह ज़मींदार थे अथवा स्वतन्त्र राजा, इससे हमें कोई विशेष मतलब नहीं। निर्णय केवल इसी बात का करना है कि क्या कम्पनी ने उनसे कभी कोई ऐसी सन्धि की थी, जिसके द्वारा यह सिद्ध हो जाय कि वार्षिक कर के अतिरिक्त उसे और कुछ भी लेने का अधिकार था। यदि यह सत्य है तब तो हेस्टिंग्ज़ का कोई दोष नहीं कहा जा सकता, किन्तु अगर ऐसी कोई सन्धि नहीं हुई थी तो फिर निस्सन्देह वह दोषी ठहरता है। पाश्चात्य इतिहासकार विलसन साहब लिखते हैं कि इस आदेश की कोई सन्धि नहीं हुई थी, केवल बङ्गाल काउन्सिल ने एक ऐसा प्रस्ताव पास किया था, जोकि सन्धि के रूप में परिणत नहीं हुआ। उनका यह कथन ठीक नहीं हैं, क्योंकि यथार्थ में पाँच जुलाई सन् १७७५ को हेस्टिंग्ज़ और चेतसिंह के बीच जो सनद लिखी गई थी, उसमें लिखा था :—

"While he (Chait Singh) paid his contribution, no demand shall be made upon him by the Hon'ble Company, of any kind, or on any pretence whatsoever nor shall any person be allowed to interfere with his authority, or to disturb the peace of his country."*

सनद के उपरोक्त उद्धृत अंश से साफ़ प्रकट होता है कि हेस्टिंग्ज़ ने महाराज से वादा किया था कि कर के अतिरिक्त वह उनसे और कुछ नहीं माँगेगा और न किसी को उनके राज्य सम्बन्धी आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का ही अधिकार होगा। अब प्रश्न यह उठ सकता है कि वारन हेस्टिंग्ज़ ने ऐसी सन्धि की ही क्यों, जब कि वह एक सर्वोच्च शासक (Parmount Power) की हैसियत में चाहे जैसी सनद महाराज से लिखा सकता था? इसका उत्तर वह स्वयं इस प्रकार देता है :—

"Without some such an arrangement, Chait Singh will expect from every change of government, additional demands to be made upon him, and will ofcourse descends to all the arts of intrigue and concealment practised by other dependent Rajas."†

अब यह तो स्पष्ट सिद्ध हो गया कि ऐसी कोई शर्त सन्धि में अवश्य थी। आगे चल कर अपने ब्रिटिश भारत के इतिहास में, जिल्द ४, पृष्ठ २५६ पर विलसन साहब ने लिखा है कि सन् १७७६ में जो सनद चेतसिंह के साथ की गई थी, उसमें ऐसी कोई शर्त नहीं थी, और चूँकि इस सनद द्वारा पिछली सब सनदें रद्द हो गईं थीं, इसलिए रुपया लेने के मामले में सन् १७७५ के प्रस्ताव की (जो कि वास्तव में सनद ही थी, जैसा कि ऊपर सिद्ध किया जा चुका है) दोहाई देना अत्यन्त अनुचित है। पर शायद विलसन साहब को यह नहीं मालूम था कि सन् १७७६ की सनद का वह अंश, जिसके द्वारा वह सन् १७७५ की सनद का रद्द होना बतलाते हैं, चेतसिंह के ही कहने-सुनने पर, कुछ ही समय बाद, स्वयं वारन हेस्टिंग्ज़ और उसकी कौन्सिल के मेम्बरों द्वारा निकाल दिया गया था और उसमें भी सन् १७७५ की सनद का यह अंश ज्यों का त्यों बना रहा।‡ अतः सन् १७७५ की शर्तों पर सन् १७७६ की सनद का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। सब बातों पर ध्यान देने से यही निष्कर्ष निकलता है कि कर के अतिरिक्त हेस्टिंग्ज़ को चेतसिंह से एक फूटी कौड़ी लेने का भी अधिकार नहीं था। हाँ, यह बात दूसरी है कि सन्धि को हम एक रद्दी काग़ज़ का टुकड़ा ही समझें, जैसा कि आजकल की सभ्य जातियों का सिद्धान्त सा हो रहा है।

भारत के पाश्चात्य इतिहासकारों के मत से चेतसिंह पर हेस्टिंग्ज़ द्वारा किए गए अत्याचार, अत्याचार नहीं कहला सकते। वे तो केवल समयोचित कर्तव्य की पूर्ति के साधन मात्र थे। हेस्टिंग्ज़ की सी दशा में होने पर प्रत्येक मुख्य सरकार, चाहे वह भारतीय हो अथवा विजातीय, ऐसा ही करती। सेण्ट्रल गवर्नमेण्ट भी तो कोई अधिकार रखती है। जब समस्त साम्राज्य पर सङ्कट पड़ता है, उस समय स्थानीय प्रान्तों की सुख-शान्ति पर ध्यान नहीं दिया जा सकता, वरन् आवश्यकता पड़ने पर उनका बलिदान तक करना होता है। क्योंकि स्थानीय प्रान्तों की सुख-शान्ति भी तो मुख्य सरकार ही पर आश्रित है। जहाँ मुख्य सरकार का शासन शिथिल हुआ कि उसे शत्रुओं ने आ दबाया। उसी समय स्थानीय सरकारों के भाग्य का निबटारा भी हो जाता है। उन्हें परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े रह कर नरक की यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। वह समय ऐसा ही था। मैसूर के नवाब हैदरअली और मरहठों से कम्पनी के नौकर से लगा कर मुख्य अफ़सर तक सदा चौकन्ने रहते थे। न जाने वे कब चढ़ आवें, यही ध्यान उन्हें आठों पहर सताया करता था। ऐसे समय में सेना की सुव्यवस्था के लिए रुपया न रहा तो दो-दो बलिष्ठ शत्रुओं के सम्मुख वह कर ही क्या सकती थी? इन्हीं सब कारणों से प्रेरित होकर यदि हेस्टिंग्ज़ ने चेतसिंह से येन-केन-प्रकारेण रुपया वसूल करने का प्रयत्न किया तो इसमें उसका दोष ही क्या था? क्या कम्पनी के पैर उखाड़ डालने के बाद किसी दिन बनारस पर भी हैदरअली न आ धमकता? प्रायः इसी प्रकार की युक्तियों द्वारा पाश्चात्य इतिहासकार हेस्टिंग्ज़ के पक्ष का समर्थन किया करते हैं। किन्तु हमें तो यह देखना ही होगा कि उनकी इन युक्तियों में कितना तथ्य है, कहाँ तक बल है।

थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि हेस्टिंग्ज़ ने जो कुछ किया, समय की प्रतिकूलता के कारण ही किया, तो भी नैतिक दृष्टि से उसका यह कार्य कदापि समीचीन नहीं कहा जा सकता। क्या एक बलवान मनुष्य का अपने दुर्बल पड़ोसी के प्रति ऐसा ही कर्तव्य है? क्या महात्मा ईसा के इस उपदेश का कि "Do unto your neighbour as you would that he should do unto you," एक भी अक्षर सत्य तथा सर्वमान्य नहीं? और

*Selections from the Letters, Despatches and other State Papers in the Foreign Dept. of the Govt. of India, 1772-85. G. W. Forrest, Vol, ii, p. 402.*

† *Reports from Committees of the House of Commons. Vol. v. pp. 618-19.*

‡ *Selections from the Letters, Despatches and other State Papers in the Foreign Dept. of the Govt. of India. G. W. Forrest, Vol. ii. pp. 512, 549, 557.*

( शेष मैटर २०वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम में देखिए )



# लेनिन

[ श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर ]

सोविषट प्रजातन्त्र तथा कम्यूनिस्ट इण्टर नेशनल का पिता, बोल्शेविक दल का नेता तथा रूस की अक्टूबर वाली क्रान्ति के सञ्चालक का नाम किसने न सुना होगा? लेनिन का पूरा नाम व्लडीमिर इलिइच लेनिन (Vladimir Ilyich) था। उसका जन्म सिमबिरसक (अब उलीआनोस्क) नाम के एक क़स्बे में, सन् १८७० की ९वीं अप्रैल को हुआ था। उसका पिता, जिसका नाम इलिया निकोलिविच था, एक शिक्षालय में शिक्षक का काम करता था। और उसकी माता, मेरिया एलेक्ज़ेन्ड्रोवना थी बर्ग नाम के एक डॉक्टर की लड़की। उसके सब से बड़े भाई ने तीसरे एलेक्ज़ेण्डर को मार डालने का प्रयत्न किया था और इसी अपराध में उसे, सन् १८८१ में, प्राणदण्ड दिया गया था। लेनिन के जीवन पर इस घटना का बहुत असर पड़ा था। यहाँ तक कि इसी घटना ने उसे भविष्य का मार्ग बता दिया।

लेनिन ने सिम्बिरस्क जिमनासियम् में, सन् १८८७ में, अपनी शिक्षा पूरी की। उसे पुरस्कार में स्वर्ण-पदक भी मिला था। क़ानून का अध्ययन करने के लिए वह कज़न विश्वविद्यालय में भरती हुआ। पर कुछ महीनों के बाद ही वह एक सभा में भाग लेने के अभियोग विश्वविद्यालय से निकाल दिया गया। सन् १८८९ के पहिले वह फिर विश्वविद्यालय में न आ सका। अपने विश्वविद्यालय-काल में वह अपना समय कार्ल मार्क्स की पुस्तकों का अध्ययन करने में बिताता था। और मार्क्स के दल के जो लोग वहाँ रहा करते थे, उनसे मिला करता था।

सन् १८९१ में लेनिन ने सेण्ट पिटर्सबर्ग विश्वविद्यालय से क़ानून की परीक्षा पास की और सन् १८९२ में उसने अपनी वकालत आरम्भ कर दी। पर उसका दिल इस काम में अधिक न लगता था। और वह मार्क्स के अध्ययन में ही जुटा रहता था। वह चाहता था कि मार्क्स के सिद्धान्तों का रूस के आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में प्रयोग किया जावे और चाहता था, उनके द्वारा तमाम संसार का उद्धार करना।

सन् १८९४ में वह सेण्ट पीटर्सबर्ग में आकर रहने लगा और अपना प्रचार-कार्य आरम्भ किया। उस समय कुछ ऐसे लोग थे, जो मार्क्स के सिद्धान्तों को ग़लत समझते तथा समझाते थे। लेनिन ने समाचार-पत्रों में ऐसे लोगों के विरुद्ध कई लेख लिखे।

सन् १८९५ में वह पहले-पहल रूस छोड़ कर विदेश गया और प्लेखनोव आदि मार्क्स के भक्तों से भेंट की।

जब वह लौट कर सेण्ट पिटर्सबर्ग आया तो आते ही उसने एक गुप्त सभा की स्थापना की। इस सभा का उद्देश्य था, मज़दूरों का उद्धार करना। बहुत शीघ्र यह सभा प्रसिद्ध हो गई। सभा द्वारा श्रमिकों में प्रचार-कार्य किया जाने लगा।

सन् १८९५ के दिसम्बर में लेनिन तथा उसके साथी गिरफ़्तार कर लिए गए। उसका १८९६ का सारा वर्ष कारागार में ही बीता। १८९७ में उसे तीन साल के लिए देश-निकाला दिया गया। इन वर्षों में वह पूर्वीय साइबेरिया के येनिसी प्रान्त में रहा। सन् १८९८ में उसने अपनी शादी एन० के० क्रप्सकया के साथ की। इसी साल उसने अपनी सब से प्रसिद्ध अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का अङ्गरेज़ी नाम है—Development of Capitalism in Russia सन् १९०० में वह स्वीज़रलैण्ड गया। वह रूस में एक क्रान्तिकारी पत्र निकालना चाहता था। उसी का प्रबन्ध करने के लिए वहाँ गया था। इसी वर्ष के अन्त में 'इस्क्रा'



वर्तमान रूस के विधायक स्वर्गीय मोशिए लेनिन

(चिनगारी) पत्र का प्रथम अङ्क मुनिच से निकला। इस पत्र का मोटो था, 'चिनगारी से लपट' (From spark to flame)

सन् १९०३ में दूसरी रूसी काँङ्ग्रेस ब्रसेल्स तथा लन्दन में हुई। इस काँङ्ग्रेस ने लेनिन तथा प्लेखनोव के बनाए हुए प्रोग्राम को मान लिया। पर इस काँङ्ग्रेस में आपस में फूट पड़ गई और इसके दो दल हो गए। एक दल तो बोल्शेविकों का था और दूसरा था, मेनशेविकों का। बोल्शेविक दल का नेता लेनिन ही था। दोनो दलों में मुख्य अन्तर यह था कि मेनशेविक दल नरम विचार के धनिक लोगों से मिल कर काम करना चाहता था और बोल्शेविक दल किसानों से मिल कर कार्य करना चाहता था। उसे धनिकों से कुछ आशा न थी। इस फूट का अन्त में परिणाम यह हुआ कि सन् १९१४ में, द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) का अन्त हो गया। सन् १९१७ में अक्टूबर की क्रान्ति हुई और सन् १९१८ में पार्टी का नाम 'सोशल डिमोक्रैट' से बदल कर 'कम्यूनिस्ट पार्टी' रख दिया गया। अस्तु।

सन् १९०४ में रूस और जापान में युद्ध हुआ। पाठकों को याद होगा कि इस युद्ध में जापान ने विजय पाई थी। यह पहला ही अवसर था कि एशिया के एक राष्ट्र ने यूरोप के एक बड़े राष्ट्र को युद्ध में पछाड़ा था। रूस की इस हार का उत्तरदायित्व रूस के शासकों पर ही था। अतएव रूस की जनता अपने शासकों से बहुत ही अप्रसन्न थी। इसके अलावा कुछ और भी ऐसी घटनाएँ हुईं, जिससे रूस की जनता को उत्तेजित कर दिया था। ९ जनवरी १९०५ को श्रमिकों पर गोलियाँ चलाई गई थीं, और तमाम देश में राजनैतिक हड़तालें हो रही थीं। लेनिन चाहता था कि ज़ारशाही के विरुद्ध जनता की एक सशस्त्र सेना का सङ्गठन किया जावे और साथ ही एक अस्थायी सरकार की स्थापना भी की जाय, जो किसानों तथा मज़दूरों को ज़ार के चङ्गुल से छुड़ा सके।

बोल्शेविक दल की तीसरी कॉङ्ग्रेस मई, १९०५ में हुई। इस कॉङ्ग्रेस ने एक नया प्रोग्राम बनाया, जिसमें ज़मींदारों की जायदादें ज़ब्त करना भी शामिल था।

सन् १९०५ के अक्टूबर में रूस भर में हड़ताल हुई। यह हड़ताल रूस के एक कोने से दूसरे कोने में फैल गई। इस बढ़ती हुई आँधी को देख कर रूस की ज़ारशाही सरकार सहम गई और अपने भविष्य के बारे में सोचने लगी। इस आँधी को रोकने के लिए तथा जनता को शान्त करने के लिए रूस के ज़ार ने एक तरकीब सोची। १७ अक्टूबर को ज़ार ने रूस के शासन-विधान के सम्बन्ध में एक घोषणा की।

जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय लेनिन जिनेवा में था। परन्तु अब वहाँ रहना बेकार समझ कर, वह नवम्बर के आरम्भ में रूस लौट आया

और आते ही एक अपील निकाली। इस अपील में बोल्शेविकों से कहा गया था कि वे अपने दल में अधिक से अधिक मज़दूरों को शामिल करें।

१९०५ का वर्ष रूस तथा लेनिन के लिए बड़े महत्व का था। इस वर्ष में अनेक घटनाएँ हुईं थीं। यहाँ तक कि कुछ समय के लिए रूस की जनता को राजनैतिक स्वतन्त्रता मिल गई थी, यद्यपि वे बहुत काल तक उसे रख न सके। इसी वर्ष श्रमिकों, सैनिकों तथा किसानों का ज़बरदस्त सङ्गठन किया गया और 'सोवियटों' की स्थापना की गई।

दिसम्बर के अन्त में रूस के प्रसिद्ध नगर मास्को में बलवा हुआ। पहिले तो ऐसा प्रतीत होता था कि यह विद्रोह दबाया न जा सकेगा। पर शीघ्र ही यह धारणा ग़लत प्रमाणित हुई और विद्रोह पूर्णतया कुचल दिया गया। इस विद्रोह के असफल होने का मुख्य कारण यह था कि देश के और दूसरे नगरों में तथा देहातों में पूरी शान्ति बनी रही।

इस घटना के पश्चात्, सन् १९०७ में, लेनिन को रूस एक बार फिर छोड़ना पड़ा। इस समय वह दस वर्ष तक बाहर रहा और सन् १९१७ के पहिले रूस लौट कर नहीं आया। सन् १९०७ से ही रूस में भयङ्कर दमन-काल का श्रीगणेश होता है। सैकड़ों पुरुष कारागारों में बन्द कर दिए गए। अनेकों को देश-निकाला और प्राणदण्ड दिया गया। क्रान्ति का नामोनिशान मिटाने का पूरा प्रयत्न किया गया।

सन् १९०७ में जब लेनिन रूस छोड़ कर भाग रहा था; तो एक समय वह मरते-मरते बचा। वह स्टॉकहोम जाना चाहता था। पुलिस उसका बुरी तरह पीछा कर रही थी। अगर वह अबो से स्टीमर में चढ़ कर जाता तो अवश्य ही पकड़ जाता। क्योंकि वहाँ पुलिस का कड़ा पहरा रहता था और बहुत से आदमी वहाँ स्टीमर पर चढ़ते हुए गिरफ़्तार किए जा चुके थे। लेनिन के एक साथी ने उसे क़रीब के एक द्वीप से स्टीमर पर चढ़ने की सलाह दी। रूस की पुलिस वहाँ उसे गिरफ़्तार नहीं कर सकती थी। पर उस द्वीप तक पहुँचने में बहुत दूर तक बरफ़ पर चलना पड़ता था। जाड़ा ख़ूब पड़ रहा था, स्थान-स्थान पर बरफ़ ख़तरनाक थी। कोई भी पुरुष अपने प्राण को सङ्कट में नहीं डालना चाहता था, अतएव पहिले तो लेनिन को कोई पथ-प्रदर्शक नहीं मिला। अन्त में, दो किसान, जो उस स्थान से भली प्रकार परिचित थे, यह कार्य करने को तैयार हो गए। रात को वे लोग बरफ़ पार करने लगे। एक स्थान पर जब लेनिन बरफ़ पार कर रहा था, तो उसके पाँव के नीचे की बरफ़ अकस्मात् खसक गई। उस समय संयोग से ही वह मरने से बच गया! जब उसके पैरों के नीचे से बरफ़ हट रही थी, तो उसने कहा था—आह! इस प्रकार मरना कितनी मूर्खता की बात है।

रूस से बाहर रह कर लेनिन ने मेनशेविकों तथा उन लोगों का, जो मेनशेविकों तथा बोल्शेविकों के मध्य में रहना चाहते थे, विरोध किया और उन बोल्शेविकों का भी विरोध किया, जो चाहते थे कि सोशल डिमोक्रेटिक दल के मेम्बर ड्यूमा ( Duma ) छोड़ कर चले आवें।

सन् १९१२ में रूस में मज़दूरों के आन्दोलन ने फिर ज़ोर पकड़ा। और सन् १९१४ तक यह आन्दोलन बढ़ता ही गया। सन् १९१२ में लेनिन ने प्रेग नगर में रूस के बोल्शेविकों की एक गुप्त कॉन्फ्रेन्स बुलाई। इस कॉन्फ्रेन्स ने एक नवीन केन्द्रीय कमिटी चुनी। बाहर ही रहते हुए लेनिन ने रूस के सेण्ट पिटर्सबर्ग नगर से 'प्रवदा' नाम के एक समाचार-पत्र के निकालने का प्रबन्ध किया। ये सारे काम लेनिन इस चतुराई से करता था कि रूस की सरकार दङ्ग रह जाती थी और उसका कुछ न कर पाती थी।

जुलाई १९१२ को लेनिन अपने घनिष्ट साथियों के साथ पेरिस छोड़ कर क्रेको चला गया। रूस में क्रान्ति बढ़ रही थी। उन दिनों प्रति दिन सारे बोल्शेविक पत्रों में अलग-अलग नाम से लेनिन लेख लिखा करता था। जिस पत्र में देखिए, लेनिन का लिखा हुआ कोई न कोई लेख अवश्य मिलेगा।

लेनिन की पत्नी—क्रुप्सकया—इस सारे सङ्गठन की केन्द्र थी। वही लोगों से मिला करती थी, लिखा-पढ़ी किया करती थी और सारा सङ्गठन का कार्य चलाती थी।

जब सन् १९१४ में यूरोप का महायुद्ध प्रारम्भ हुआ, उस समय लेनिन गलेशिया के पोरोनिन नाम के एक छोटे से नगर में था। पाठक जानते हैं कि गलेशिया ऑस्ट्रिया का एक प्रान्त था। ऑस्ट्रिया की पुलिस ने लेनिन को रूस का जासूस समझ कर गिरफ़्तार कर लिया। पन्द्रह दिन पश्चात् उसे ऑस्ट्रिया छोड़ देने की आज्ञा मिली। फलतः वह ऑस्ट्रिया छोड़ कर स्वीज़रलैण्ड चला गया।

१ नवम्बर, १९१४ को लेनिन ने एक मैनीफ़ेस्टो निकाल कर साम्राज्यवादी युद्ध का विरोध किया; उसने कहा कि इस युद्ध के लिए सभी बड़े राष्ट्र दोषी हैं, जो वर्षों से अपनी वस्तुओं के लिए बाज़ार बढ़ाने तथा अपने शत्रुओं को नष्ट करने के लिए युद्ध की तैयारी कर रहे थे। एक देश के धनी लोग दूसरे देश के धनिकों पर जो दोषारोपण कर रहे थे, यह संसार के श्रमिकों को धोखा देने का एक उपाय था। मैनीफ़ेस्टो में यह भी कहा गया था कि सोशल डिमोक्रैटिक दल के नेताओं का बहुमत युद्ध का समर्थन कर रहा था और सोशलिस्ट कॉङ्ग्रेसों के प्रस्तावों के विरुद्ध आचरण कर द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय ( Second International ) का अन्त कर रहा था। अपने मैनीफ़ेस्टो के अन्त में लेनिन ने ज़ोरदार शब्दों में तमाम देशों के सोशल डिमोक्रैटों से अपील की थी कि वे अपने-अपने देश की सरकार की हार मनावें।

लेनिन ने एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय दल की स्थापना करने के लिए प्रोग्राम बनाया और उसका ध्येय तथा नीति निश्चित की।

सन् १९१५ के सितम्बर में यूरोप के उन साम्यवादियों की, जो साम्राज्यवादी युद्ध के विरोधी थे, प्रथम कॉन्फ़्रेन्स हुई। यह कॉन्फ़्रेन्स स्वीज़रलैण्ड के ज़िमरवाल्ड नाम के एक नगर में हुई थी। इसमें ३१ डेलीगेटों ने भाग लिया था।

इस प्रकार लेनिन ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में क़दम रक्खा! अब उसका कार्यक्षेत्र केवल रूस ही न रह गया। लेनिन अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए अत्यन्त उपयुक्त था। वह अङ्गरेज़ी, जर्मन तथा फ़्रेञ्च भाषाओं का विद्वान और साथ ही साथ स्वीडेन, इटली तथा पोलैण्ड की भाषाएँ भी जानता था।

लेनिन अभी स्वीज़रलैण्ड ही में था कि रूस में क्रान्ति आरम्भ हो गई। यह घटना फ़रवरी, सन् १९१७ की है। रूस में पुनः एक बार आग लग गई। भला अब लेनिन को स्वीज़रलैण्ड में चैन कैसे पड़ सकता था। वह रूस पहुँचने के लिए छटपटाने लगा। उसने वहाँ पहुँचने के लिए कितने प्रयत्न किए, पर इङ्गलैण्ड की सरकार ने विरोध किया और उसके प्रयत्नों को सफल न होने दिया। अतः लाचार होकर उसने जर्मनी होकर रूस जाने का निश्चय किया। उसे मार्ग में बड़ी कठिनाइयाँ हुईं। पर अन्त में वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ और रूस पहुँच गया। इसके लिए उसे कुछ ऐसी बातें करनी पड़ीं कि जिनके कारण उसके शत्रुओं ने उस पर कितने ही घृणित अभियोग लगाए। पर लेनिन सहज ही घबड़ाने वाला पुरुष न था। वह उन बातों से विचलित नहीं हुआ और वे लोग उसका कुछ भी न बिगाड़ सके। लेनिन अपने दल का नेता बना ही रहा।

४ अप्रैल की रात थी। लेनिन ट्रेन से पेट्रोग्राड के फ़िनलिण्डस्की स्टेशन पर उतरा और उतरते ही एक व्याख्यान दिया। लोगों को अपनी बातें समझाईं। उसने कहा कि ज़ारशाही का अन्त कर देने से ही कार्य का अन्त नहीं होता। असल में यह तो कार्य का श्रीगणेश है। जब तक जनता सन्तुष्ट नहीं होती, तब तक काम अधूरा ही रहेगा। इसलिए उसने जनता से राजनैतिक शक्ति हाथ में लेने के लिए तैयार होने को कहा और उसके सामने इस कार्य के लिए एक प्रोग्राम भी रक्खा।

पर वह प्रोग्राम इतना गरम था कि कितने ही बोल्शेविकों ने उसका विरोध किया, प्लेखनोव ने लेनिन के इस प्रोग्राम को लेनिन की 'सनक' बतलाया था।

उस समय कुछ देशभक्त साम्यवादी अपने देश के धनवानों तथा बड़े आदमियों से मिल कर काम करना चाहते थे। रूस की 'क्रान्ति-विरोधिनी गुप्त सभा' बोल्शेविकों के विरुद्ध प्रचार कर रही थी। इस सभा ने ९ जुलाई को कुछ पत्र प्रकाशित किए थे, जिनमें यह दिखलाया गया था कि लेनिन को जर्मनी से सहायता मिलती थी और वह 'जर्मन जनरल स्टाफ़' के अधीन काम कर रहा था।

प्रचण्ड दमन से आन्दोलन पूर्णतया कुचल दिया गया और रूस की पुलिस लेनिन के पीछे हाथ धोकर पड़ गई। लेनिन भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर छिपता फिरता रहा, परन्तु छिपे-छिपे काम भी करता था। कुछ दिन तक वह पेट्रोग्राड में एक मज़दूर के घर में छिपा रहा। फिर वह वहाँ से भाग कर फ़िनलैण्ड चला गया। पर यह हालत बहुत काल तक न रही। बहुत शीघ्र एक दूसरी लहर आई और उसने एक बार फिर जनता में खलबली मचा दी। जनता फिर जाग्रत हुई। पेट्रोग्राड और मास्को के सोवियटों में बोल्शेविकों का बहुमत हो गया। लेनिन तो ऐसे अवसर की प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने जनता से, इस अवसर से लाभ उठा कर शासन-शक्ति को अपने हाथों में लेने की अपील की। 'अब या कभी नहीं' यही वह बार-बार कहता था। उसका कहना था कि ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता। यदि इस अवसर से जनता ने लाभ नहीं उठाया, तो फिर वह वर्षों तक कुछ नहीं कर सकेगी।

अस्थायी सरकार के विरुद्ध क्रान्ति हुई और इसके साथ ही २५ अक्टूबर को सोवियट की द्वितीय कॉङ्ग्रेस की बैठक हुई। साढ़े तीन महीने छिपे रहने के पश्चात् अब लेनिन जनता के सामने आया और आते ही उसने आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथों में ले लिया। २७ अक्टूबर को कॉङ्ग्रेस की रात की बैठक में उसने एक योजना मेम्बरों के सामने रक्खी, जो सर्वसम्मति से मान ली गई। उस समय बोल्शेविकों की ओर से एक घोषणा निकाली गई थी, जिसमें यह कहा गया था कि रूस का शासनाधिकार अब सोवियट के हाथों में आ गया। रूस के किसानों ने भी बोल्शेविकों का साथ दिया और शासन की बागडोर जनता के हाथों में आ गई। लेनिन का प्रयत्न सफल हो गया।

पाठकों को याद होगा कि जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय यूरोप में महासंग्राम जारी था। रूस की सोवियट के सामने युद्ध और शान्ति का प्रश्न उपस्थित हुआ। सोवियट दल के कुछ लोग युद्ध के पक्ष में थे, यद्यपि वे जानते थे कि रूस की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। पर लेनिन बहुत दूरदर्शी था, वह चाहता था कि जर्मनी से बहुत समय तक बातचीत जारी रक्खी जावे, ताकि रूस को प्रचार करने का अवकाश मिल जावे। पर यदि बातचीत अधिक काल तक न चल सके और जर्मनी युद्ध करने के लिए तैयार हो जावे तो रूस को उससे सन्धि कर लेनी चाहिए। चाहे रूस को

इस सन्धि के लिए कुछ देना ही क्यों न पड़े। इसका कहना था कि पश्चिम में जो क्रान्ति उठ रही है, वह आगे चल कर रूस की समस्त हानियों की पूर्ति कर देगी।

केन्द्रीय कमिटी की १८ फ़रवरी की बैठक में, इस प्रश्न पर ख़ूब बहस हुई। पर कमिटी का बहुमत लेनिन के पक्ष में था। फलतः जर्मनी से सन्धि कर ली गई। लेनिन के प्रस्ताव पर सोवियट सरकार का केन्द्र मास्को चला आया। जब पूरी तरह शान्ति स्थापित हो गई, तब लेनिन ने अपना ध्यान रूस की आर्थिक तथा साहित्यिक स्थिति सुधारने की ओर दिया।

पर अभी रूस के कष्टों का अन्त नहीं हुआ था। उसकी अग्नि-परीक्षा और भी होने को थी। सोवियट के विरुद्ध क्रान्ति उठ खड़ी हुई। ज़ेकोस्लोवाकों (Czecho-slovaks) ने सोवियट के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। २ अगस्त को आरचैञ्जल में और १४ अगस्त को बाकू में अङ्गरेज़ों ने हस्तक्षेप किया। रूस में खाद्य-पदार्थ भी न जाने दिए जाते थे। पर लेनिन इन बाधाओं से बिल्कुल नहीं घबड़ाया। उसने ख़ूब प्रचार किया। जनता को जगाया और कमर कस कर बाधाओं का सामना किया।

३० अगस्त की बात है। मज़दूरों की एक सभा हो रही थी, लेनिन उसमें व्याख्यान देने जा रहा था और अभी थोड़ी ही दूर गया था कि कपलन नाम के एक मनुष्य ने उस पर दो गोलियाँ चलाईं। लेनिन घायल हो गया, पर सौभाग्य से मरा नहीं। वह एक हट्टा-कट्टा पुरुष था। अतएव उसके ज़ख्म शीघ्र ही अच्छे हो गए थे। सन् १९२१ में सोवियट ने विरोधी-दल को पूरी तरह से कुचल दिया।

लेनिन ने अपने जीवन में घोर परिश्रम किया था तथा अनेक कष्ट उठाए थे। उसे दिन-रात परिश्रम करना पड़ता था और बहुधा हफ़्तों तक वह चैन से बैठ भी नहीं सकता था। इन्हीं सब कारणों से उसकी तन्दुरुस्ती जवाब दे रही थी। सन् १९२२ के प्रारम्भ में उसके डॉक्टरों ने उसे काम करने से मना कर दिया। दिसम्बर में उसके दहिने हाथ और पाँव में लक़वा मार गया।

रूस के प्रसिद्ध नगर मास्को के पास एक क़स्बा है, जिसका नाम है गार्की। इसी क़स्बे में लेनिन का इलाज हो रहा था। यहीं पर सन् १९२४ की २१ जनवरी के दिन, शाम के साढ़े छै बजे लेनिन ने इस असार संसार से सदा के लिए बिदा ले ली।

लेख के अन्त में मैं दो शब्द एन० के० क्रप्सकया—लेनिन की पत्नी—के बारे में भी कह देना चाहता हूँ। क्रप्सकया ने लगातार तीस वर्ष तक लेनिन के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर काम किया है। वह बराबर सारे सङ्गठनों की केन्द्र थी। सन् १९०१ से लेकर सन् १९०३ तक वह 'इस्क्रा' पत्र की सम्पादकीय मन्त्री थी। और उसके पश्चात् वह सोशल डिमोक्रैटिक पार्टी के अन्तर्गत बोल्शेविक दल की मन्त्री थी। सन् १९०५ से लेकर सन् १९०८ तक वह अपने पार्टी के केन्द्रीय कमिटी की मन्त्री थी। जब वह १९१५-१६ में स्वीज़रलैण्ड में रहती थी, उसने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Popular Education and Democracy लिखी थी। जब वह १९१७ में लेनिन के साथ लौट कर रूस में आई, तो अक्टूबर की भावी क्रान्ति की तैयारी में लग गई। अक्टूबर की क्रान्ति के पश्चात् वह सोवियट सरकार के शिक्षा-विभाग में एक ऊँचे पद पर नियुक्त की गई। हाल ही में क्रप्सकया ने लेनिन पर एक पुस्तक लिखी है। उस पुस्तक का पहिला भाग निकल गया है। दूसरा अभी निकलने को है। पुस्तक का अङ्गरेज़ी नाम है—Memories of Lenin.

*　　*　　*

## सबसे अच्छा देश हमारा

[ श्री० अब्दुल असर हफ़ीज़, जालन्धरी ]

सबसे अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा
देश हमारा जिसमें जारी हैं दरिया और नहरें
दरियाओं की मौजें प्यारी और नहरों की लहरें
जन्नत है एक एक किनारा
सब से अच्छा देश हमारा

सबसे अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें लम्बे-चौड़े हैं मैदान
इन मैदानों की ज़रख़ेज़ी पर दुनिया क़ुर्बान
सोना-रूपा इन पर वारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें हैं सरसब्ज़ हमारे खेत
ग़ल्लों और अनाजों से भरपूर हैं सारे खेत
दुनिया के जीने का सहारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें ख़ुशबूदार हैं ख़ाक औ धूल
बाग़ लगाते हैं हम दाता देता है फल-फूल
देखो बाग़ों का नज़्ज़ारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें गुज़रे हैं राँझा और हीर
उनके आईने में देखो उल्फ़त की तस्वीर
इश्क़ है या आतश का शरारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें रहते हैं हम भाई-भाई
उल्फ़त रखते हैं हम सब मुस्लिम सिक्ख हिन्दू ईसाई
आपस में है भाईचारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जन्नत है भारत है इसका नाम
इसकी गोदी में हम 'हिन्दी' करते हैं आराम
हमको यह महबूब है सारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा, देश के हम हैं, आपस में है प्रीत
एक हैं सारे भारतवासी एक है सबकी रीत
साज़ हमारा है इकतारा
सबसे अच्छा देश हमारा !

( चन्दन )

* यह सुन्दर कविता पञ्जाब को लक्ष्य कर लिखी गई है, परन्तु हमने 'पञ्जाब' और 'पञ्जाबी' के स्थान पर 'भारत' और भारतवासी कर दिया है। आशा है, कवि महोदय हमें क्षमा करेंगे।

—सं० 'भविष्य'

( १७वें पृष्ठ का शेषांश )

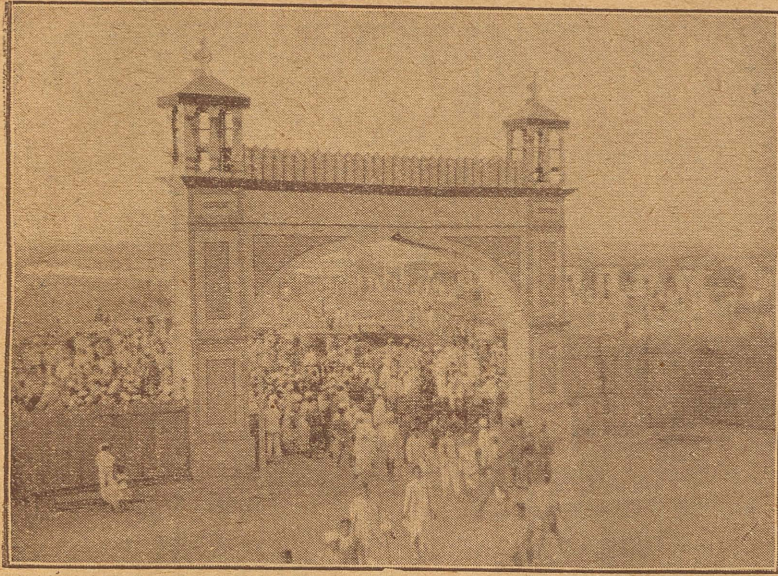
क्या इसी सिद्धान्त का अनुसरण करने के लिए गत महायुद्ध में समस्त सभ्य संसार ने भाग नहीं लिया था? लोग कहेंगे, इस समय और उस समय में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। आज समाज सभ्यता के सर्वोत्कृष्ट आसन पर विराजमान है। इस समय से उस समय की तुलना कैसी? पर मैं कहता हूँ कि महात्मा ईसा का वह वाक्य आज की ही भाँति उस समय भी समस्त संसार में शान्ति तथा आनन्द की अविरल धारा प्रवाहित करता हुआ विश्वमैत्री के पथ पर अग्रसर हो रहा था। यदि कुछ थोड़े से क्षुद्राशयों ने उसका स्वाद नहीं चक्खा, उसमें एक बार ग़ोता नहीं लगाया, तो इससे बनता-बिगड़ता ही क्या है? उस समय भी नैतिक विचार ( Morailty ) का आसन इतना ही ऊँचा था, जितना कि वह आज है।

केवल इतना ही नहीं, हेस्टिंग्ज़ के रुपया लेने की विधि भी गर्ह्य थी। जब सन्धि द्वारा ऐसी कोई शर्त न होने पर भी चेतसिंह बराबर उसकी इच्छानुसार उसे रुपया देते गए, उसका आदर करते गए, उसका हुक्म मानते गए, तब भी उन पर कृतघ्नता का झूठा दोष लगा कर उन्हें गद्दी से उतार देना हेस्टिंग्ज़ की वीभत्स स्वेच्छाचारिता के अतिरिक्त और कहा ही क्या जा सकता है। यदि बनारस के महाराज का यह कर्तव्य बतलाया जाता है कि वे अङ्गरेज़ सरकार की प्रत्येक आज्ञा का बिना जीभ हिलाए पालन करते, तो क्या प्रत्युत्तर में यह नहीं कहा जा सकता कि बनारस की प्रजा के सुख-शान्ति का प्रयत्न करना अङ्गरेज़ सरकार का कर्तव्य भी था? इतिहास साक्षी है कि उसने ठीक इसका उल्टा किया। एक सर्वमान्य राजा को गद्दी से हटा कर एक निपट निकम्मे राजा को उसने उसकी जगह स्थापित किया। अधिक लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है। वारन हेस्टिंग्ज़ के ये शब्द स्वयं उसे सबकी दृष्टि में दोषी ठहराते हैं। सन् १७७५ में बनारस जाने पर उसने लिखा था—"The Province of Chait Singh is as rich and well-cultivated a territory as any district, perhaps, of the same extent in India." किन्तु वही सन् १७८४ में बनारस के विषय में लिखता है—"I was followed and fatigued by the clamours of the discontented inhabitants and the cause of their dissatisfaction existed principally in a defective, if not corrupt and oppressive administration." * पर इस सब से क्या? यहाँ कर्तव्याकर्तव्य की तो चर्चा ही नहीं चलाई जा सकती। 'इस जगह तो जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत ही ठीक चरितार्थ होती है।

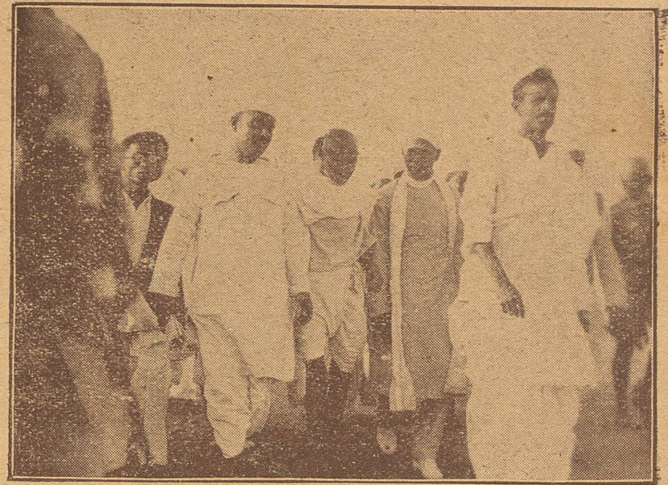
**Selections from the Letters Despatches, etc.*, G. W. Forrest, *Vol. iii, p. 1082.*

*　　*　　*

# 'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ



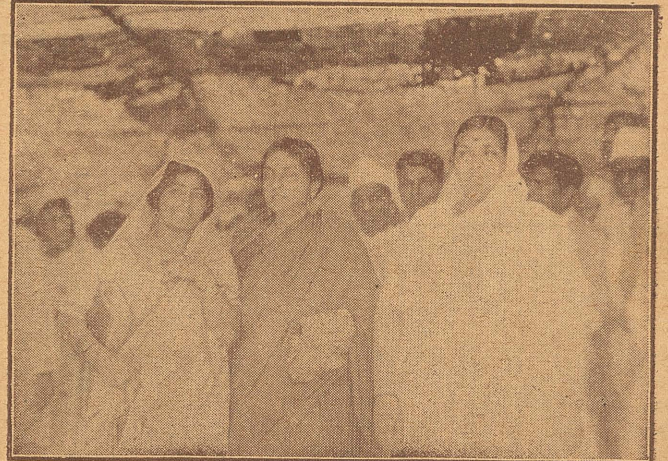
कराची कॉङ्ग्रेस के सिंहद्वार का दृश्य—यह चित्र उस समय लिया गया था, जब कि महात्मा गाँधी आदि नेताओं का भाषण सुनने के लिए लोग पण्डाल में आ रहे थे।



महात्मा गाँधी, पण्डित मालवीय जी, आचार्य कृपलानी तथा श्री० नारायणदास आनन्द जी बेचर के साथ विषय-निर्वाचिनी समिति में जा रहे हैं।



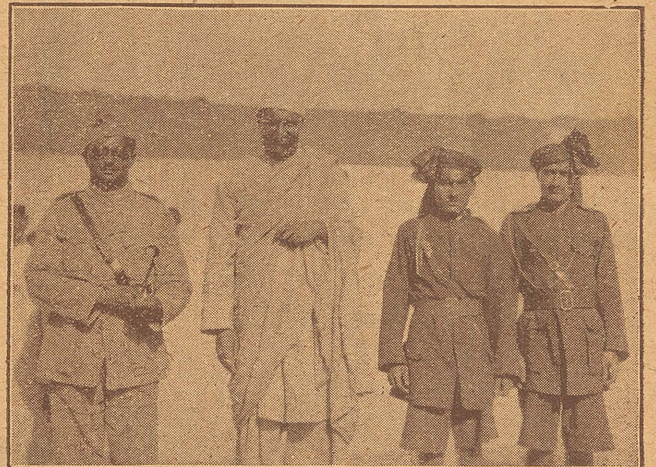
श्रीमती सरोजिनी नायडू (बाईं ओर) और डॉ० अन्सारी राष्ट्रपति के केम्प में खड़े-खड़े बातचीत कर रहे हैं।



श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय (मध्य में) तथा अन्यान्य कॉङ्ग्रेस-कर्मी महिलाएँ।



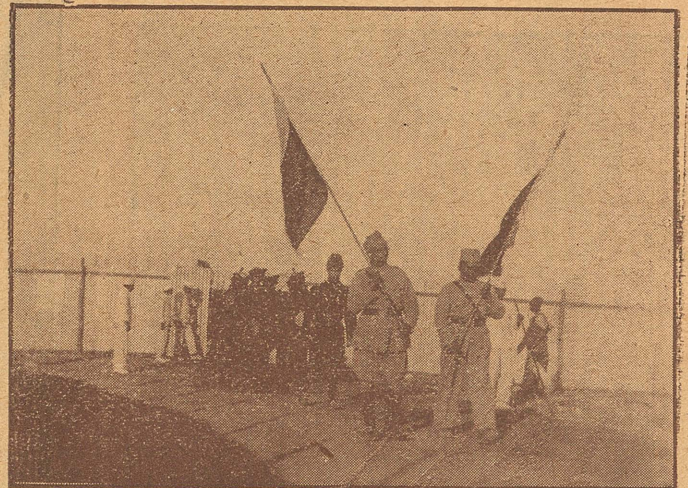
मौ० अब्दुल कलाम आज़ाद (बाईं ओर) और डॉ० अन्सारी, कराची कॉङ्ग्रेस की वर्किङ्ग कमिटी की मीटिङ्ग से लौट रहे हैं।



ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ—सीमा-प्रान्त के गाँधी—अपने लालकुर्ती-दल के कई स्वयंसेवकों के साथ, कराची कॉङ्ग्रेस-पण्डाल से लौट रहे हैं।

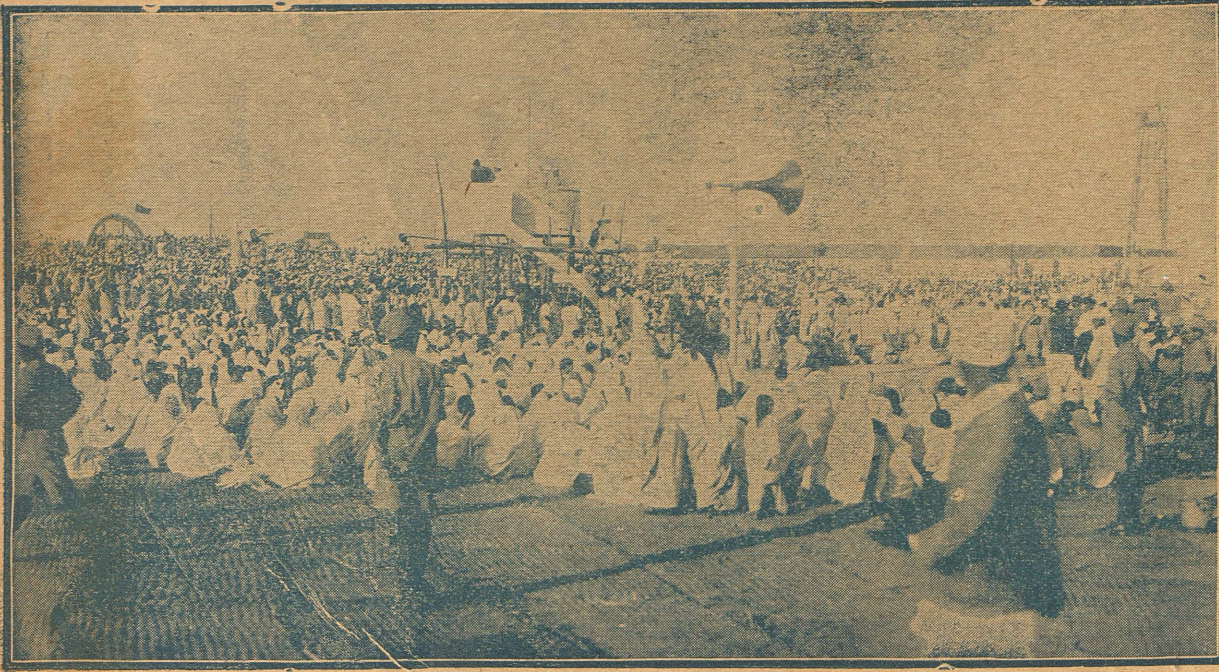


श्री० अब्बास तय्यब जी—कराची कॉङ्ग्रेस में आए हुए दो अमेरिकन जर्नलिस्टों से बातें कर रहे हैं।



राष्ट्रपति सरदार पटेल का स्वागत-जुलूस कॉङ्ग्रेस-पण्डाल में प्रवेश कर रहा है। आगे-आगे स्वयंसेवक दल के दो सीनियर ऑफ़िसर और पीछे सीमा-प्रान्त के गाँधी के दल के बैण्ड बजाने वाले हैं।

# 'भविष्य' का कराची-काङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ



कराची काँङ्ग्रेस-पण्डाल

यह दृश्य गत २६ मार्च का है, जनता लाऊड-स्पीकर द्वारा महात्मा गाँधी का भाषण सुन रही है

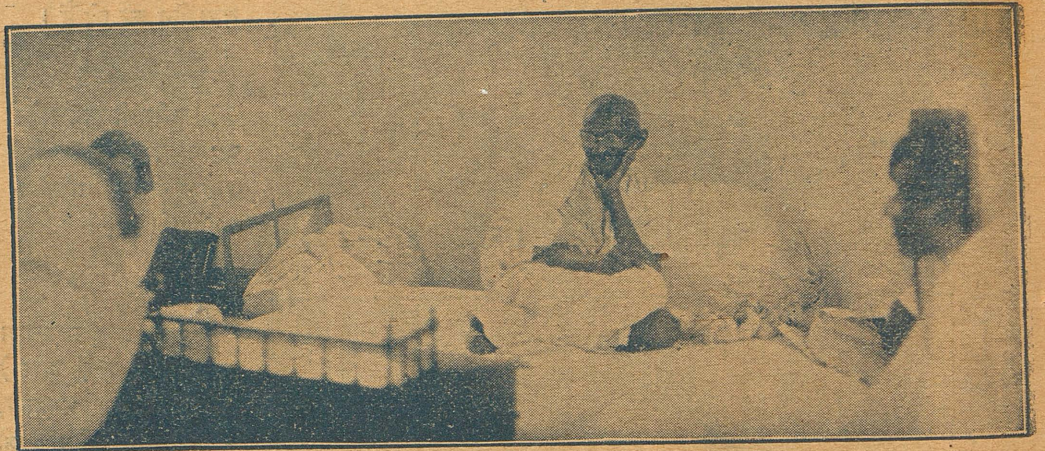


महात्मा गाँधी

गत २६ मार्च को काँङ्ग्रेस-मञ्च से लाऊड-स्पीकर द्वारा भाषण दे रहे हैं।



कराची के हरचन्द्राय नगर की अपनी झोपड़ी में महात्मा गाँधी बैठे हुए चर्ख़ा कात रहे हैं। बाईं ओर सरदार पटेल और दाहिनी ओर सेठ जमनालाल जी बैठे हैं। पास ही श्रीमती मीराबाई खड़ी हैं।

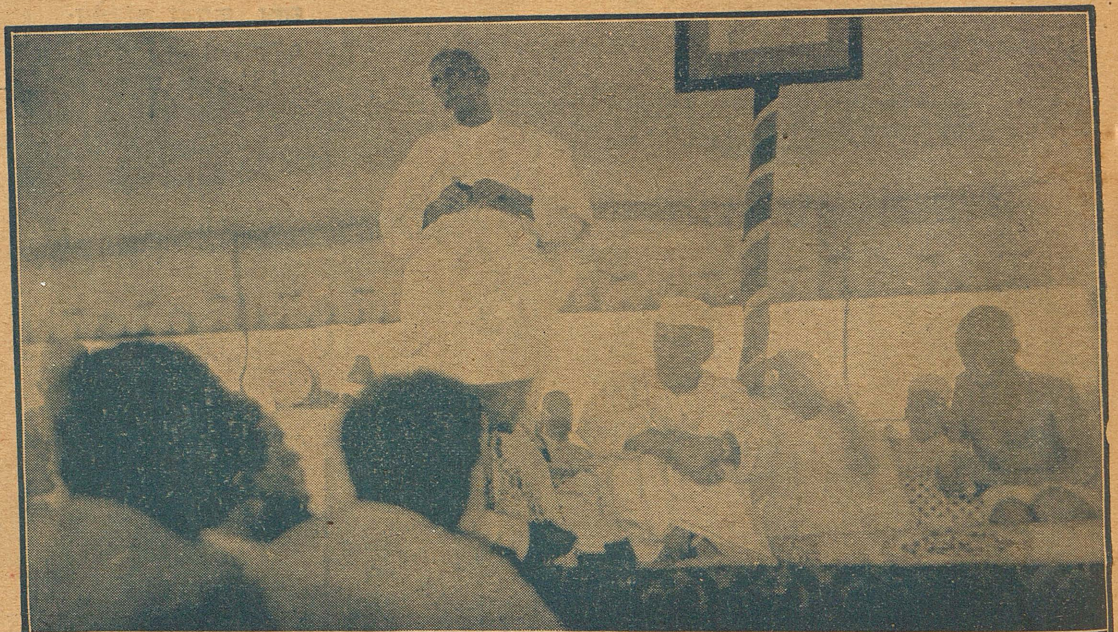


महात्मा गाँधी

कराची के हरचन्द्राय नगर की झोपड़ी में बैठे हुए बातें कर रहे हैं



सीमा प्रान्त के सुप्रसिद्ध नेता सय्यद लाल बादशाह—काँङ्ग्रेस-पण्डाल में जा रहे हैं।



राष्ट्रपति सरदार पटेल

कराची काँङ्ग्रेस की विषय-निर्वाचिनी समिति में भाषण कर रहे हैं

# 'भविष्य' की कराची-काङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ



लालकुर्ती-दल ( ख़ुदाई ख़िदमदगार )

यह दृश्य उस समय का है, जब कि लालकुर्ती-दल के युवकों ने मलीर नाम के स्टेशन पर सरदार भगतसिंह की फाँसी से विक्षुब्ध होकर महात्मा गाँधी के विरुद्ध एक प्रदर्शन किया था।

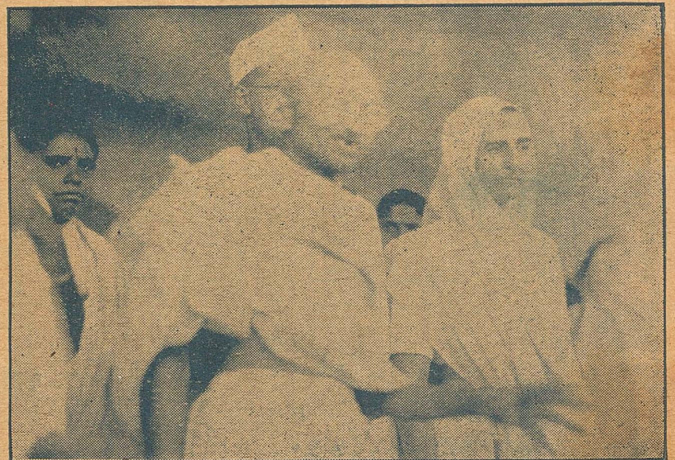


राष्ट्रपति सरदार पटेल

कराची कॉङ्ग्रेस में भारतीय पताका-उत्सव के समय लोगों के अभिवादनों का उत्तर दे रहे हैं।



सीमा-प्रान्त के गाँधी के ख़ुदाई ख़िदमदगार-दल के कुछ अफ़सर



महात्मा गाँधी और देवी मीराबाई—हरचन्दराय नगर में सान्ध्य-प्रार्थना के लिए जा रहे हैं।



सीमा-प्रान्त के गाँधी के ख़ुदाई ख़िदमदगारों की एक टोली



स्वर्गीय श्री० दत्तात्रेय—आप उन अमरों में अन्यतम हैं, जिनकी स्मृति में कराची कॉङ्ग्रेस-पण्डाल के प्रधान द्वार का नाम 'शहीद फाटक' रक्खा गया था। आप कराची कॉङ्ग्रेस कमिटी के उत्साही स्वयंसेवक थे और पुलिस की गोली से शहीद हुए थे।

# स्वर्गीय सरदार भगतसिंह का पारिवारिक परिचय





( १ ) सरदार किशनसिंह ( २ ) श्रीमती अमर कौर ( ३ ) श्रीमती सरला देवी और ( ४ ) स्वर्गीय राजगुरु की माता। ( नीचे बैठे हुए ) सरदार भगतसिंह के छोटे भाई सरदार कुलतारसिंह—जिन्हें सरदार भगतसिंह ने अन्तिम पत्र लिखा था।





स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की पूजनीया माता—श्रीमती विद्यावती



स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की दादी और सरदार किशनसिंह की पूजनीया जननी





बाईं ओर से ( १ ) धर्मपत्नी सरदार स्वर्णसिंह ( सरदार भगतसिंह की चाची ) ( २ ) सरदार भगतसिंह की पूजनीया माता श्रीमती विद्यावती ( ३ ) सरदार भगतसिंह की दादी और ( ४ ) धर्मपत्नी सरदार अजीतसिंह। नीचे बैठी हुई बालिका सरदार भगतसिंह की सहोदरा है।

## दिल

जो तेग़े[1] नाज़ का बिस्मिल नहीं है,
हमारी राय में वह दिल नहीं है।
कभी उनकी झलक देखी थी मैंने,
मेरे क़ाबू में अब तक दिल नहीं है।
जिसे नफ़रत हो अच्छी सूरतों से,
नहीं है, वह नहीं है, दिल नहीं है।
यह खो जाए, कि रह जाए, तुम्हें क्या,
हमारा है, तुम्हारा दिल नहीं है !
तहोबाला[2] किया उलफ़त ने ऐसा,
जहाँ था, उस जगह अब दिल नहीं है।
गुज़रती है बड़े आराम के साथ,
मेरे पहलू में जब से दिल नहीं है।
ज़रा आँखें मिला कर, फिर तो कहिए,
हमारे पास तेरा दिल नहीं है !
कभी तुम जिसको ख़ुश होकर निकालो,
वह मेरी आरज़ूए दिल नहीं है।

—"नूह" नारवी

ख़्यालो फ़िक्र का आलम यही है,
मेरी दुनिया है, मेरा दिल नहीं है।

—"आफ़ताब" पानीपती

इसी ने मेरी यह हालत बना दी,
यह मारे[3] आस्तीं है, दिल नहीं है !
सताता तू है क्यों "राना" को इतना,
तेरे सीने में शायद दिल नहीं है !

—"राना" गवालियारी

यह दिल गुम गश्तए[4] मञ्ज़िल नहीं है,
मैं गुमगश्ता हूँ, मेरा दिल नहीं है।

—"शाद" पीलीभीती

वह है मुट्ठी में क्या, कहते हो यह क्यों,
नहीं है, दिल नहीं है, दिल नहीं है।

—"शाकिर" गवालियारी

नयाज़े[5] इश्क़ के क़ाबिल नहीं है,
निगाहे नाज़ अब वह दिल नहीं है।

—"शैदा" अमरोहवी

जो तेग़े यार के क़ाबिल नहीं है,
कलेजा वह नहीं है, दिल नहीं है।
हम अपने दिल को, दिल समझे हुए हैं।
हमारा दिल, तो कोई दिल नहीं है।
अगर दिल है, तो दिल में है मुहब्बत,
मुहब्बत फिर कहाँ, जब दिल नहीं है !
करे अफ़शा[6] तुम्हारे इश्क़ का राज़,
हमारा दिल तो, ऐसा दिल नहीं है।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## क़ाबिल

हमारा दिल किसी क़ाबिल कभी था,
मगर अब यह, किसी क़ाबिल नहीं है।

—"नूह" नारवी

वह बोले देख कर तस्वीर मेरी,
हमारी बज़्म[7] के क़ाबिल नहीं है।

—"शाकिर" गवालियारी

घड़ी में दोस्त है, दुश्मन घड़ी में,
अभी उलफ़त के वह क़ाबिल नहीं है।
मेरा दिल लेके पछताओगे, यह तो,
किसी लायक़, किसी क़ाबिल नहीं है।

—"इन्दर" गवालियारी

१—तलवार, २—उलट-पलट, ३—साँप, ४—खोया हुआ, ५—एहतियाज, ६—ज़ाहिर, ७—सभा,




हमारा दिल किसी क़ाबिल कभी था, मगर अब यह किसी क़ाबिल नहीं है।
ज़माने से बहुत हैं आप ग़ाफ़िल, ज़माना आपसे ग़ाफ़िल नहाँ है।

किसी क़ाबिल हमारा दिल नहीं है,
बजा है, आपके क़ाबिल नहीं है।
मजाज़ी[8] जिसको कहती है ख़ुदाई,[9]
हक़ीक़त में, किसी क़ाबिल नहीं है।
समझते थे कि दुनिया होगी दुनिया,
मगर दुनिया किसी क़ाबिल नहीं है।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## महफ़िल

रहा करता है मजमा दुश्मनों का,
तेरी महफ़िल, तेरी महफ़िल नहीं है।

—"नूह" नारवी

नहीं है जिसमें "इन्दर" रौनक़े अफ़रोज़,[10]
वह महफ़िल तो, कोई महफ़िल नहीं है।

—"इन्दर" गवालियारी

किसी की जलवागाहे नाज़ है यह,
यह दुनिया क्या है, गर महफ़िल नहीं है।

—"जौहर" बुलन्दशहरी

मेरी दुनिया है मेरा दिल नहीं है,
रची बेवजह यूँ महफ़िल नहीं है।

—"शाद" निहोड़वी

चमक जाती है क्यों बिजली सी अक्सर,
अगर वह रौनक़े महफ़िल नहीं है।

—"शाकिर" गवालियारी

अजब आराइशे[11] महफ़िल है लेकिन,
निशाने मालिके महफ़िल नहीं है।

—"शैदा" अमरोहवी

समझती है जिसे दुनिया क़यामत,
वही तो आपकी महफ़िल नहीं है ?
जहाँ तुम हो, वहीं है महफ़िले नाज़,
तुम्हारी किस जगह महफ़िल नहीं है।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## ग़ाफ़िल

वही हुशियार है, जो बेख़बर है,
जो दीवाना है, वह ग़ाफ़िल नहीं है !

—"जौहर" बुलन्दशहरी

ख़ुदी को छोड़ दे बन्दे ख़ुदा के,
कि दम में कुछ अभी ग़ाफ़िल नहीं है !

—"शाद" पीलीभीती

वही इन्साँ है, जो दुनिया में रह कर,
ख़ुदा की याद से ग़ाफ़िल नहीं है !

—"शाकिर" गवालियारी

यह क्या कहते हो दिल को दिल नहीं है,
तुम्हारी याद से, ग़ाफ़िल नहीं है !

८—जो हक़ीक़त न हो, ९—संसार, १०—शोभा बढ़ाने वाले, ११—सजावट,

ज़माने से बहुत हैं, आप ग़ाफ़िल,
ज़माना आपसे ग़ाफ़िल नहीं है !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## मञ्ज़िल

उसे कहता हूँ मैं सहराए[12] उलफ़त,
जहाँ रहबर[13] जहाँ मञ्ज़िल नहीं है !
तक़ाज़ा है जुनूँ का हर क़दम पर,
मुसाफ़िर यह तेरी मञ्ज़िल नहीं है !

—"नूह" नारवी

राहे उलफ़त है कुछ ऐसी ख़तरनाक,
ठहरने की, कोई मञ्ज़िल नहीं है !

—"शाकिर" गवालियारी

क़दम राहे तलब में उठ चुका है,
हिरासे[14] दूरिए मञ्ज़िल नहीं है !

—"शैदा" अमरोहवी

यह अरमाँ सबको हम मञ्ज़िल पे पहुँचें,
मगर कोई सरे मञ्ज़िल नहीं है !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## हासिल

जफ़ा[15] के बाद, इक़रारे वफ़ा क्या,
अब इन बातों से कुछ हासिल नहीं है !

—"नूह" नारवी

मेरा होना, न होने से है बदतर,
वह लाहासिल है, कुछ हासिल नहीं है !

—"शाद" पीलीभीती

जो कुछ दुनिया में देखा, तो यह देखा,
कि राहत[16] इस जगह हासिल नहीं है !

—"शाकिर" गवालियारी

बयाने दास्ताने ग़म से "शैदा"
बजुज़[17] अफ़सोस कुछ हासिल नहीं है !

—"शैदा" अमरोहवी

हमारी नेस्ती,[18] हस्ती[19] से अच्छी,
अगर जीने का कुछ हासिल नहीं है।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

## बिस्मिल

जो दिल में आरज़ूए दिल नहीं है,
कोई क़ातिल, कोई बिस्मिल नहीं है।

—"नूह" नारवी

निगाहे नाज़ कब क़ातिल नहीं है,
वह दिल ही क्या है, जो बिस्मिल नहीं है

—"शाद" पीलीभीती

यह माना बज़्मे क़ातिल में है दुनिया,
मगर क्या है अगर "बिस्मिल" नहीं है।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१२—जङ्गल, १३—साथी, १४—खटका, १५—ज़ुल्म, १६—आराम, १७—सिवाय, १८—न रहना, १९—रहना।




अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

बहुत दिनों के बाद आपका पत्र मिला। आप तो अपने राम जी की तरह भाँग भी नहीं पीते, फिर क्या कारण है कि महीनों तक 'सटकसों' हो जाते हैं ? न चिट्ठी न पत्री ; न दीद न शुनीद। आख़िर माजरा क्या है ? 'भूलि परे कि थके सघने वन-बीथिन में कहुँ कुञ्ज-बिहारी' का हाल तो नहीं हो गया अथवा नैनी-जेल के 'द्वादशाह' के मज़े अभी भूले नहीं हैं ? एक आदमी ने कानपुर के दाढ़ी-चोटी-सम्मेलन का समाचार सुनाया। कलेजा धड़क उठा, परन्तु फिर ख़याल आया, कि आप तो इलाहाबाद में रहते हैं—अक्षयवट की छाया में। तब कहीं जान में जान आई। अन्यथा बिना भाँग छाने ही सात घड़े का नशा चढ़ जाने में देर क्या थी ?

ख़ैर, कानपुर का समाचार तो आपने सुना ही होगा। पूरे सप्ताह भर तक ख़ासी चहल-पहल रही। दाढ़ी-चोटी के दिल के अरमान पूरे हुए—बिहिश्त की भी आबादी बढ़ी और बैकुण्ठ की भी। ग़ाज़ियों और शहीदों के गलित शरीरों से ऐसी ख़ुशबू उड़ी, कि लखनऊ वाले हाजी असग़रअली मुहम्मदअली के विख्यात समातुल-अम्बर की ख़ुशबू सिर धुन कर रह गई। कौवों, चीलों और गिद्धों ने राजा युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ का आनन्द लूटा ! अग्निदेव भी निहाल हो गए। जानकारों का कहना है कि खाण्डव-दाह के बाद ऐसा रसना-तृप्तिकर स्वाद उन्हें कानपुर में ही प्राप्त हुआ है। मगर निन्दक तो सब जगह रहते हैं। कुछ अदूरदर्शी, अल्पज्ञ, अधार्मिक इस आत्म-मेध यज्ञ के लिए कानपुर के हिन्दू-मुसलमानों को कोस रहे हैं—वही कहावत है कि 'तेली का तेल जले और मशालची की छाती फटे !' स्वयं तो ऐसे कायर, कपूत और कञ्जूस कि धर्म और मज़हब के नाम पर एक रोआँ भी तोड़ कर न दें और दूसरों को ख़ून बहाते देखें तो 'हा हतोस्मि' कह कर छाती पीटने लगें ! इन मक्खीचूसों के समझ में इतना भी नहीं आता, कि आख़िर यह शरीर, धन-दौलत, घर-द्वार और बाल-बच्चे हैं किस मर्ज़ की दवा, जो धर्म के काम न आएँ ? वे बच्चे, जिनकी टाँगें चीर दी गई हैं, जीकर क्या अचार बनते या ओढ़ने-बिछाने के काम में आते ? वे अबलाएँ कैसे सीधे स्वर्ग जातीं, अगर कानपुर में यह धर्म-लीला न होती ? और सम्पादक जी, आपका भी इस कानपुरी आत्म-मेध से उपकार ही हुआ है। जले हुए घरों का फ़ोटो लेकर तस्वीरें छापिए, शहीदों और ग़ाज़ियों की जीवनियाँ छाप कर भावी वंशधरों के लिए एक नवीन आदर्श एकत्र कीजिए और मरे हुओं की आत्माओं की शान्ति के लिए तथा जीवितों को यह विषम विपत्ति सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना कीजिए। इसके साथ ही कानपुर की पुलिस की अद्भुत अलौकिक कार्य-कुशलता, सहनशीलता और शान्ति-प्रियता की तारीफ़ करना भी न भूलिएगा। नहीं तो हश्र के दिन अल्लाहताला के सामने आपको जवाबदेही करनी पड़ेगी और, मैं सच कहता हूँ, आपके सारे एह-सानों को बालाए-ताक़ रख कर आपके विरुद्ध गवाही दे दूँगा। मित्रता के लिए मैं आपके ऐसे 'केयरलेसनेस' को कदापि प्रश्रय नहीं दे सकता। आपद्ग्रस्त रक्षा के लिए बुला रहा है, और शान्ति तथा शृङ्खला की रक्षा करने वाली पुलिस मुस्कुरा रही है; भारत गिड़गिड़ा रहा है और पुलिस उसके साथ व्यङ्ग कर रही है ; बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ तलवार के घाट उतारी जा रही हैं और पुलिस तमाशा देख रही है !!! बतलाइए तो सही, ऐसी वज्रोपम दृढ़ता, राक्षस-विनिन्दित नृशंसता और पशु-परास्तकारिणी निर्लज्जता आपने कहीं देखी है ? कहीं देखी है आपने ऐसी निष्ठुरता, कि स्त्रियाँ और बच्चे घरों में बन्द करके जीते जी जलाए जाएँ और नगर-रक्षक-दल अविचल चित्त से खड़ा रहे ! अब बताइए, क्या आप बाध्य नहीं हैं, कानपुर की पुलिस के इन अनुपम गुणों की प्रशंसा करने को ?

सुनता हूँ, सम्पादक लोग बड़े विद्वान, त्रिकाल-दर्शी और विविध विषयों के जानकार होते हैं—इतिहास-ज्ञान तो मानो उनका पानी भरा करता है, परन्तु क्या आपने त्रैलोक के इतिहास में निष्ठुरता और राक्षसता का ऐसा नग्न अथच सजीव चित्र कहीं देखा है ? अगर नहीं तो आपका कर्तव्य है कि कानपुर की पुलिस की प्रशंसा करके अपनी लेखनी को सार्थक कर डालें।

मुझे अफ़सोस है कि भारतीय पुलिस के सिर पर अहर्निश अपना वरद-पाणि पसारे रहने वाले लॉर्ड इर्विन महोदय चले गए। इसीसे आपसे इतनी प्रार्थना कर रहा हूँ। वरना यह काम तो उन्हीं का था। क्योंकि पुलिस-स्तोत्र पाठ करने में जितनी निपुणता लॉर्ड महोदय ने प्राप्त कर ली थी, उतनी कोई जन्म-जन्मान्तर तक अभ्यास करने पर भी नहीं प्राप्त कर सकता। मेरी तो यह दृढ़ धारणा है, कि लॉर्ड इर्विन साहब भार-तीय पुलिस की पूर्व-जन्म की जननी नहीं, तो मौसी अवश्य ही हैं। क्योंकि पुलिस के प्रति जिस स्नेहशीलता और प्रगाढ़ प्रेम का परिचय आपने दिया है, उससे आपके मातृत्वोचित हृदय का पता साफ़-साफ़ लग जाता है।

कानपुर का आत्म-मेध लॉर्ड महोदय की मौजूदगी ही में अनुष्ठित हो चुका था। फलतः इस अवसर पर पुलिस ने अपनी जिस कर्तव्य-शीलता का परिचय दिया था, उसकी भनक भी आपके कानों में अवश्य ही पड़ी होगी, परन्तु इतने पर भी आप उसके सम्बन्ध में दो-चार उत्साहवर्द्धक शब्द नहीं कह गए ! उचित तो था, कि पुरस्कार-स्वरूप उन्हें कुछ जागीरें दिलवा जाते और कानपुर के 'सरसैया घाट' पर महारानी विक्टोरिया की कम-नीय मूर्त्ति की बग़ल में एक 'पुलिस-कीर्त्ति-स्तम्भ' स्थापित करा जाते। परन्तु मालूम होता है, बिदाई की दावतों और प्रेम-पात्रों से मिलने-जुलने में लगे रह गए। इसी से इस अत्यावश्यक कार्य का ख़याल न रहा। ख़ैर, लॉर्ड इर्विन महोदय के इस अपूर्ण कार्य की पूर्त्ति लॉर्ड विलिङ्गटन महोदय कर देंगे, ऐसी मुझे आशा है। परन्तु कुछ भी हो, आप अपने कर्तव्य से विमुख न होइएगा और अपने अख़बारों में इस अनुपम कर्तव्यशीलता का उल्लेख अवश्य ही कीजिएगा। इसके साथ ही लॉर्ड इर्विन महोदय की कर्तव्यशीलता और गुण-ग्राहकता का भी उल्लेख करना न भूलिएगा। क्योंकि अपनी बादशाहत के अल्पकालीन स्थिति में जितनी महान कीर्त्ति और सुख्याति लॉर्ड इर्विन ने प्राप्त की है, उतनी शायद ही किसी राजप्रतिनिधि को नसीब हुई हो। पुलिस की प्रशंसा में, ऑर्डिनेन्स जारी करने में, श्रीमान् पटियाला-नरेश को दूध के धोए सिद्ध करने में, सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी पर लटकाने में, विश्व-बन्धु महात्मा गाँधी को जेल भेजवाने में, भारतवासियों की उचित माँगों को ठुकराने में और सत्याग्रह आन्दोलन के सामने दाँत निपोरने में इन्होंने कमाल कर दिया है। यों तो इस देश में जितने राजप्रतिनिधि आए, उनमें एक-दो अपवादों को छोड़ कर, बाक़ी सारे के सारे सिविलियनों के हाथ के खिलौने बने रहे। परन्तु जैसा कठपुतली का नाच इन सिविलियनों ने लॉर्ड इर्विन को नचाया, वैसा किसी भी वायसराय को नहीं नचा सके। सीधापन और सरलता तो मानो विधाता ने आप में कूट-कूट कर भर दी है। हिन्दुओं के 'गोबर गणेश बाबा' की तरह, जहाँ नाइन ने बैठा दिया, बैठे हैं ! न हिलने से मतलब, न डोलने से काम। सिविलियनी विचारों और मतों के लिए मस्तिष्क को सदा 'To Let' रखते थे। दिन-दोपहर को अगर किसी सिविलियन ने कह दिया, कि आधी रात हो गई है, तो बस, आपने भी लम्बी तान दी। आपकी बला जाती है; खिड़की से झाँक कर देखने कि वास्तव में रात है या दिन ! पञ्जाब के सिविलियनों ने कह दिया कि भगतसिंह आदि को अगर फाँसी न दी गई, तो हम नौकरशाही को 'डाईवोर्स' कर देंगे, बस लाट साहब का कलेजा दहल उठा, जैसे आए दिन दङ्गों के कारण, आसन्न-वैधव्य की कल्पना से, लल्ला की महतारी का दिल दहल उठता है। हज़-रत वायसराय क्या थे, मानो मोम के पुतले थे। ज़रा सी आँच लगी और पिघले ! ऐसा दुर्बल हृदय और आत्मश्लाघा-विहीन वायसराय मैंने तो कभी नहीं देखा था। क्या आश्चर्य है कि महात्मा गाँधी को सीमा-प्रान्त जाने देने के बारे में वहाँ के चीफ़ कमिश्नर ने एक धमकी झाड़ दी

( शेष मैटर ३५वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए )

# विद्याविनोद-ग्रन्थमाला

की

## विख्यात पुस्तकें

### मानिक-मन्दिर

यह बहुत ही सुन्दर, रोचक, मौलिक, सामाजिक उपन्यास है। इसके पढ़ने से आपको पता लगेगा कि विषय-वासना के भक्त कैसे चञ्चल, अस्थिर-चित्त और मधुर-भाषी होते हैं। अपनी उद्देश्य-पूर्ति के लिए वे कैसे-कैसे जघन्य कार्य तक कर डालते हैं और अन्त में फिर उनकी कैसी दुर्दशा होती है—इसका बहुत ही सुन्दर तथा विस्तृत वर्णन किया गया है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य २॥) स्थायी ग्राहकों से १॥।=)

### मनोरमा

यह वही उपन्यास है, जिसने एक बार ही समाज में क्रान्ति मचा दी थी !! बाल और वृद्ध-विवाह से होने वाले भयङ्कर दुष्परिणामों का इसमें नग्न-चित्र खींचा गया है। साथ ही हिन्दू-विधवा का आदर्श जीवन और पतिव्रत-धर्म का बहुत सुन्दर वर्णन है। मूल्य केवल २॥) स्थायी ग्राहकों से १॥।=)

### नयन के प्रति

हिन्दी-संसार के सुविख्यात तथा 'चाँद'-परिवार के सुपरिचित कवि आनन्दीप्रसाद जी की नौजवान लेखनी का यह सुन्दर चमत्कार है। श्रीवास्तव महोदय की कविताएँ भाव और भाषा की दृष्टि से कितनी सजीव होती हैं—सो हमें बतलाना न होगा। इस पुस्तक में आपने देश की प्रस्तुत हीनावस्था पर अश्रुपात किया है। जिन ओज तथा करुणापूर्ण शब्दों में आपने नयनों को धिक्कारा और लज्जित किया है, वह देखने ही की चीज़ है—व्यक्त करने की नहीं। पढ़ते ही तबियत फड़क उठती है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय ! दो रङ्गों में छपी हुई इस रचना का न्योछावर लागत-मात्र केवल ।=) ; स्थायी ग्राहकों से ।)॥ मात्र !

### शुक्ल और सोफ़िया

इस पुस्तक में पूर्व और पश्चिम का आदर्श और दोनों की तुलना बड़े मनोहर ढङ्ग से की गई है। यूरोप की विलास-प्रियता और उससे होने वाली अशान्ति का विस्तृत वर्णन किया गया है। शुक्ल और सोफ़िया का आदर्श जीवन, उनकी निःस्वार्थ देश-सेवा, दोनों का प्रणय और अन्त में संन्यास लेना ऐसी रोमाञ्चकारी कहानी है कि पढ़ते ही हृदय गद्गद हो जाता है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २॥)

### गौरी-शङ्कर

आदर्श-भावों से भरा हुआ यह सामाजिक उपन्यास है। शङ्कर के प्रति गौरी का आदर्श-प्रेम सर्वथा प्रशंसनीय है। बालिका गौरी को धूर्तों ने किस प्रकार तङ्ग किया। बेचारी बालिका ने किस प्रकार कष्टों को चीर कर अपना मार्ग साफ़ किया, अन्त में चन्द्रकला नाम की एक वेश्या ने उसकी कैसी सच्ची सहायता की और उसका विवाह अन्त में शङ्कर के साथ कराया। यह सब बातें ऐसी हैं, जिनसे भारतीय स्त्री-समाज का मुखोज्ज्वल होता है। यह उपन्यास निश्चय ही समाज में एक आदर्श उपस्थित करेगा। छपाई-सफ़ाई सभी बहुत साफ़ और सुन्दर है। मूल्य केवल ॥।)

**☞ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद**

# स्व० सरदार भगतसिंह और उनके साथियों का संक्षिप्त परिचय

[ श्री० अभ्यङ्कर वर्मा, एम० ए०, एल्-एल० बी० ]

## सरदार भगतसिंह

### वंश-परिचय

सरदार भगतसिंह जिस वंश के गौरव थे, वह गत पच्चीस वर्षों से अपनी देश-भक्ति और क़ुर्बानियों के लिए काफ़ी ख्याति प्राप्त कर चुका है। कहते हैं, इस ख़ान्दान के रक्त में कुछ ऐसे बीज हैं, जिसके कारण कोई भी व्यक्ति परतन्त्रता की हवा में रहना पसन्द नहीं करता। आपके पूज्य पिता सरदार किशनसिंह पञ्जाब के विख्यात देशभक्तों और स्व० लाला लाजपतराय के साथियों में हैं। आपके इतिहास-प्रसिद्ध चचा सरदार अजीतसिंह को कौन नहीं जानता? कौन नहीं जानता, कि आज भी वे देशभक्ति के अपराधी होने के कारण मातृ-भूमि के दर्शनों से वञ्चित हैं। आपके दूसरे चचा सरदार स्वर्णसिंह की देशभक्ति की कहानी भी पञ्जाब के प्रत्येक घर में कही और सुनी जाती है।

### जन्म और नामकरण

सरदार भगतसिंह का जन्म १३ असौज, सम्वत् १८६४ शनिवार को लायलपुर ( पञ्जाब ) के बङ्गा नामक ग्राम में हुआ था। आपके जन्म से कई महीने पूर्व आपके पिता तथा आपके दोनों चचा—सरदार अजीतसिंह और सरदार स्वर्णसिंह पञ्जाब से भाग कर नेपाल चले गए थे। परन्तु जिस रोज़ सरदार का जन्म हुआ और लोग उनकी दादी को बधाइयाँ दे रहे थे, ठीक उसी समय आपके चचा सरदार स्वर्णसिंह जी घर आ पहुँचे। परन्तु सरदार किशनसिंह जी जेल में थे। आपके पास पुत्र उत्पन्न होने की ख़बर पहुँची, तो बड़े ख़ुश हुए और ईश्वर को धन्यवाद दिया।

सरदार भगतसिंह की दादी आपको बहुत प्यार करतीं तथा आपको 'भागोंवाला' अर्थात् भाग्यवान कहा करती थीं। इसीसे आपका नाम भी 'भगतसिंह' रक्खा गया था।

### शिक्षारम्भ और बाल्य-जीवन

सरदार की बाल्यावस्था का अधिकांश समय आपकी दादी तथा आपकी माता की निगरानी में गुज़रा। इन दोनों महिलाओं के धार्मिक आदर्शों का बालक भगतसिंह पर काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी मेधा-शक्ति भी अच्छी थी, इसलिए तीन वर्ष की अवस्था में ही आपको गायत्री मन्त्र याद हो गया। इसके बाद जब इनकी उम्र पाँच वर्ष की हुई, तो गाँव के प्राइमरी स्कूल में पढ़ने के लिए भेजे गए। यहाँ आपने कई साल तक शिक्षा प्राप्त कर बड़ी सफलता के साथ प्राइमरी परीक्षा पास की।

प्रारम्भिक पाठशाला में भरती होने के कुछ दिन बाद ही आपको एक बार अपने घर वालों के साथ लाहौर जाने का अवसर मिला। ये लोग वहाँ सरदार किशनसिंह के परम मित्र लाला आनन्दकिशोर के यहाँ उतरे थे, लाला जी ने बड़े प्यार से भगतसिंह को गोद में बिठा लिया और कधेलों पर थपकियाँ देते हुए पूछा—तुम क्या करते हो?

बालक ने अपनी तोतली बोली में उत्तर दिया—मैं खेती करता हूँ।

लाला जी—तुम बेचते क्या हो?

बालक—मैं बन्दूक़ें बेचता हूँ।

यह बातचीत इतनी प्यारी थी, कि इसका ज़िक्र कभी-कभी उनके बड़े हो जाने पर भी हुआ करता था। लड़कपन में भगतसिंह बड़े चतुर, चपल और खिलाड़ी थे। लड़कपन में ये शिवाजी की तरह दल बना कर अपने साथियों के साथ युद्ध-क्रीड़ा किया करते थे। आपको वीरतापूर्ण खेलों से अधिक प्रेम था।

लड़कपन में सरदार भगतसिंह को तलवार-बन्दूक़ से बड़ा प्रेम था। एक बार अपने पिता के साथ खेतों की ओर गए। किसान खेतों में हल चला रहे थे। बालक भगतसिंह ने पिता से पूछा, ये क्या कर रहे हैं? पिता ने समझाया—'हल से खेत जोत रहे हैं। इसके बाद अनाज बोएँगे।' इस पर भोले बालक ने कहा—अनाज तो बहुत पैदा होता है, मगर तलवार-बन्दूक़ सब जगह नहीं होती। ये किसान तलवार-बन्दूक़ की खेती क्यों नहीं करते?



स्वर्गीय सरदार भगतसिंह

लाहौर-षड्यन्त्र वाले मुक़दमे में, एक दिन सरकारी वकील के किसी कथन पर सरदार भगतसिंह को हँसी आ गई। इस पर सरकारी वकील ने अदालत से शिकायत की कि सरदार भगतसिंह हँस कर अदालत की तौहीन कर रहे हैं। सरदार ने हँस कर उत्तर दिया—"मुझे तो ईश्वर ने हँसने के लिए ही पैदा किया है। मैं तमाम ज़िन्दगी हँसता रहा हूँ, हँसता रहूँगा। आज अदालत में हँस रहा हूँ, और ईश्वर ने चाहा तो फाँसी के तख़्ते पर भी हँसूँगा। वकील साहब इस समय तो मेरे हँसने की शिकायत कर रहे हैं, परन्तु जब मैं फाँसी के तख़्ते पर हँसूँगा, तब किस अदालत से शिकायत करेंगे?"

### डी० ए० वी० स्कूल में

प्राइमरी परीक्षा पास करके भगतसिंह लाहौर चले आए और दयानन्द एङ्गलो-वैदिक विद्यालय में शिक्षा पाने लगे। यहाँ आपने नवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। इसी समय सन् १९२१ में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया। सारे देश में सरकारी तथा सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों का बहिष्कार आरम्भ हुआ, इसलिए भगतसिंह ने भी डी० ए० वी० स्कूल छोड़ दिया और लाहौर के भारतीय विद्यालय में चले आए। उस समय इस स्कूल के प्रधान प्रबन्धकर्त्ता भाई परमानन्द जी थे। आपने भगतसिंह की परीक्षा लेकर इन्हें एफ़० ए० क्लास में भर्त्ती कर लिया। सन् १९२३ में आपने एफ़० ए० की परीक्षा पास की और इसी समय आपकी श्री० सुखदेव तथा अन्यान्य क्रान्तिकारियों से जान-पहचान हुई। इधर घर वालों ने आपके विवाह का प्रबन्ध किया। कई जगह से बातचीत आरम्भ हुई। परन्तु इसकी ख़बर सरदार को मालूम हुई तो उन्होंने चट बोरिया-बिस्तर उठाया और लाहौर छोड़ कर अन्यत्र चले गए। कई दिनों के बाद आपके पिता को एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था, कि मैं विवाह नहीं करना चाहता, इसीसे घर छोड़ दिया है। आप मेरे लिए कोई चिन्ता न करें। मैं बहुत अच्छी तरह से हूँ। अस्तु।

लाहौर से भाग कर आप दिल्ली आए और वहाँ के 'अर्जुन' नामक हिन्दी-पत्र के कार्यालय में सम्वाददाता का कार्य करने लगे। इसके बाद कानपुर आए और 'प्रताप' में काम करने लगे। यहाँ आप बलवन्तसिंह के नाम से विख्यात थे और इसी नाम से 'प्रताप' में लेख आदि भी लिखा करते थे। हिन्दी भाषा से आपको विशेष प्रेम था और लिखते भी सुन्दर थे।

इस साल गङ्गा और जमुना नदियों में भयङ्कर बाढ़ आई थी। संयुक्त प्रान्त के कई स्थानों में गाँव के गाँव इस भयङ्करी बाढ़ के कारण तबाह हो गए थे। श्री० बटुकेश्वरदत्त उन दिनों कानपुर में ही रहते थे। बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए उन्होंने एक समिति स्थापित की, सरदार भगतसिंह भी इस समिति के सदस्य बने और बड़े उत्साह से बाढ़-पीड़ितों की सेवा की। बहुत दिनों तक एक साथ रह कर कार्य करने के कारण श्री० बटुकेश्वरदत्त से आपकी घनिष्टता भी ख़ूब बढ़ गई। इन दोनों युवकों की सेवाओं का कानपुर की जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। लोग इन्हें बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगे। विशेषतः कानपुर के विख्यात राष्ट्र-सेवक स्वर्गवासी श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी इनके कामों से अत्यन्त प्रसन्न हुए और भगतसिंह को एक जातीय स्कूल का हेडमास्टर नियुक्त करा दिया।

इसी समय सरदार किशनसिंह जी को ख़बर मिली कि भगतसिंह कानपुर में हैं। उन्होंने अपने एक मित्र को तार दिया कि भगतसिंह का पता लगा कर कह दो कि उनकी माता अत्यन्त बीमार हैं।

### शहीदी जत्थे का स्वागत

माता की बीमारी का समाचार सुनते ही सरदार भगतसिंह पञ्जाब के लिए रवाना हो गए और पिता को तार भी दे दिया कि मैं आता हूँ। इन दिनों 'गुरु का बाग़' वाला इतिहास-प्रसिद्ध अकाली आन्दोलन आरम्भ था। सारे पञ्जाब में एक तहलक़ा सा मचा हुआ था। सत्याग्रही अकालियों का जत्था दूर-दूर से 'गुरु का बाग़' की ओर बढ़ रहा था। परन्तु कुछ 'हाँ-हुज़ूरी' दल इस आन्दोलन के विरुद्ध था। उसे यह आन्दोलन फूटी आँखों भी अच्छा नहीं लगता था। इसलिए उन्होंने निश्चय कि बङ्गा ग्राम की ओर से अकाली जत्थे का स्वागत न किया जावे और उन्हें यहाँ ठहरने न दिया जाय। कुछ लोगों ने इस बात की ख़बर सरदार किशनसिंह को, जो उन दिनों किसी कार्यवश लाहौर में थे, दी। उत्तर में सरदार साहब ने लिखा कि भगत वहाँ मौजूद है। वह जत्थे के ठहरने और 'लङ्गर' ( भोजन ) का सब प्रबन्ध कर लेगा, आप लोग किसी बात की चिन्ता न करें।

सुयोग पुत्र ने पिता के इस आदेश और इच्छा का पूर्णतया पालन किया। बङ्गा में जत्थे का ख़ूब स्वागत हुआ। लङ्गर का प्रबन्ध भी बड़ी धूमधाम से हुआ। विरोधी दल अड़ङ्गा लगाने से बाज़ नहीं आया। परन्तु सरदार भगतसिंह के सामने उसकी एक न चली।

## उमासुन्दरी

इस पुस्तक में पुरुष-समाज की विषय-वासना, अन्याय तथा भारतीय रमणियों के स्वार्थ-त्याग और पतिव्रत का ऐसा सुन्दर और मनोहर वर्णन किया गया है कि पढ़ते ही बनता है। सुन्दरी सुशीला का अपने पति सतीश पर अगाध प्रेम एवं विश्वास, उसके विपरीत सतीश बाबू का उमासुन्दरी नामक युवती पर मुग्ध हो जाना, उमासुन्दरी का अनुचित सम्बन्ध होते हुए भी सतीश को कुमार्ग से बचाना और उपदेश देकर उसे सन्मार्ग पर लाना आदि सुन्दर और शिक्षाप्रद घटनाओं को पढ़ कर हृदय उमड़ पड़ता है। इतना ही नहीं, इसमें हिन्दू-समाज की स्वार्थपरता, काम-लोलुपता, विषय-वासना तथा अनेक कुरीतियों का हृदय-विदारक वर्णन किया गया है। छपाई-सफ़ाई सब सुन्दर है। मूल्य केवल ॥) आने स्थायी ग्राहकों के लिए ।-) ; पुस्तक दूसरी बार छप कर तैयार है।

## घरेलू चिकित्सा

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में बड़े-बड़े नामी डॉक्टरों, वैद्यों और अनुभवी बड़े-बूढ़ों द्वारा लिखे गए हज़ारों अनमोल नुस्ख़े प्रकाशित हुए हैं, जिनसे सर्व-साधारण का बहुत-कुछ मङ्गल हुआ है, और जनता ने इन नुस्ख़ों की सचाई तथा उनके प्रयोग से होने वाले लाभ की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। इनके द्वारा आए-दिन डॉक्टरों की भेंट किए जाने वाले सैकड़ों रुपए बचाए जा सकते हैं। इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ को अपने यहाँ रखनी चाहिए। स्त्रियों के लिए तो यह पुस्तक बहुत ही काम की वस्तु है। एक बार इसका अवलोकन अवश्य कीजिए। छपाई-सफ़ाई अत्युत्तम और सुन्दर। मोटे चिकने काग़ज़ पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य लागत मात्र केवल ॥) रक्खा गया है। स्थायी ग्राहकों से ।-) मात्र !

## देवताओं के गुलाम

यह पुस्तक सुप्रसिद्ध मिस मेयो की नई करतूत है। यदि आप अपने काले कारनामे एक विदेशी महिला के द्वारा मर्मिक एवं हृदय-विदारक शब्दों में देखना चाहते हैं तो एक बार इसके पृष्ठों को उलटने का कष्ट कीजिए। धर्म के नाम पर आपने कौन-कौन से भयङ्कर कार्य किए हैं ; इन कृतियों के कारण समाज की क्या अवस्था हो गई है—इसका सजीव चित्र आपको इसमें दिखाई पड़ेगा। पढ़िए और आँसू बहाइए !! केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं। मूल्य केवल ३) स्थायी ग्राहकों से २।)

## शैलकुमारी

यह उपन्यास अपनी मौलिकता, मनोरञ्जकता, शिक्षा, उत्तम लेखन-शैली तथा भाषा की सरलता और लालित्य के कारण हिन्दी-संसार में विशेष स्थान प्राप्त कर चुका है। इस उपन्यास में यह दिखाया गया है कि आजकल एम० ए०, बी० ए० और एफ़० ए० की डिग्री-प्राप्त स्त्रियाँ किस प्रकार अपनी विद्या के अभिमान में अपने योग्य पति तक का अनादर कर उनसे निन्दनीय व्यवहार करती हैं, और किस प्रकार उन्हें घरेलू काम-काज से घृणा हो जाती है। मूल्य केवल २) ; स्थायी ग्राहकों से १॥)

## मनोहर ऐतिहासिक कहानियाँ

इस पुस्तक में पूर्वीय और पाश्चात्य, हिन्दू और मुसलमान, स्त्री-पुरुष—सभी के आदर्श छोटी-छोटी कहानियों द्वारा उपस्थित किए गए हैं। केवल एक बार के पढ़ने से बालक-बालिकाओं के हृदय में दयालुता, परोपकारिता, मित्रता, सचाई और पवित्रता आदि सद्गुणों के अङ्कुर उत्पन्न हो जायँगे और भविष्य में उनका जीवन उसी प्रकार महान और उज्ज्वल बनेगा। मनोरञ्जन और शिक्षा की यह अपूर्व सामग्री है। भाषा अत्यन्त सरल, ललित तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २) से स्थायी ग्राहकों १॥)

## आयरलैण्ड के ग़दर की कहानियाँ

छोटे-बड़े सभी के मुँह से आज यह सुनने में आ रहा है कि भारतवर्ष, आयरलैण्ड बनता जा रहा है। उस आयरलैण्ड ने अङ्गरेज़ों की ग़ुलामी से किस तरह छुटकारा पाया और वहाँ के शिनफ़ीन दल ने किस कौशल से लाखों अङ्गरेज़ी सेना के दाँत खट्टे किए, इसका रोमाञ्चकारी वर्णन इस पुस्तक में पढ़िये। इसमें आपको इतिहास और उपन्यास दोनों का मज़ा मिलेगा। मूल्य केवल—दस आने।

## मनोरञ्जक कहानियाँ

इस पुस्तक में १७ छोटी-छोटी, शिक्षाप्रद, रोचक और सुन्दर हवाई कहानियाँ संग्रह की गई हैं। कहानियों को पढ़ते ही आप आनन्द से मस्त हो जायँगे और सारी चिन्ताएँ दूर हो जायँगी। बालक-बालिकाओं के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी है। केवल एक कहानी उनको सुनाइए—ख़ुशी के मारे उछलने लगेंगे, और पुस्तक को पढ़े बिना कदापि न मानेंगे। मनोरञ्जन के साथ ही प्रत्येक कहानियों में शिक्षा की भी सामग्री है। शीघ्रता कीजिए, केवल थोड़ी कॉपियाँ और शेष हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १॥) ; स्थायी ग्राहकों से १=)

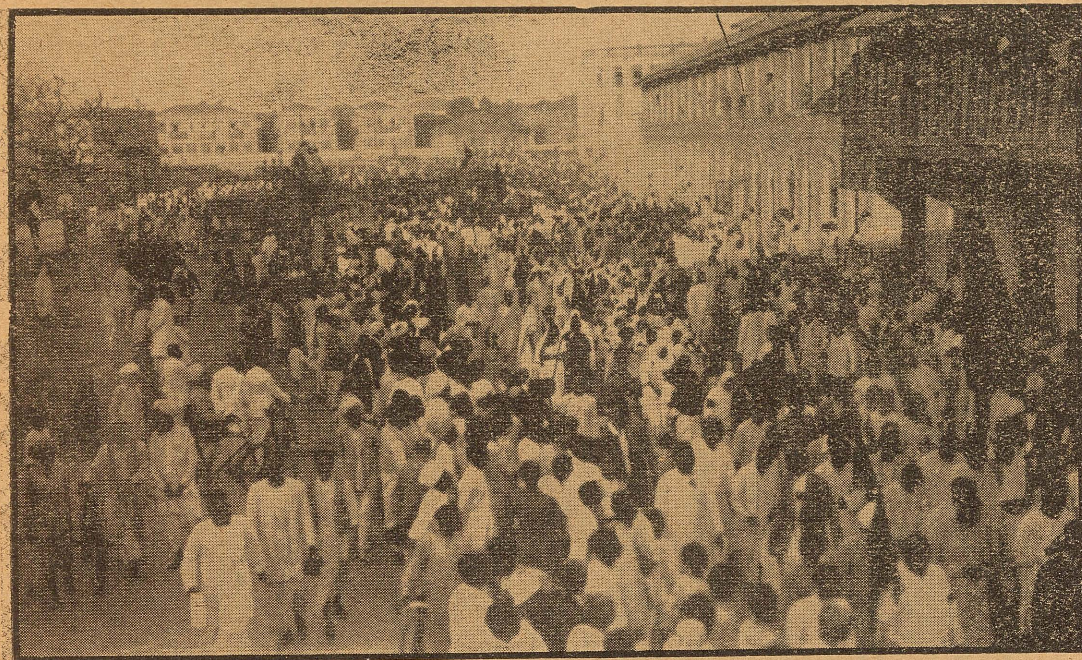
**व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद**

सरदार भगतसिंह ने स्वयं आटा और घी जत्थे के प्रबन्धक के पास पहुँचाया, इससे गाँव वाले और भी उत्साहित हुए। जत्थे को १०१) रुपए की एक थैली भेंट की गई। भगतसिंह ने इस अवसर पर एक छोटी सी वक्तृता देकर, सत्याग्रह-सिद्धान्त को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए उन्हें बधाई दी।

## पुलिस में रिपोर्ट

लायलपुर में सरदार भगतसिंह ने एक वक्तृता दी और कलकत्ता में मि० डे नाम के एक अङ्गरेज़ को गोली मार देने वाले श्री० गोपीनाथ साहा की प्रशंसा की। पुलिस ने इसकी रिपोर्ट ली और लायलपुर में आप पर मामला चला। आपके पिता भी चाहते थे कि भगतसिंह को थोड़ा सा जेल का अनुभव हो जाय, परन्तु अवसर न मिला। इसके बाद भगतसिंह लाहौर चले आए और वहाँ से कानपुर होते हुए बेलगाँव कॉङ्ग्रेस में चले गए।

कॉङ्ग्रेस से लौटने पर आपने अमृतसर के 'अकाली' नामक अख़बार के कार्यालय में काम करना आरम्भ किया और बलवन्तसिंह के नाम से बहुत दिनों तक



करांची कॉङ्ग्रेस के अवसर पर स्वर्गीय सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों की फाँसी का समाचार सुन कर नगर-निवासियों ने उनके चित्र का एक बड़ा भारी शोक-जुलूस निकाला था—इस चित्र में पाठकों को उसी जुलूस का दृश्य मिलेगा। सम्मिलित जनता नङ्गे सिर थी और काले झण्डे भी साथ थे।

'अकाली' का सम्पादन करते रहे। इसी बीच में आप किसी काम से लाहौर आए। पुलिस आपकी तलाश में थी। इसलिए लाहौर आते ही आप गिरफ़्तार कर लिए गए और छः हज़ार की ज़मानत पर छोड़े गए।

## डायरी फ़ॉर्म

सन् १९२७ में, अपने पिता की आज्ञा से सरदार ने लाहौर-वासियों को विशुद्ध दूध पहुँचाने के लिए एक स्कीम तैयार की और लाहौर के पास ही एक गाँव में एक वृहत् 'डायरी फ़ॉर्म' ( दूध का कारख़ाना ) स्थापित किया। यह कारख़ाना कुछ दिनों तक बहुत अच्छी तरह चला। परन्तु भगतसिंह के जीवन का उद्देश्य दूध बेचना न था, अतः वे किसी उद्देश्य से एक सप्ताह के लिए एकाएक ग़ायब हो गए। यह बात आपके पिता जी को बहुत बुरी मालूम हुई और जब आप वापस आए तो पिता ने नाराज़ होकर आपकी पीठ पर दो सोंटे रसीद किए। फलतः इसी समय से 'डायरी फ़ॉर्म' की भी इतिश्री हो गई।

सन् १९२८ में सरदार भगतसिंह ने पञ्जाब के शाहन्शाह चक नामक स्थान में रहना आरम्भ किया। इस दरमियान में वे कभी-कभी लाहौर भी आते और हफ़्तों और महीनों तक लापता रहते। इसी समय सरदार किशनसिंह के किसी मित्र ने कहा कि अगर आप भगतसिंह को हमें सौंप दें तो मैं आपको एक हज़ार रुपए मासिक दिया करूँ। पिता ने यह बात स्वीकार कर ली। भगतसिंह नौकरी करने के लिए घर से चले, परन्तु इसके बाद से फिर पता न चला कि कहाँ गए, किधर गए।

## एसेम्बली बम-केस

इसके बाद विगत ८ अप्रैल, सन् १९२९ को दिल्ली में एसेम्बली बम-केस में आपकी और आपके साथी श्री० बटुकेश्वरदत्त की गिरफ़्तारी हुई। मामला चला और न्यायालय ने आपको आजीवन कालेपानी की सज़ा दी। इस मामले में अदालत के सामने आपने जो वक्तव्य दिया था, उसमें एसेम्बली में बम फेंकने का उद्देश्य बताते हुए आपने कहा था कि "समस्त देश के विरोध को ठुकराते हुए सरकार ने साइमन कमीशन भेज कर अपने बहरेपन का जो परिचय दिया है, उसी को दूर करने की इच्छा से हमने यह बम फेंका है। वास्तव में हमारा उद्देश्य किसी की हत्या करना न था।" परन्तु इतने पर भी आप पर तथा श्री० बटुकेश्वर पर हत्या की चेष्टा का अपराध लगाया गया और उपर्युक्त दण्ड दे दिया गया।

## सौण्डर्स हत्या-काण्ड

जिस समय मशहूर साइमन कमीशन भारत के कई स्थानों में भ्रमण करता हुआ लाहौर पहुँचा था, उस समय उसके विरोध में वहाँ के नागरिकों ने एक जुलूस निकाला था और उसके अध्यक्ष थे, पञ्जाब-केसरी स्वर्गवासी लाला लाजपतराय। इस जुलूस को तितर-बितर करने के लिए, लाहौर की पुलिस ने मि० सौण्डर्स नाम के एक पुलिस कर्मचारी की अध्यक्षता में जुलूस वालों पर लाठियाँ चलाई थीं। स्व० लाला जी को भी चोट लगी थी, और परिणाम-स्वरूप, विगत १७ नवम्बर सन् १९२८ को लाला जी का स्वर्गवास हो गया। इस घटना के ठीक एक महीने बाद १७ दिसम्बर को मि० सौण्डर्स और सरदार चाननसिंह को गोली मारी गई और उन दोनों का देहान्त हो गया। पुलिस को सन्देह हुआ कि इस काण्ड से सरदार भगतसिंह का भी सम्बन्ध है, इसलिए पुलिस उन्हें ढूँढ़ रही थी। इतने में एसेम्बली बम-काण्ड हुआ, जिसका उल्लेख हम ऊपर कर आए हैं।

## बम-फ़ेक्टरी और षड्यन्त्र

एसेम्बली बम-विस्फोट के बाद पुलिस को पञ्जाब में किसी बम के कारख़ाने का सन्देह हुआ। वह और बड़ी मुस्तैदी से इस बात का पता लगाने लगी। अन्त में १६ अप्रैल को लाहौर के काश्मीरी बिल्डिङ्ग में उसे एक बम का कारख़ाना मिला और सरदार भगतसिंह के साथी श्री० सुखदेव गिरफ़्तार किए गए। इस कारख़ाने के मिलने के साथ ही पुलिस ने घोषणा की कि इसके साथ ही भयङ्कर षड्यन्त्र भी है और इस षड्यन्त्र से सरदार भगतसिंह का भी सम्बन्ध है। अन्त में षड्यन्त्र सम्बन्धी मुक़दमा आरम्भ हुआ और मि० सौण्डर्स तथा सरदार चाननसिंह की हत्या का अपराध सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद पर लगाया गया।

## षड्यन्त्र का मामला

रायसाहब पण्डित श्रीकिशन स्पेशल मैजिस्ट्रेट की अदालत में लाहौर षड्यन्त्र का मामला पेश हुआ। इस मुक़दमे के दौरान में समय-समय पर सरदार भगतसिंह ने जो बातें कहीं और जो काम किए, वे इतिहास में अनुपम हैं। जेल के कष्टों को दूर कराने के लिए आपके साथी श्री० यतीन्द्रनाथ ने तो जेल में अनशन करके अपनी बलि दे दी। इसी बीच में सत्याग्रह-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और गवर्नर-जनरल लॉर्ड इर्विन ने इस मुक़दमे को जल्दी समाप्त करने के लिए एक ख़ास ऑर्डिनेन्स बना कर तीन जजों की एक ट्रिब्यूनल क़ायम कर दी। इस ट्रिब्यूनल में मामला फिर से चालू हुआ। अदालत के रुख़ को देख कर अभियुक्तों ने मुक़दमे में हिस्सा लेने से इन्कार कर दिया। इन लोगों ने सफ़ाई भी नहीं दी। आख़िर इन लोगों की ग़ैर-मौजूदगी में अदालत ने हुक्म भी सुना दिया। इस केस के दौरान में पूरे ११५ दिन अनशन-व्रत करके सरदार भगतसिंह ने सारे संसार को चकित कर दिया था।

## फाँसी की सज़ा

७ अक्टूबर १९३० को सरदार भगतसिंह, श्रीयुत सुखदेव और श्रीयुत राजगुरु को फाँसी की सज़ा दे दी गई। ट्रिब्यूनल ने फाँसी की तारीख़ भी मुक़र्रर कर दी और फाँसी के वारण्ट भी बना दिए। ख़ास ऑर्डिनेन्स होने के कारण इस मामले की अपील हाईकोर्ट में नहीं हो सकी। हाईकोर्ट में इस बात की अपील की गई कि वायसराय को ट्रिब्यूनल बनाने का कोई अधिकार नहीं था—पर वह अपील ख़ारिज कर दी गई। प्रिवी-कौन्सिल में अपील की गई, पर वह भी नामञ्ज़ूर हुई। हाईकोर्ट में वकीलों ने अपील की कि फाँसी की सज़ा रद्द कर दी जाय, पर वह भी नामञ्ज़ूर हुई।

ट्रिब्यूनल ने फाँसी देने की तारीख़ अक्टूबर १९३० में मुक़र्रर की थी—वह तारीख़ निकल गई। उधर ऑर्डिनेन्स का समय समाप्त हो जाने से ट्रिब्यूनल भी समाप्त हो गया। वकीलों ने हाईकोर्ट में अपील की कि भारतीय दण्ड-विधान के अनुसार अब उन्हें फाँसी दिलाने का किसी को अधिकार नहीं है। पर यह अपील भी न मानी गई। सरदार भगतसिंह की ओर से दया की प्रार्थना करने के लिए एक अपील वायसराय के नाम लिखी गई, पर सरदार ने दया की भीख माँगना अस्वीकार करके हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया। यह दरख़्वास्त और लोगों की ओर से भेजी गई, पर वायसराय ने इसे मञ्ज़ूर नहीं किया। आपके साथी श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद को पकड़ने की पुलिस ने बहुत कोशिश की, पर वे पकड़े न जा सके। पाँच हज़ार का पारितोषिक भी उन्हें पकड़ा न सका। आख़िर २७ फ़रवरी को प्रयाग में वे पुलिस से भिड़ कर और गोली मार कर

मर गए। सरदार भगतसिंह को फाँसी से बचाने के लिए एक बार फिर हाईकोर्ट से अपील की गई, पर वह भी मन्ज़ूर न हुई।

## महात्मा जी का विफल प्रयास और फाँसी

महात्मा जी ने लॉर्ड इर्विन से कई दिन तक बातचीत करके सन्धि की शर्तें तय कीं और उनके अनुसार ४ मार्च को सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया। इन शर्तों में महात्मा जी ने वायसराय से यह समझौता भी किया था कि इन्हें फाँसी अभी न लगाई जाय। इस सम्बन्ध में महात्मा जी का षड्यन्त्रकारियों की जान बचाने का उद्योग तो निष्फल हुआ ही, वायसराय का समझौता भी पूरा न हुआ। जब सरदार भगतसिंह को महात्मा जी के उद्योग का पता लगा तो आपने स्पष्ट कह दिया कि महात्मा जी हमें नहीं बचा सकते। हम राजबन्दी हैं। सरकार को चाहिए कि या तो हमें लड़ाई समाप्त होने पर छोड़ दे या गोली से उड़ा दे। हमें फाँसी लगाना, हमारा अपमान करना है। लाखों आदमियों के हस्ताक्षर से जो अपील की गई, उसका भी कोई फल नहीं हुआ, महात्मा जी की बात भी नहीं मानी गई। इस प्रकार लोकमत का निरादर करते हुए सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु को २३ मार्च, १९३१ को रात के पौने आठ बजे फाँसी पर चढ़ा दिया गया। इन नवयुवकों ने हँसते-हँसते फाँसी की रस्सी को चूमा और "इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद" के नारे लगाते हुए परमधाम को सिधार गए। फाँसी के समय सरदार की उम्र कुल २३ वर्ष की थी।

## अन्त्येष्टि

'जेल मेनुएल' के अनुसार फाँसी देने का नियम प्रातःकाल है, पर सरदार और उनके साथी रात के अन्धकार में लटकाए गए। उनके निकट सम्बन्धियों और प्रियजनों के लिए उनसे अन्तिम भेंट करने की भी वाञ्छनीय सुविधा नहीं दी गई। यहाँ तक कि प्रदर्शन के भय से उनकी लाशें भी उनके घर वालों को नहीं दी गईं, और बल्कि रातोंरात मोटर-लॉरियों में भर के वे लाहौर से प्रायः चालीस मील की दूरी पर सतलज नदी के किनारे ले जाकर चुपचाप जला दी गईं। उनके भस्मावशेष से भी इतना भय किया गया कि वह सतलज की मझधार में प्रवाह कर दिया गया !!!

## अन्य परिजन

भगतसिंह के दो छोटे भाई और तीन बहिनें हैं। भगतसिंह के माता-पिता के अतिरिक्त उनके बाबा-दादी भी जीवित हैं। बाबा सरदार अर्जुनसिंह जी ८० वर्ष से ऊपर हैं, लेकिन अजीतसिंह, सुवर्णसिंह—जिनकी मौत सन् १९०८ में जेल में हो चुकी है; इन दो पुत्रों को मातृवेदी पर होम कर और अब अपने पोते भगतसिंह के बलिदान पर वे गर्व करते हैं।

## सरदार भगतसिंह का अन्तिम पत्र अपने भाई के नाम

३ मार्च, १९३१

अज़ीज़ कुलतार,

आज तुम्हारी आँखों में आँसू देख कर बहुत रञ्ज हुआ। आज तुम्हारी बातों में बहुत दर्द था, तुम्हारे आँसू मुझसे बर्दाश्त नहीं होते।

बर्ख़ुर्दार हिम्मत से शिक्षा प्राप्त करना, और सेहत का ख़्याल रखना।

हौसला रखना, और क्या कहूँ :—

उसे फ़िक्र है हरदम नया तर्ज़ें जफ़ा क्या है,  
हमें यह शौक़ देखें तो सितम की इन्तहा क्या है।  
घर से क्यों ख़फ़ा रहें चर्ख़ का क्यों गिला करें,  
सारा जहाँ अदू सही, आओ मुक़ाबला करें।

कोई दम का मेहमाँ हूँ, ऐ अहले महफ़िल,  
चिराग़े सेहर हूँ, बुझा चाहता हूँ।  
मेरी हवा में रहेगी ख़्याल की बिजली,  
यह मुश्ते ख़ाक है, फ़ानी रहे या न रहे।

अच्छा आज्ञा ! "खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं।" हौसला से रहना। नमस्ते !

तुम्हारा भाई,  
भगतसिंह

* * *

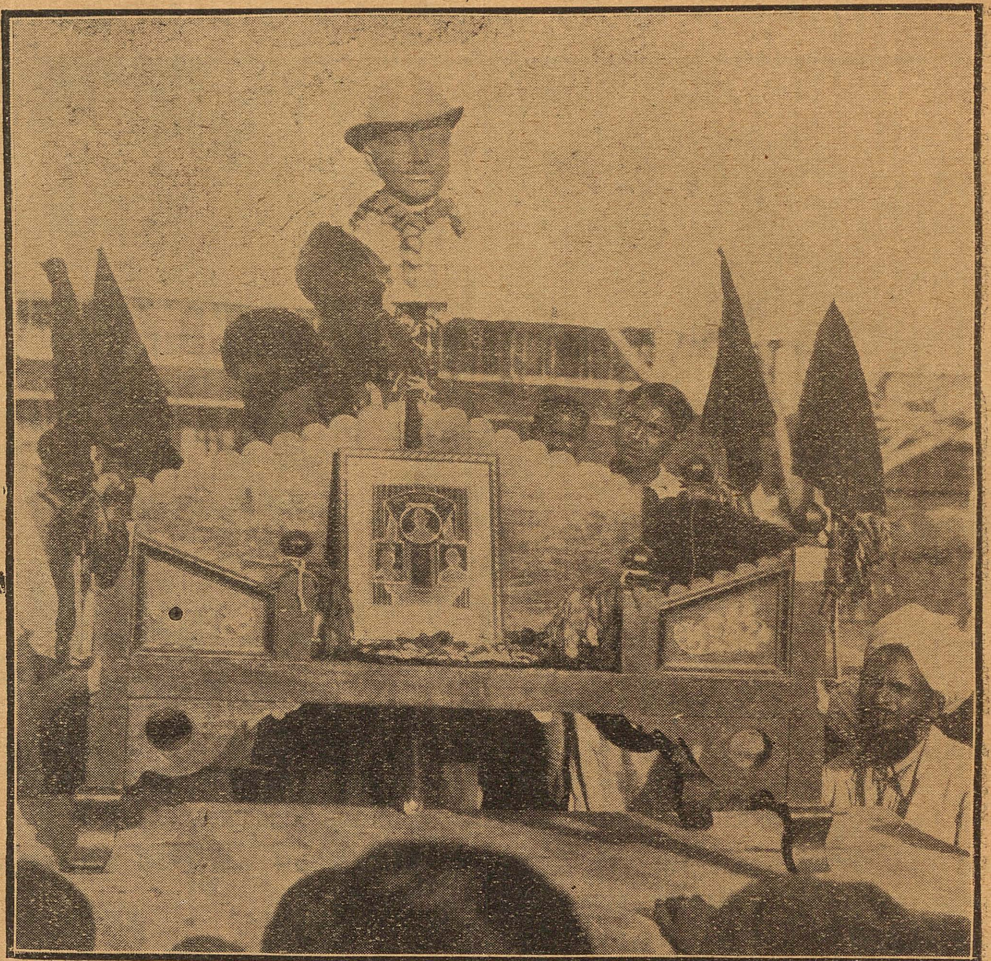
# क़ौम के नाम स्वर्गीय सरदार भगतसिंह जी का आख़िरी सन्देश !

## नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं के प्रति—

[ नीचे का पत्र हमने सहयोगी 'पञ्जाब केसरी' से उद्धृत किया है। सहयोगी का कहना है कि यह पत्र स्वर्गीय सरदार ने गत २ फ़रवरी, १९३१ को, जब कॉङ्ग्रेस और वायसराय में समझौते की बातचीत आरम्भ हुई थी, तब अपने किसी मित्र के पास भेजा था। मूल-पत्र अङ्गरेज़ी में और बड़ा था। उसकी सब महत्वपूर्ण बातें इसमें आ गई हैं। —स० 'भविष्य' ]

"प्यारे साथियो !

"इस समय हमारा आन्दोलन अत्यन्त महत्वपूर्ण परिस्थितियों में से गुज़र रहा है। एक साल के कठोर संग्राम के बाद गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स ने हमारे सामने शासन-विधान में परिवर्तन के सम्बन्ध में कुछ निश्चित फ़ैसला करेंगे या उसके ख़िलाफ़, यह बात हमारे लिए बहुत महत्व नहीं रखती। यह बात निश्चित है कि वर्तमान आन्दोलन का अन्त किसी न किसी प्रकार के समझौते के रूप में होना लाज़मी है। यह दूसरी बात है कि समझौता जल्दी हो जाय या देरी में हो।



सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों को फाँसी होने पर देहली में आपका एक वृहत् मातमी जुलूस निकाला गया था, जिसमें आपका चित्र तथा एक कल्पित मूर्ति पालकी पर रख कर जुलूस के आगे रक्खी गई थी।

बातें पेश की हैं, और कॉङ्ग्रेस के नेताओं को निमन्त्रण दिया है कि वे आकर शासन-विधान तैयार करने के काम में मदद दें। कॉङ्ग्रेस के नेता इस हालत में आन्दोलन को स्थगित कर देने के लिए उद्यत दिखाई देते हैं। वे लोग आन्दोलन स्थगित करने के हक़ में

### समझौता क्या है ?

"वस्तुतः समझौता कोई ऐसी हेय और निन्दा योग्य वस्तु नहीं, जैसा कि साधारणतः हम लोग समझते हैं। बल्कि राजनीतिक संग्रामों का समझौता एक अत्यावश्यक अङ्ग है। कोई भी क़ौम, जो किसी अत्याचारी शासन के विरुद्ध खड़ी होती है, यह ज़रूरी है कि वह प्रारम्भ में असफल हो, और अपनी लम्बी जद्दोजहद के मध्यकाल में इस प्रकार के समझौतों के ज़रिए कुछ राजनीतिक सुधार हासिल करती जाय, परन्तु वह अपनी लड़ाई की आख़िरी मञ्ज़िल तक पहुँचते-पहुँचते अपनी ताक़तों को इतना सङ्गठित और दृढ़ कर लेती है कि उसका दुश्मन पर आख़िरी हमला ऐसा ज़ोरदार होता है कि शासक लोगों की ताक़तें उनके उस वार के सामने चकनाचूर होकर गिर पड़ती हैं। ऐसा भी हो सकता है कि उस

वक़्त भी उसे दुश्मन के साथ कोई समझौता कर लेना पड़े। यह बात रूस के उदाहरण से भली-भाँति स्पष्ट की जा सकती है।

"१६०५ में रूस में क्रान्ति की लहर उठी। क्रान्तिकारी नेताओं को बड़ी भारी आशाएँ थीं। लेनिन उसी समय विदेश से लौट आया था—जहाँ वह पहले भाग कर चला गया था। वह सारे आन्दोलन को चला रहा था। लोगों ने कोई दर्जन भर भूमिपतियों को मार डाला, और कुछ मकानों को जला डाला। परन्तु वह क्रान्ति सफल न हुई। उसका इतना परिणाम अवश्य हुआ कि सरकार कुछ सुधार करने के लिए बाधित हुई, और "ड्यूमा" (एक प्रकार की पार्लामेण्ट) की स्थापना की गई। उस समय लेनिन ने "ड्यूमा" में जाने का समर्थन किया। परन्तु १६०६ में उसी का उसने विरोध शुरू कर दिया। परन्तु १६०७ में उसने दूसरी "ड्यूमा" में जाने का समर्थन किया, जिसके अधिकार बहुत कम कर दिए गए थे। इसका कारण यह था कि वह 'ड्यूमा' को अपने आन्दोलन का एक "प्लेटफ़ॉर्म" बनाना चाहता था।

"इसी प्रकार १६१७ के बाद जब जर्मनी के साथ रूस की सन्धि का प्रश्न चला, तो लेनिन के सिवा बाक़ी सभी लोग उस सन्धि के ख़िलाफ़ थे। परन्तु लेनिन ने कहा—'शान्ति-शान्ति और फिर शान्ति—किसी भी क़ीमत पर हो शान्ति। यहाँ तक कि यदि हमें रूस के कुछ प्रान्त भी जर्मनी के 'वार लॉर्ड' को सौंप देने पड़ें, तो भी शान्ति कर लेनी चाहिए।' जब कुछ बोल्शेविक नेताओं ने भी उसकी इस नीति का विरोध किया, तो उसने साफ़ कहा कि 'इस समय बोल्शेविक सरकार जर्मनी का मुक़ाबला करने में असमर्थ है, और इस समय हमारा पहला काम लड़ाई से हट कर अपनी सरकार को मज़बूत करना है।'

"जिस बात को मैं बताना चाहता हूँ, वह यह है कि 'समझौता' भी एक ऐसा हथियार है, जिसे राजनीतिक जद्दोजहद के बीच में पद-पद पर इस्तेमाल करना आवश्यक हो जाता है, जिससे एक कठिन लड़ाई से थकी हुई क़ौम को थोड़ी देर के लिए आराम मिल सके, और वह आगे युद्ध के लिए अधिक ताक़त के साथ तैयार हो सके। परन्तु इन सारे समझौतों के बावजूद जिस चीज़ को हमें भूलना न चाहिए, वह हमारा आदर्श है, जो हमेशा हमारे सामने रहना चाहिए। जिस लक्ष्य के लिए हम लड़ रहे हैं, उसके सम्बन्ध में हमारे विचार बिल्कुल स्पष्ट और दृढ़ होने चाहिए। यदि आप सोलह आने के लिए लड़ रहे हैं, और एक आना मिल जाता है, तो वह एक आना जेब में डाल कर बाक़ी पन्द्रह आने के लिए फिर जङ्ग छेड़ दीजिए। हिन्दुस्तान के मॉडरेटों की जिस बात से हमें नफ़रत है, वह यही है कि उनका आदर्श कुछ नहीं है। वे एक आने के लिए ही लड़ते हैं, और उन्हें इसीलिए मिलता कुछ भी नहीं।"

## कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य क्या है ?

इसके आगे सरदार जी ने अपने पत्र में इस बात की आलोचना की है कि "भारत की वर्तमान लड़ाई ज़्यादातर मध्य श्रेणी के लोगों के बल-बूते पर लड़ी जा रही है। जिनका लक्ष्य बहुत सीमित है। कॉङ्ग्रेस दुकानदारों और जीपतियों के ज़रिए इङ्गलैण्ड पर आर्थिक दबाव डाल कर कुछ अधिकार ले लेना चाहती है, परन्तु जहाँ तक देश की करोड़ों मज़दूर और किसान जनता का ताल्लुक़ है, उनका उद्धार इतने से नहीं हो सकता। यदि देश की लड़ाई लड़नी हो तो मज़दूरों, किसानों और सामान्य जनता को आगे लाना होगा, उन्हें लड़ाई के लिए सङ्गठित करना होगा। नेता उन्हें अभी तक आगे लाने के लिए कुछ नहीं करते, न कर सकते हैं। इन किसानों को विदेशी हुकूमत के जुए के साथ-साथ भूमिपतियों और पूँजीपतियों के जुए से भी उद्धार पाना है। परन्तु कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य यह नहीं है।

"इसीलिए मैं कहता हूँ कि कॉङ्ग्रेस के लोग सम्पूर्ण क्रान्ति नहीं चाहते। सरकार पर आर्थिक दबाव डाल कर वे कुछ सुधार और लेना चाहते हैं—भारत की धनी श्रेणी के लिए कुछ रियायतें और चाहते हैं, और इसीलिए यह भी कहता हूँ कि कॉङ्ग्रेस का आन्दोलन किसी न किसी समझौते या असफलता के रूप में ख़तम हो जायगा।

## नौजवानों का फ़र्ज़

"इस हालत में नौजवानों को समझ लेना चाहिए कि उनके लिए वक़्त और भी सख़्त आ रहा है। उन्हें सावधान हो जाना चाहिए कि कहीं उनकी बुद्धि चकरा न जाय, या वे हताश न हो बैठें। महात्मा गाँधी की दो लड़ाइयों का अनुभव प्राप्त कर लेने के बाद वर्तमान हालात और अपने भविष्य के प्रोग्राम के सम्बन्ध में साफ़-साफ़ नीति निर्धारित करना हमारे लिए अब ज़्यादा ज़रूरी हो गया है।

## "क्रान्ति चिरञ्जीवी" की पुकार

"इतना विचार कर चुकने के बाद मैं अपनी बात अत्यन्त सादे शब्दों में कहना चाहता हूँ :—

"आप लोग "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो" (Long live Revolution) की पुकार करते हैं। यह नारा हमारे लिए बहुत ही पवित्र है, और इसका इस्तेमाल हमें बहुत ही सोच-समझ कर करना चाहिए।

## हमारा लक्ष्य

"जब आप नारे लगाते हैं, तो मैं समझता हूँ कि आप लोग वस्तुतः जो पुकारते हैं वही करना भी चाहते हैं। एसेम्बली बम-केस के समय हमने "क्रान्ति" शब्द की जो व्याख्या की थी—'क्रान्ति' से हमारा अभिप्राय समाज की वर्तमान प्रणाली और वर्तमान सङ्गठन को पूरी तरह उखाड़ फेंकना है। इस उद्देश्य के लिए हम पहले सरकार की ताक़त को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। इस समय शासन की मैशीन धनियों के हाथ में है। सामान्य जनता के हितों की रक्षा के लिए तथा अपने आदर्शों को क्रियात्मक रूप देने के लिए—अर्थात् समाज का नए सिरे से सङ्गठन कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार करने के लिए—हम सरकार की मैशीन को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। हम इसी उद्देश्य के लिए लड़ रहे हैं। परन्तु इसके लिए हमें साधारण जनता को शिक्षित करना चाहिए।"

## शासन-विधान की कसौटी

जिन लोगों के सामने इस महान क्रान्ति का लक्ष्य है, उनके लिए नए शासन-सुधारों की कसौटी क्या होनी चाहिए, इस पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है :—

"हमारे लिए निम्न-लिखित तीन बातें किसी भी शासन-विधान की परख के लिए देखना ज़रूरी है—

१—शासन की ज़िम्मेवारी कहाँ तक भारतवासियों के सुपुर्द की जाती है।

२—शासन-विधान को चलाने के लिए किस प्रकार की सरकार बनाई जाती है, और उसमें हिस्सा लेने का आम जनता को कहाँ तक मौक़ा मिलता है।

३—भविष्य में उससे क्या आशाएँ की जा सकती हैं। उस पर कहाँ तक प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं।" इस सिलसिले में उन्होंने सर्व-साधारण को वोट देने का हक़ देने का समर्थन किया है।

पार्लामेण्ट के दो हाउसों के सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि क्योंकि भारत-सरकार की 'कौन्सिल ऑफ़ स्टेट' सिर्फ़ धनियों का जमघट है, और लोगों को फाँसने का एक पिंजरा है, इसलिए उसे हटा कर एक ही सभा—जिसमें जनता के प्रतिनिधि हों, रखनी चाहिए।

## "प्रान्तीय स्वराज्य" या "प्रान्तीय ज़ुल्म ?"

'प्रान्तीय स्वराज्य' का जो निश्चय गोलमेज़ कॉन्फ्रेन्स में हुआ है, उसके सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार के लोगों को वहाँ सारी ताक़तें दी जा रही हैं, उससे तो वह 'प्रान्तीय स्वराज्य' न होकर 'प्रान्तीय ज़ुल्म' हो जायगा।

## समझौता क्या है ?

"इन सब अवस्थाओं पर विचार करके हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि सब से पहले हमें सारी अवस्थाओं का चित्र साफ़ तौर पर अपने सामने अङ्कित कर लेना चाहिए। यद्यपि हम यह मानते हैं कि समझौते का अर्थ कभी आत्म-समर्पण या पराजय स्वीकार करना नहीं, किन्तु एक क़दम आगे और फिर कुछ आराम है, परन्तु साथ ही हमें यह भी समझ लेना चाहिए, कि समझौता इससे अधिक भी और कुछ नहीं। वह अन्तिम लक्ष्य और हमारे लिए अन्तिम विश्राम का स्थान नहीं।"

*　　*　　*

इसके बाद उन्होंने अपने दल के लक्ष्य, और साधनों पर विचार किया है। "दल का नाम 'सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी' है, और इसलिए इसका लक्ष्य एक सोशलिस्ट या 'कम्युनिस्ट' सामाजिक सङ्गठन की स्थापना है। कॉङ्ग्रेस और इस दल के लक्ष्य में यही भेद है कि जहाँ 'राजनीतिक क्रान्ति से शासन-शक्ति अङ्गरेज़ों के हाथ से निकल कर हिन्दुस्तानियों के हाथों में आ जायगी, हमारा लक्ष्य शासन-शक्ति को उन हाथों के सुपुर्द करना है, जिनका लक्ष्य कम्युनिज़्म हो।' इसके लिए मज़दूरों और किसानों को सङ्गठित करना आवश्यक होगा। क्योंकि उन लोगों के लिए लॉर्ड रीडिङ्ग या इर्विन की जगह तेजबहादुर या पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के आ जाने से कोई भारी फ़रक़ न पड़ सकेगा।

## पूर्ण स्वाधीनता

"पूर्ण स्वाधीनता से भी इस दल का यही अभिप्राय है। जब लाहौर-कॉङ्ग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया, तो हम लोग पूरे दिल से इसे चाहते थे, परन्तु कॉङ्ग्रेस के उसी अधिवेशन में महात्मा जी ने कहा कि "समझौते का दरवाज़ा अभी भी खुला है।" इसका अर्थ यह था कि वह पहले जानते थे कि उनकी लड़ाई का अन्त किसी इसी प्रकार के समझौते में होगा। वे पूरे दिल से स्वाधीनता की घोषणा न कर रहे थे। हम लोग इसी बेदिली से घृणा करते हैं।"

## कार्यकर्ताओं की आवश्यकता

इसके बाद आपने नौजवानों से अपील करते हुए कहा है कि इस उद्देश्य के लिए उन्हें कार्यकर्ता बन कर निकलना चाहिए। नेता बनने वाले पहले ही बहुत हैं। हमारे दल को नेताओं की आवश्यकता नहीं है। "अगर आप दुनियादार हैं, बाल-बच्चों और गृहस्थी में फँसे हैं, तो हमारे मार्ग पर मत आइए। आप हमारे उद्देश्य में सहानुभूति रखते हैं, तो और तरीक़ों से हमें सहायता दीजिए। सख़्त नियन्त्रण में रह सकने वाले कार्यकर्ता ही इस आन्दोलन को आगे ले जा सकते हैं। ज़रूरी नहीं कि दल इस उद्देश्य के लिए छिप कर ही काम करे। हमें युवकों के लिए 'स्वाध्याय-मण्डल'



छप गई ! प्रकाशित हो गई !!

# व्यङ्ग-चित्रावली

यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा; मनुष्यता का याद आने लगेगी; परम्परा से चली आई रूढ़ियों, पाखण्डों और अन्ध-विश्वासों को देख कर हृदय में क्रान्ति के विचार प्रबल हो उठेंगे; घण्टों तक विचार-सागर में आप डूब जायँगे। पछता-पछता कर आप सामाजिक सुधार करने को बाध्य होंगे!

प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर एवं मनोहर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। इसके प्रकाशित होते ही समाज में हलचल मच गई। प्रशंसा-पत्रों एवं सम्मतियों का ढेर लग गया। अधिक प्रशंसा न कर हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि ऐसी चित्रावली आज तक कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। शीघ्रता कीजिए, नहीं तो पछताना पड़ेगा।

इकरङ्गे, दुरङ्गे, और तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। छपाई-सफाई दर्शनीय, फिर भी मूल्य लागत मात्र केवल ४); स्थायी तथा 'चाँद' के ग्राहकों से ३); अब अधिक सोच-विचार न करके आज ही आँख मींच कर ऑर्डर दे डालिए !!

# दैवी सम्पद्

[ लेखक—श्री० रामगोपाल जी मोहता, बीकानेर ]

यदि आप सचमुच ही स्वाधीनता के उपासक हैं,

यदि आप अपने आपको, अपनी जाति को तथा अपने देश को पराधीनता के बन्धनों से मुक्त कर स्वतन्त्र बनाना चाहते हैं तो "दैवी-सम्पद्" को अपनाइए।

यदि आप अपने आपको, अपनी जाति को तथा अपने देश को सुख-समृद्धि-सम्पन्न करना चाहते हैं तो "दैवी सम्पद्" का अध्ययन करिए।

यदि धार्मिक विचारों के विषय में आपका मन संशयात्मक हो तो "दैवी सम्पद्" को विचारपूर्वक पढ़िए। आपका अवश्य ही समाधान होगा।

यदि आपके जीवन के किसी भी व्यवहार के सम्बन्ध में कोई उलझी हुई ग्रन्थि हो तो उसको सुलझाने के लिए "दैवी सम्पद्" का सहारा लीजिए! आप उसे अवश्य हो सुलझा सकेंगे।

अपने विषय की यह अद्वितीय पुस्तक है। लगभग ३०० पृष्ठों की फ़ेदरवेट काग़ज़ पर छपी हुई सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २॥) रु०।

सार्वजनिक संस्थाओं को, केवल डाक-व्यय के।-) (पाँच आने) ग्रन्थकर्ता के पास भेजने पर यह पुस्तक मुफ़्त मिलेगी।

ग्रन्थकर्ता का पता—श्री० सेठ रामगोपाल जी मोहता, बीकानेर (राजपूताना)

प्रकाशक का पता—व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

(Study Circle) खोलने चाहिए। पैम्फ़लेटों और लीफ़लेटों, छोटी पुस्तकों, छोटे-छोटे पुस्तकालयों और लेक्चरों, बातचीत आदि से हमें अपने विचारों का सर्वत्र प्रचार करना चाहिए।

## सैनिक विभाग

"हमारे दल का एक सैनिक विभाग भी सङ्गठित होना चाहिए। कभी-कभी इसकी बड़ी ज़रूरत पड़ जाती है। इस सम्बन्ध में मैं अपनी स्थिति ज़्यादा साफ़ कर देना चाहता हूँ। मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ, उसमें ग़लतफ़हमी की सम्भावना है। परन्तु आप लोग मेरे शब्दों और वाक्यों का कोई गूढ़ अभिप्राय न ढूँ।

"यह बात प्रसिद्ध ही है कि मैं आतङ्ककारी (Terrorist) रहा हूँ, परन्तु मैं आतङ्ककारी नहीं हूँ। मैं एक क्रान्तिकारी (Revolutionary) हूँ, जिसके कुछ निश्चित विचार और निश्चित आदर्श हैं—जिसके सामने एक लम्बा प्रोग्राम है। मुझे यह दोष दिया जायगा, जैसा कि लोग रामप्रसाद बिस्मिल को भी देते थे कि फाँसी की कालकोठरी में पड़े रहने से मेरे विचारों में भी कोई परिवर्तन आ गया है। परन्तु ऐसी बात नहीं। मेरे विचार अब भी वही हैं, मेरे हृदय में अब भी उतना ही और वैसा ही उत्साह है, और वही लक्ष्य है, जो जेल से बाहर था। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हम बम से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। यह बात हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से आसानी से मालूम हो जाती है। केवल बम फेंकना न सिर्फ़ व्यर्थ है, परन्तु बहुत बार हानिकारक भी है। उसकी आवश्यकता किन्हीं ख़ास अवस्थों में ही पड़ा करती है। हमारा मुख्य लक्ष्य मज़दूरों और किसानों का सङ्गठन होना चाहिए। सैनिक-विभाग युद्ध-सामग्री को किसी ख़ास मौक़े के लिए केवल संग्रह करता रहे।"

अन्त में नौजवानों से सोशलिस्ट रिपब्लिक के आदर्श के लिए उत्साहपूर्वक अपील करते हुए उन्होंने कहा है कि "यदि वह इसी प्रकार प्रयत्न करते जायँगे, तब जाकर—'एक साल में स्वराज्य' तो नहीं—किन्तु भारी क़ुर्बानी और त्याग की कठिन परीक्षा में से गुज़रने के बाद वे अवश्य विजयी होंगे। 'क्रान्ति चिरञ्जीवी हो!'"

* * *

( २७८ पृष्ठ का शेषांश )

हो और लाट साहब सिटपिटा कर रह गए हों।

एक दिन लल्ला की महतारी लल्ला के किसी काम से अत्यन्त प्रसन्न हुईं और उसका मुँह चूम कर कहने लगीं—"मेरा बेटा लाट साहब होगा।" यह सुन कर मेरा तो नशा किरकिरा हो गया। मैंने उन्हें डाँट कर कहा—"चुप भी रहो। क्यों बेचारे बच्चे को अभिशाप दे रही हो?"

लल्ला की महतारी हक्की-बक्की सी होकर मेरा मुँह ताकने लगीं। अन्त में मैंने जब लाट साहब की सारी कमज़ोरियों का हाल सुनाया तो उन्होंने "अच्छा, मेरा बेटा लाट साहब न होकर कानपुर का पुलिस कोतवाल होगा"—कह कर अपना अभिशाप वापस लिया। मैंने भी कहा—"एवमस्तु!"

आपका,

—विजयानन्द ( दुबे जी )

* * *

# स्वर्गीय श्री० सुखदेव का संक्षिप्त परिचय

## जन्म

सरदार भगतसिंह के साथ फाँसी पर लटकाए जाने वाले, उनके अन्यतम साथी श्री० सुखदेव ख़ास लायलपुर ( पञ्जाब ) के रहने वाले थे। आपका जन्म मि० फाल्गुण सुदी ७, सं० १९६२ को पौने ग्यारह बजे दिन को हुआ था। आपके जन्म से तीन महीने पहले ही आपके पिता का देहान्त हो चुका था, इसलिए आपकी परवरिश और शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध आपके चचा लाला अचिन्तराम ने किया था।

## शिक्षा और दीक्षा

पाँच वर्ष की उमर में बालक सुखदेव को पढ़ने के लिए स्थानीय 'धनपतमल आर्य-हाईस्कूल' में भरती किया गया। यहाँ आपने केवल सातवीं श्रेणी तक शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद फिर लायलपुर सनातनधर्म हाई-स्कूल में भेजे गए और सन् १९२२ में इसी स्कूल से द्वितीय श्रेणी से इण्ट्रेन्स की परीक्षा पास की थी। श्री० सुखदेव बड़े मेधावी और तीव्र-बुद्धिशाली थे। किसी परीक्षा में कभी अनुत्तीर्ण न हुए, वरन् प्रति वर्ष अच्छे नम्बरों के साथ 'पास' होते गए। आपका स्वभाव बड़ा ही शान्त और कोमल था, इसलिए आपके सहपाठी और शिक्षक सदैव आपका आदर और प्यार करते थे। कहते हैं, आपके स्वभाव पर आपकी माता के धार्मिक संस्कारों का विशेष प्रभाव पड़ा था। आपके स्वभाव में उदारता की मात्रा यथेष्ट थी। आप अपने सिद्धान्तों में बड़े दृढ़ थे। जो दिल में समा जाती थी, उसे वह सारे संसार के विरोध करने पर भी छोड़ना नहीं चाहते थे। आप अपनी धुन के पक्के थे। सहपाठियों में जब किसी विषय को लेकर तर्क-वितर्क उपस्थित होता तो आप बड़ी दृढ़ता से अपना पक्ष समर्थन करते और अन्त में आपकी अकाट्य युक्तियों के सामने प्रतिद्वन्दी को मस्तक झुका देना पड़ता। आर्य-परिवार में जन्म ग्रहण करने के कारण आपके विचारों पर आर्य-समाज का विशेष प्रभाव था। समाज के सत्सङ्गों में आप बड़े उत्साह से भाग लिया करते थे। इसके सिवा हवन, सन्ध्या और योगाभ्यास का भी शौक़ था। कुछ दिनों तक आपने बड़े उमङ्ग से इन धार्मिक क्रियाओं का पालन किया था।

## झण्डे का अभिवादन

सन् १९१९ में पञ्जाब के कई शहरों में 'मार्शल-लॉ' जारी था। उस समय श्री० सुखदेव की उमर कुल १२ साल की थी और आप सातवीं कक्षा में पढ़ते थे। आपके चचा श्री० अचिन्तराम 'मार्शल-लॉ' के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए। बालक सुखदेव के मन पर इस घटना का विशेष प्रभाव पड़ा। लाला अचिन्तराम का कहना है कि उन दिनों सुखदेव कभी-कभी जेल में मुझसे मिलने आया करता था और अक्सर पूछा करता था कि क्या आपको यहाँ बहुत तकलीफ़ दी जाती है? मैं तो किसी को भी सलाम न करूँगा।

उसी ज़माने में एक दिन शहर भर की सभी पाठशाला और विद्यालयों के विद्यार्थियों को एकत्र करके 'यूनियन-जैक' (ब्रिटिश झण्डा) का अभिवादन कराया गया था, परन्तु श्री० सुखदेव इसमें सम्मिलित नहीं हुए थे और श्री० अचिन्तराम के जेल से वापस आने पर उन्होंने बड़े गर्व से कहा था कि मैं झण्डे का अभिवादन करने नहीं गया।

## असहयोग आन्दोलन

सन् १९२१ में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया। सारे देश में एक विचित्र जागृति की लहर दृष्टि-गोचर होने लगी। श्री० सुखदेव के जीवन में भी एक विचित्र परिवर्तन आरम्भ हुआ। स्वतन्त्र प्रकृति और उच्च विचार के होने पर भी श्री० सुखदेव को कपड़े-लत्ते का बड़ा शौक़ था। वे अच्छे और क़ीमती कपड़े बहुत पसन्द करते। हैट-कोट और टाई-कॉलर का भी शौक़ था। परन्तु इस आन्दोलन के आरम्भ होते ही उन्होंने विलायती और विलायती ढङ्ग के कपड़ों को सदा के लिए परित्याग कर दिया। पहनने के लिए कुछ खद्दर के कपड़े बनवाए और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें अपने हाथ से साफ़ कर लिया करते। इसके साथ ही इसी समय से हिन्दी भाषा सीखने और उसके प्रचार का भी शौक़ हुआ। वे अपने साथियों को हिन्दी भाषा की महत्ता और उसके सीखने की आवश्यकता बताया करते थे। उनका विचार था कि देश के उत्थान के लिए एक राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता है और उस आवश्यकता की पूर्ति केवल हिन्दी भाषा ही कर सकती है।

## घोड़ी के बदले फाँसी

हम ऊपर लिख आए हैं कि असहयोग आन्दोलन ने श्री० सुखदेव की कायापलट कर दी थी। सादगी उनके जीवन का ध्येय बन गया था और शायद राष्ट्र-सेवा ही जीवन का ध्येय भी बन चुकी थी। इधर माता और बहिन विवाह की चिन्ता करने लगीं, परन्तु चचा इसके विरुद्ध थे। क्योंकि आर्य-समाज के सिद्धान्त के अनुसार पच्चीस वर्ष की उमर से पहले लड़के की शादी करना उन्हें पसन्द न था। माता जब कहतीं, कि सुखदेव, मैं तुम्हारी शादी करूँगी और तुम घोड़ी पर चढ़ोगे तो श्री० सुखदेव सदैव यही उत्तर देते कि मैं घोड़ी पर चढ़ने के बदले फाँसी पर चढ़ूँगा।

## पञ्च पाण्डव

सन् १९२२ में श्री० सुखदेव के एन्ट्रेन्स की परीक्षा पास कर लेने पर लाला अचिन्तराम जेल में थे। उन्होंने वहीं से आज्ञा दी कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए लाहौर के डी० ए० वी० कॉलेज में नाम लिखा लो। परन्तु श्री० सुखदेव ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने चचा की इच्छा और आदेश के विरुद्ध 'नेशनल कॉलेज' में नाम लिखाया। यहीं उनका परिचय श्री० सरदार भगतसिंह आदि से हुआ। इनकी मण्डली में पाँच सदस्य थे। इन लोगों में परस्पर बड़ा ही प्रेम था। विद्यालय के अन्यान्य विद्यार्थी तथा कई शिक्षक इन्हें 'पञ्च पाण्डव' के नाम से याद किया करते थे।

## विदेश-यात्रा का विचार

श्री० सुखदेव को एक बार यूरोप की यात्रा करने की बड़ी इच्छा थी। इसी इच्छा से आप स्वामी सत्यदेव के साथ भी कुछ दिनों तक रहे और वहाँ के विभिन्न देशों की भाषाएँ सीखने का विचार किया। परन्तु कई कारणों से आपको इसमें सफलता न मिली। फलतः तीन महीनों के बाद आपने स्वामी सत्यदेव जी का साथ छोड़ दिया।

## पहाड़ी सैर

यूरोप-यात्रा के अतिरिक्त श्री० सुखदेव और उनके कई सहपाठियों को पहाड़ी सैर का भी बड़ा शौक़ था। फलतः सन् १९२० के ग्रीष्मावकाश में इन लोगों ने काङ्गड़ा के पहाड़ी प्रदेशों का पैदल भ्रमण करने का विचार किया। इस यात्रा में श्री० यशपाल भी इसके साथ थे। वापस आने के समय एक दिन इस पार्टी को दिन भर में ४२ मील की यात्रा करनी पड़ी थी और महीकरन से कुल्लू तक ३४ मील की यात्रा रात को एक बजे तक करनी पड़ी।

## गिरफ़्तारी

साइमन कमीशन के आने पर पञ्च-पाण्डव ने निश्चय किया कि एक समारोहपूर्वक प्रदर्शन किया जाए। इसके लिए काली झण्डियाँ तैयार की जा रही थीं। सरदार भगतसिंह आदि पाँच-छः सज्जन अपने किसी मित्र के घर पर उक्त प्रदर्शन की तैयारी में लगे थे। लाला केदारनाथ जी सहगल भी थे। परन्तु उन्हें नींद आ गई और वे सो गए। सरदार भगतसिंह ने कहा, मुझे भी नींद आ रही है। मैं भी थोड़ा सो लूँ। परन्तु मित्रों ने इन्हें सोने न दिया। इसी समय उन्हें इस बात का ख़याल आया कि शायद पुलिस हमारे घर पर छापा मारे तो सुखदेव उस मकान से गिरफ़्तार हो जाएँगे। इसलिए एक आदमी श्री० सुखदेव को सावधान करने के लिए सरदार भगतसिंह के घर पर भेज दिया गया। थोड़ी देर के बाद उसने आकर ख़बर दी कि पुलिस सरदार भगतसिंह के मकान पर पहुँच गई है।

पुलिस ने श्री० सुखदेव से बहुत से प्रश्न किए। परन्तु उन्होंने किसी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। अन्त में पुलिस ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया और दिन के १२ बजे तक कोतवाली में बिठा रक्खा। इसके बाद कुछ लोगों ने वहाँ जाकर इन्हें छुड़ाया।



स्वर्गीय श्री० सुखदेव

## राजनीतिक शिक्षा

जब पञ्जाब में एक विप्लवी पार्टी क़ायम करने की सलाह हुई, तो सरदार भगतसिंह और श्री० सुखदेव ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि पञ्जाब के नवयुवकों को राजनीतिक शिक्षा दी जानी चाहिए। सरदार भगतसिंह ने प्रचार का कार्य आरम्भ किया। इसके बाद यह कार्य श्री० सुखदेव को सौंपा गया और आप बहुत दिनों तक बड़ी सफलता के साथ इसे करते रहे। आपका यह सिद्धान्त था कि Mine the work and thine the praise अर्थात्—"मैं केवल कार्य करना चाहता हूँ, प्रशंसा नहीं चाहता!"

## गिरफ़्तारी और दण्ड

इसके बाद, १५ अप्रैल, सन् १९२९ को श्री० किशोरलाल और प्रेमनाथ के साथ श्री० सुखदेव की गिरफ़्तारी हुई। इसके बाद की घटनाओं का वर्णन सरदार भगतसिंह के परिचय में आ गया है, इसलिए उनके पुनरोल्लेख की आवश्यकता नहीं।

अन्त में ७ अक्टूबर, सन् १९३० को आपको फाँसी की सज़ा सुनाई गई और २३ मार्च, सन् १९३१ को २४ वर्ष की उमर में आप फाँसी पर लटका दिए गए!

* * *

# श्री० शिवराम राजगुरु का संक्षिप्त परिचय

इन्हीं बिगड़े दिमाग़ों में घनी ख़ुशियों के लच्छे हैं।
हमें पागल ही रहने दो कि हम पागल ही अच्छे हैं।

—राजगुरु

## वंश-परिचय

वीर-भूमि महाराष्ट्र के विख्यात नगर पूना के पास 'चाकन' नाम का एक छोटा सा गाँव है। जिस समय महाराष्ट्र-केसरी छत्रपति श्री० शिवाजी महाराज ने अपना 'हिन्दूराज्य' स्थापित किया था, उस समय यह 'चाकन' उस प्रान्त की राजधानी था। श्री० शिवाजी महाराज के प्रपौत्र श्री० साहूजी के राजत्व-काल में चाकन के एक पण्डित कचेश्वर नाम ब्राह्मण, ने सारे देश पर अपने पाण्डित्य का सिक्का जमाया था। एक बार राज्य-प्रबन्ध सम्बन्धी किसी कार्य के लिए श्री० साहूजी को चाकन आना पड़ा। वहाँ आपसे उपर्युक्त पण्डित जी से भेंट हुई। आप उनकी विद्वत्ता पर इतने मुग्ध हुए कि उन्हें अपने साथ सतारा लेते गए। थोड़े ही दिनों में श्री० साहूजी इन पण्डित जी के इतने भक्त बन गए कि इन्हें अपना गुरु मान लिया और 'राजगुरु' की उपाधि से विभूषित किया। उसी समय से 'राजगुरु' इस वंश की पदवी हो गई। श्री० शिवराम हरिजी राजगुरु इसी प्रतिष्ठित वंश के एक वंशधर थे।

पण्डित कचेश्वर जी के सम्बन्ध में एक और किम्बदन्ती मशहूर है। कहते हैं, उन दिनों अवर्षण होने पर लोग पण्डितों को जप करने के लिए विवश किया करते थे और जब तक वर्षा नहीं हो जाती थी, तब तक उनका पिण्ड नहीं छोड़ते थे। एक बार भीषण अवर्षण आरम्भ हुआ। सतारा के सभी बड़े-बड़े पण्डित जप कर चुके थे। अन्त में पण्डित कचेश्वर जी की बारी आई। विवश होकर उन्होंने भी जप आरम्भ कर दिया और आपके जप आरम्भ करने के दो-तीन दिन बाद ही पानी भी बरस गया। आसपास के चौरासी गाँवों में वर्षा हुई। इसे सब लोग पण्डित जी की किसी अलौकिक शक्ति की महिमा समझने लगे और दक्षिणा के रूप में एक ख़ासी रक़म पण्डित जी को प्राप्त हुई। उसी समय से इस 'राजगुरु' को अब तक प्रति वर्ष कुछ न कुछ प्राप्त होता है। यह नियम श्री० साहूजी महाराज के समय से ही चला आता है।

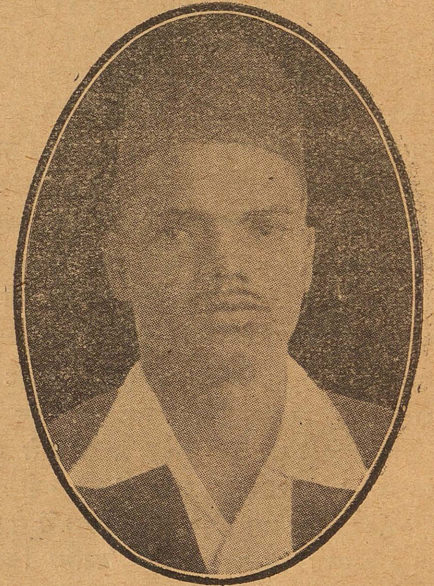
पण्डित जी के दो पुत्र थे, जिनमें छोटे तो वहीं सतारा में ही बस गए और बड़े पूना के पास खेड़ा नामक गाँव में आकर रहने लगे। यही खेड़ा श्री० शिवराम का जन्म-स्थान है। आपके पिता श्री० हरिनारायण जी राजगुरु के दो स्त्रियाँ थीं। श्री० हरिनारायण जी की दूसरी स्त्री से दो लड़के हुए। जिनमें बड़े श्री० दिनकर हरिनारायण हैं और छोटे श्री० शिवराम राजगुरु थे।

## शिक्षा

श्री० शिवराम का जन्म सन् १९०९ में हुआ था। आप लड़कपन में बड़े ढीठ और ज़िद्दी थे। सन् १९१५ में जब शिवराम की उमर ६ वर्ष की थी, आपके पिता का देहान्त हो गया। आपके बड़े भाई श्री० दिनकर जी उन दिनों पूना में नौकरी करते थे। इसलिए पिता की मृत्यु के बाद आप सपरिवार पूना में ही रहने लगे। शिवराम प्रारम्भिक शिक्षा के लिए एक मराठी पाठशाला में भेजे गए। परन्तु उनकी वहाँ तबीयत पढ़ने-लिखने में नहीं लगती थी। ये अपना अधिकांश समय अपने सहपाठियों के साथ खेल-कूद करने में ही बिताया करते थे। अभी मराठी की आठवीं श्रेणी में ही थे कि सन् १९२४ में, जब कि आपकी उमर चौदह वर्ष की थी, एक दिन बड़े भाई ने डाँट-डपट की कि खेल-कूद छोड़ कर पढ़ने-लिखने में जी लगाओ। इससे भयभीत होकर आपने पाठ्य पुस्तक के एक उपन्यास को लेकर पढ़ना आरम्भ कर दिया। इस पर भाई और बिगड़े और कहा कि अगर तुम्हें पढ़ना नहीं है तो घर से निकल जाओ।

## यात्रा

वही हुआ, श्री० शिवराम घर से निकल पड़े। उस समय इनकी जेब में ९ पैसे थे। रात इन्होंने पूना-स्टेशन के मुसाफ़िरखाने में बिताई। सवेरे वहाँ से उठे और बिना सोचे-विचारे अपने जन्म-स्थान खेड़ा में पहुँचे। परन्तु गाँव में इसलिए प्रवेश नहीं किया कि लोग पहचान लेंगे। सारी रात बिना खाए-पिए एक मन्दिर में पड़े रहे। दूसरे दिन नारायण नाम के एक दूसरे गाँव में पहुँचे और वहाँ भी गाँव से बाहर एक कुएँ पर बिताई। घर से जो ९ पैसे लेकर चले थे, उनके आम ख़रीद कर खा लिया था। तीसरे दिन भूख के मारे अँतड़ियाँ कुलकुला रही थीं। कुएँ के नीचे एक पक्षी का खाया हुआ आधा आम पड़ा था। आपने उठाया और गुठली समेत निगल गए। इस गाँव के स्कूल-मास्टर को इन पर बड़ी दया आई। उन्होंने इन्हें पास रख लिया। परन्तु इन्हें



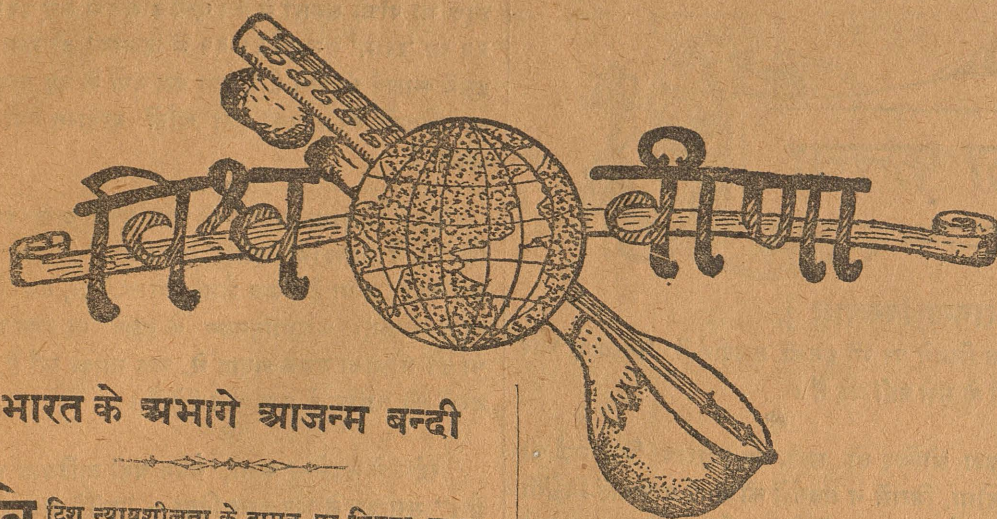
स्वर्गीय श्री० राजगुरु

अगर कहीं रहना ही होता तो घर छोड़ने की क्या ज़रूरत थी? दूसरे दिन बिना कहे-सुने उठे और एक तरफ़ को चल दिया। भूख लगने पर पेड़ों की पत्तियाँ चबा लेते और रात को किसी चट्टान या मैदान में सो जाते। एक दिन एक गाँव के बाहर मन्दिर के पास खेत में सो रहे थे, कि कुछ आदमियों ने दूर से देखा और प्रेत समझ कर ईंटें मारने लगे। जब उठे और पूछा कि मुझे क्यों मारते हो? तब उन लोगों का भ्रम दूर हुआ। अन्त में इन्होंने कहा कि मुझे भूख लगी है, कुछ खाने को दो। ख़ैर, उन लोगों ने कुछ खाने को दिया। खा-पीकर आप आगे बढ़े और कई दिनों में, इसी तरह १३० मील की यात्रा करके नासिक पहुँचे। वहाँ एक साधु की कृपा से, एक क्षेत्र में एक वक़्त बराबर खाने का प्रबन्ध हो गया। रात को साधु स्वयं कुछ दे दिया करते। रात को सोने के लिए घाट की सीढ़ियाँ थीं।

इसी तरह चार दिन बीत गए। एक दिन पुलिस का एक सिपाही आया और पकड़ कर थाने में ले गया। वहाँ पूछताछ होने पर आपने बताया कि मैं विद्यार्थी हूँ और संस्कृत पढ़ने की इच्छा से यहाँ आया हूँ।

इस तरह जब वहाँ से छुटकारा मिला तो आपने नासिक भी छोड़ा और घूमते-फिरते झाँसी पहुँचे। परन्तु वहाँ भी तबीयत नहीं लगी, इसलिए बिना टिकट के ही

( शेष मैटर ३७वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए )




## भारत के अभागे आजन्म बन्दी

ब्रिटिश न्यायशीलता के दामन पर कितना बदनुमा दाग़ है कि पञ्जाब और बर्मा षड्यन्त्रों के वे अभागे भारतवासी, जिनको सन् १९१५-१६ में आजीवन कारागार की सज़ा दी गई थी, अब तक छोड़े नहीं गए। इन राजनीतिक बन्दियों की संख्या प्रायः दो दर्जन है। साधारणतया आजीवन बन्दी तेरह या चौदह वर्षों तक जेलख़ाने में रक्खे जाते हैं—और इस मीयाद के बाद घृणित अपराधों के अपराधियों को भी छुटकारा मिल जाता है। परन्तु दुख है कि चौबीस देश-भक्त, जो अपनी क़ानूनी सज़ा नियमानुसार भोग चुके हैं, अब तक भारत के विभिन्न जेलख़ानों में बन्द हैं। सरकार का यह ढङ्ग एक क्षण के लिए भी उचित नहीं कहा जा सकता! शायद अभागा भारतवर्ष ही एक ऐसा देश है, जहाँ क़ैद की मीयाद पूर्ण हो जाने पर भी इसके निवासी बन्द रक्खे जाते हैं—और यह भी नहीं मालूम होता कि आख़िर कब तक छोड़े जावेंगे।

हम भारत-सरकार से ज़ोरदार शब्दों में पूछते हैं कि वह इन राजबन्दियों को पन्द्रह-सोलह वर्ष तक जेलख़ानों में बन्द रखने के बाद भी छुटकारे का अधिकारी क्यों नहीं समझती और वह उन्हें उस क़ानूनी अधिकारों से क्यों वञ्चित रखना चाहती है, जिससे घृणित अपराधों के अधिकारी भी लाभ उठाते हैं? आख़िर, वह कौन सी क़ानूनी दफ़ाएँ हैं, जिनके आधार पर किसी क़ैदी को क़ैद की मीयाद समाप्त हो जाने पर जेलों में बन्द रक्खा जा सकता है?

—'रियासत' (उर्दू)

* * *

(३६वें पृष्ठ का शेषांश)

रेलगाड़ी पर सवार होकर कानपुर चले आए। कानपुर के स्टेशन पर एक महाराष्ट्र सज्जन ने आपको भोजन कराया और अपने साथ लखनऊ ले गए। वहाँ से लखीमपुर-खेरी होते हुए आप पन्द्रहवें दिन काशी पहुँचे। यहाँ आपको कीचड़ में पड़ा हुआ एक पैसा मिला, जिसे उठा कर बड़े यत्न से धोती के कोने में बाँध लिया।

काशी आकर आप अहल्या घाट पर रहने लगे। कई दिनों के बाद एक क्षेत्र में भोजन का भी प्रबन्ध हो गया। एक पण्डित जी की पाठशाला में जाकर संस्कृत पढ़ने लगे और भाई को भी ख़बर दे दी कि मैं काशी आ गया हूँ और संस्कृत पढ़ना आरम्भ कर दिया है। भाई ने पाँच रुपए मासिक पढ़ाई के लिए भेजना आरम्भ कर दिया।

परन्तु क्षेत्र में भोजन करना आपको पसन्द नहीं था, इसलिए भोजन का प्रबन्ध सहपाठियों के साथ कर लिया। परन्तु यह सिलसिला भी बहुत दिनों तक नहीं चल सका। क्योंकि गुरु जी से अनबन हो जाने के कारण पाठशाला छोड़ देनी पड़ी। इसके साथ ही पढ़ने में दिल भी कम ही लगता था। पाठशाला छोड़ने पर अख़बार पढ़ने और कुश्ती लड़ने का शौक़ हुआ। परन्तु भोजन की फिर बड़ी तकलीफ़ हुई और यहाँ तक नौबत पहुँची कि फिर घास और पत्तियों का आश्रय लेना पड़ा।

अन्त में काशी से तबीयत उचटी तो नागपुर पहुँचे। उद्देश्य था, लाठी और गदका के खेल सीखना। सन् १९२८ में फिर कानपुर चले आए। अब तक राजनीति से कोई सम्बन्ध न था, परन्तु यहाँ आने के थोड़े दिनों के बाद ही आपके विचारों में परिवर्तन हो गया और आप एकाएक लापता हो गए। अन्त में लाहौर षड्यन्त्र-केस में गिरफ़्तार होने पर ही लोगों को आपका पता मिला।

* * *

## क्या मिला ?

कानपुर के ही नहीं, देश के समस्त हिन्दुओं और मुसलमानों को आख़िर कानपुर के झगड़े से मिला क्या? मर्दों, औरतों और बच्चों की जानें गईं, मकान जले, सम्पत्तियों का नाश हुआ, कठिन से कठिन कष्ट लोगों को सहन करने पड़े और इसके सिवा कुछ हासिल न हुआ। हिन्दू और मुसलमान ज़रा कलेजे पर हाथ रक्खें कि किसका अल्लाह और किसका परमेश्वर ख़ुश हुआ; किसका मज़हब बड़ा साबित हुआ और किसको क्या लाभ पहुँचा। गणेशशङ्कर-सा आदमी त्यागी, वीर, उदार-चित्त, देश पर बलिदान होने वाली आत्मा देश से उठ गया। सब धन-जन और सम्पत्ति के नाश से गणेशशङ्कर का विछोह ही कहीं अधिक कष्टप्रद है। हिन्दुओ, तुम कुछ सोचो और मुसलमानो, तुम भी ज़रा ग़ौर कर देख लो! किसी को कुछ हासिल न हुआ, हम लोगों के हिस्से में केवल सर्वनाश हो आया। कानपुर से हम सबको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। कानपुर के बेताज के राजा का हमें अनुकरण करना चाहिए। गणेशशङ्कर ने मुसलमानों की रक्षा करते हुए अपना बलिदान कर दिया, राष्ट्र की इससे ऊँची कोई दूसरी सेवा हो नहीं सकती। अगर हिन्दुओं को गणेशशङ्कर का कुछ भी ख़्याल है, तो उनको यह कोशिश होनी चाहिए कि गणेशशङ्कर-सी मृत्यु उनको प्राप्त हो। हमारे मुसलमान भाइयों को भी गणेशशङ्कर से नसीहत लेनी चाहिए। उनका आदर्श यह होना चाहिए कि जिस तरह से गणेशशङ्कर ने दूसरी क़ौम की रक्षा करते समय अपनी जान की परवा न की, उसी तरह से मुसलमानों को हिन्दुओं की रक्षा करते हुए प्राण त्याग देने की लालसा को हृदय में स्थान देना चाहिए। कानपुर के रक्तपात से अगर कोई लाभ उठाया जा सकता है, तो यही और कानपुर से हमें यही शिक्षा मिली है। क्या हम आशा करें कि देश के हिन्दू और मुसलमान कानपुर की शिक्षा को हृदयङ्गम करेंगे?

—'अभ्युदय' (हिन्दी) प्रयाग

* * *

## साम्प्रदायिक दङ्गे

भारत-शत्रु सदैव इस बात का प्रचार किया करते हैं कि हिन्दू-मुसलमानों ने पारस्परिक विश्वास खो दिया है, सदैव लड़ने के लिए तैयार रहते हैं और जब इस बात के प्रमाण की आवश्यकता होती है, तो अपनी मूर्खता के कारण भारतवासी उसे सिद्ध करने में भी कोताही नहीं करते।

काशी में एक वस्त्र-व्यवसायी गोली से मार दिया गया। किसने उसे गोली मारी और क्यों मारी—इसका आज तक कोई पता नहीं लगा। इस सम्बन्ध में कोई अनुसन्धान भी नहीं हुआ। अथच मुसलमानों ने विश्वास कर लिया कि वह विलायती कपड़े बेचता था, इसलिए हिन्दुओं ने ही उसे गोली मार दी है। बस, साम्प्रदायिक दङ्गा आरम्भ हो गया। मिरज़ापुर में अफ़वाह उड़ी कि किसी मुसलमान ज़मींदार ने अपने हिन्दू नौकर के पास गो-मांस भेज दिया अथवा एक मरा हुआ गाय का बछड़ा अपनी किसी हिन्दू प्रजा के घर भेज दिया। बस, साम्प्रदायिक दङ्गा आरम्भ हो गया! आगरे में होली का जुलूस निकला। उसमें बाजे बज रहे थे। मसजिद के पास मुसलमानों ने रोका। फिर सनातन रीत्यनुसार—ढेलों की वर्षा और अन्त में साम्प्रदायिक दङ्गा।

थोड़े ही दिनों के अन्दर संयुक्त प्रान्त के कई स्थानों में दङ्गे हो गए। इसका कारण हिन्दू-मुसलमान का सञ्चित पाप ही है या कोई तीसरी अदृश्य शक्ति अपनी लीला दिखा रही है?

सन् १९१६ में जब कॉङ्ग्रेस और मुस्लिम लीग ने सम्मिलित होकर स्वायत्त शासन-सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया था और हिन्दू-मुसलमानों में एक दृश्यमान एकता की प्रतिष्ठा हुई थी, तब भी भारत—विशेषतः संयुक्त प्रान्त—में ऐसे ही दङ्गों की सृष्टि हुई थी।

सन् १९२० में हिन्दू-मुसलमानों की राजनीतिक एकता मालावार के मोपला अत्याचारों से नहीं नष्ट हुई, परन्तु उसके बाद ही भारत के नाना स्थानों में दङ्गे की सृष्टि हुई और उसके कारण वह इस तरह विनष्ट हुई कि फिर आज तक नहीं पनप सकी। निश्चय ही शरीफ़ लोग दङ्गे नहीं करते, वे केवल साम्प्रदायिक अधिकारों के लिए झगड़ते हैं और अविश्वास तथा असन्तोष की सृष्टि करते हैं। इससे भारत के शत्रुओं को सुयोग प्राप्त होता है और वे मौक़ा देख कर दङ्गा आरम्भ करा देते हैं। संयुक्त प्रान्त के इन दङ्गों से हमारी मूढ़ता और असहायावस्था का ही पता लगा है।

—आनन्द बाज़ार पत्रिका (बँगला) कलकत्ता

* * *

# श्रीजगद्गुरु का फ़तवा

[ हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष ]

सारा गुड़ गोबर हो गया, ऐन ग्रीष्म में हिज़ होलीनेस की आशा-लता को तुषार मार गया ! सोचा था, स्वराज हो जाने पर लल्ला पञ्जाब या आसाम का गवर्नर हो जायगा, मोटी तनख़्वाह पाएगा, स्पेशल-ट्रेन पर चढ़ेगा और अपने राम भी बुढ़ौती में दोनों वक्त़ दूधिया छानेंगे।

❀

इतना ही नहीं, श्रीमती हर-होलीनेस ने तो गहनों की फ़िहरिस्त भी मोरत्तब कर ली थी,—नेकलेस, इयरिङ्ग, बाजूबन्द, जड़ाऊ चूड़ियाँ, इत्यादि। श्रीजगद्गुरु बोले—'तालाब खुदा ही नहीं और मगरों ने डेरा डाल दिया !' तुम भी अजीब औरत हो। ज़रा स्वराज तो मिल जाने देतीं।

❀

मुआज़ अल्लाह ! इतना सुनते ही आग-बबूला हो गईं और नासिका-छिद्रों को विस्फारित कर, 'भृकुटी धनुष चढ़ाय, अञ्जन वरुनी पनच कै, लोचन बाण चलाय' धीर गम्भीर स्वर से बोलीं—"अपनी कमाई तो भाँग-बूटी में गँवाई—एक छल्ला भी कभी नहीं बनवाया। अब जो भगवान ने बुढ़ौती में साध पूरी होने का आसरा दिखाया तो उसमें भी बाधा देने को तैयार हो गए ! मेरा करम फूट गया जो तुम्हारे जैसे फक्कड़ के पाले पड़ी !"

❀

हिज़-होलीनेस उन्हें आश्वासन प्रदान करने का विचार ही कर रहे थे कि 'हॉकर' अख़बार दे गया। उलटते ही 'स्वराज सरकार के कर्मचारी और उनके वेतन' शीर्षक पर नज़र पड़ी। सोचा, शायद कॉङ्ग्रेस ने भी 'अग्र सोची सदा सुखी' की भाँति अभी से व्यवस्था आरम्भ कर दी। तब तो लल्ला की गवर्नरी के लिए अभी से एक 'अप्लीकेशन' झाड़ देना चाहिए।

❀

परन्तु अफ़सोस ! कम्बख़्त कमन्द ऐसे बेमौक़े टूटी "दो-चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया !" ग़ौर से देखा तो मालूम हुआ कि भावी स्वराज-सरकार की व्यवस्था नहीं, बल्कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू का व्याख्यान है, जिसमें आपने बताया है, कि स्वराज-सरकार के ऊँचे से ऊँचे कर्मचारी को भी केवल ५००) ही वेतन मिलेगा ! अब बताइए जनाब, इन ५००) में कैसे दोनों वक़्त दुधिया छनेगी और कहाँ से श्रीमती हर-होलीनेस के लिए नेकलेस और इयरिङ्ग बनेंगे ?

❀

पण्डित जी ने व्याख्यान क्या दिया, कितने ही भले आदमियों की कमर तोड़ कर रख दिया ! हिज़-होलीनेस की दुधिया और हर-होलीनेस के इयरिङ्ग तक ही बात रहती तो कोई चिन्ता न थी। सब से अधिक नुक़सान तो हुआ, हमारे मोटे मौलाना साहब का, जो साढ़े आठ सौ वर्षों तक सुचारु रूपेण भारत का शासन करने पर फिर कुछ दिनों तक अपनी सुचारुता का परिचय देने की तैयारी में थे।

❀

कहावत है कि 'अगर चूहे को गेहूँ मिल जाए तो क्या वह पूरियाँ पका कर खायगा ?' वही हाल इन कमबख़्त कालों का है। लक्षणों से मालूम होता है कि स्वराज मिलने पर भी इनकी तक़दीर में नैनीताल और मसूरी के मज़े नहीं बदे हैं।

❀

ज़रा सोचिए तो सही, वह स्वराज्य किस मर्ज़ की दवा होगा, जिसमें न गवर्नरों की मोटी तनख़्वाहें मिलेंगी और न नैनीताल दार्जिलिङ्ग की ठण्डी हवा के मज़े मिलेंगे ? इसलिए अपने राम की तो राय है कि क़यामत तक इस देश पर श्रीमती नौकरशाही की ही छत्र-छाया बनी रहे। कौन्सिलों में कुछ सीटें रिज़र्व हो जाएँ और ज़्यादा से ज़्यादा थानेदारियाँ अपने क़ब्ज़े में रहें। आशा है, मोटे मौलाना और उनके 'इक़बाली मददगार' भी श्रीजगद्गुरु की क़ीमती राय की ताईद करेंगे।

❀

भई, स्वतन्त्रता का अर्थ तो यह है कि न ऊधो का लेना, न माधो का देना ! अपनी ज़मीन और अपना आसमान। किसी के घर में घुस जाओ, कोई बोलने वाला नहीं, किसी की कनपटी पर चाँटे जड़ दो, कोई चूँ करने वाला नहीं, किसी की टोपी उतार लो और वह झुक कर सलाम करने लगे। थोड़े शब्दों में बस—

परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई,
भावे मनहिं करें सोइ-सोई।

❀

मगर इन कॉङ्ग्रेस वालों की धूर्त्तता तो देखो। सारा मज़ा ही किरकिरा करके रख दिया। उनके भावी स्वराज-विधान में ऐरे-ग़ैरे नत्थू-ख़ैरे सभी वोट दिया करेंगे, ग़रीब भी अमीरों की तरह भरपेट खायँगे, योग्य बन कर देश का नेतृत्व करेंगे। और सब को समान रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता रहेगी। न बड़प्पन का आदर रहेगा और न तोंद की पूँछ !

❀

ग़र्ज़ें कि नौकरियों, वोटों और विशेष अधिकारों के बहाने दाढ़ी-चोटी के 'टग ऑफ़ वार' का मज़ा ही जाता रहेगा। इसी से 'मौलाना दी ग्रेट' और उनकी 'नाइट् वर्डस्ट्रल' चाहता है कि भोले-भाले मुसलमान इस स्वतन्त्रता-प्राप्ति के मार्ग में अपनी खोपड़ियाँ भिड़ा दें, ताकि उनके सिर का शनीचर उतर जाए और मौलाना की लीडरी भी क़ायम रह जाए।

❀

कुछ लोगों का एतराज़ है कि गत असहयोग के दिनों में मौलाना अङ्गरेज़ों की नौकरियों को 'हराम' समझते थे और लोगों को उसके विरुद्ध उभारा करते थे, अब कहते हैं, कि मुसलमानों को अधिक संख्या में अङ्गरेज़ी सेना में भर्ती हो जाना चाहिए, तो क्या अङ्गरेज़ों की नौकरी 'हलाल' हो गई ?

❀

क्यों नहीं ? क्या आपको मालूम नहीं, कि संसार परिवर्तनशील है और मौलाना ज़माने के साथ-साथ चलने वाले हैं। उन दिनों नौकरशाही से उनका ३६ का सम्बन्ध था और आजकल अल्लाह के फ़ज़ल से ६३ का है। लाट साहब के यहाँ से बुलाहट आती है, ज़ब्त ज़मीनें वापस मिल गई हैं; राउण्डटेबिल में जाने का निमन्त्रण मिलने वाला है। ग़र्ज़ें कि आजकल, माशा अल्लाह, आप भी पाँचो सवारों में हैं। ऐसी हालत में सन् १९२१-२२ का 'हराम' सन् १९३१-३२ में 'हलाल' हो गया तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? क्या दस वर्षों में यह मामूली सा परिवर्तन भी आपकी फूटी आँखें बरदाश्त नहीं कर सकतीं ?

❀

हमारे मौलाना ज़माने के साथ चलने वाले आदमियों में हैं। उन्होंने 'हराम' या 'हलाल' के बाप का क़र्ज़ नहीं खाया है। जब जैसा मौक़ा देखा, तब तैसी नीति रक्खी। अफ़ग़ानिस्तान के तख़्त पर बचा सक़ा था तो मौलाना उसके मद्दाह थे, अब नादिर ख़ाँ हैं, तो उन्हीं की तारीफ़ के पुल बाँध देते हैं।

❀

रईस ने कहा—"अमाँ, बैगन बड़ी वाहियात चीज़ है।" मुसाहब ने झट उत्तर दिया —"दुरीचे शक हुज़ूर, बिल्कुल बादी चीज़ है।" कई दिनों के बाद रईस ने फिर कहा—"भई, बैगन का भर्ता तो बड़ा ही लाजवाब होता है।" मुसाहब ने कहा—"नेहायत लज़ीज़, जनाब आली।" रईस ने कहा—"मगर उस रोज़ तो तुम कहते थे, बैगन बड़ी ख़राब चीज़ है और आज कहते हो, अच्छी है !" मुसाहिब बोला—"हुज़ूर, मैं आपका नौकर हूँ, न कि बैगन का।"

❀

फलतः हमारे मौलाना साहब भी किसी बैगन या आलू के नौकर नहीं हैं। मोटी तोंद और मोटी बुद्धि के आदमी जिधर ढालू पाया उधर लुढ़के, इसके लिए उन्हें दोष देना, उनकी बातों की आलोचना करना, उन पर व्यङ्ग्यबाण निक्षेप करना, अपनी शक्ति, श्रम और लेखनी के साथ बेइन्साफ़ी करना है। इसलिए श्रीजगद्गुरु की राय है कि उनके लिए मैदान ख़ाली रहे, ताकि बेचारे मनमाने ढङ्ग से लुढ़क सकें।

❀

डॉ० आलम तथा डॉ० किचलू आदि राष्ट्रवादी मुसलमान लीडरों ने हमारे मौलाना की ओर इशारा करके कहा है कि वे किसी के प्रतिनिधि नहीं हैं। बला से नहीं हैं। प्रतिनिधित्व के लिए उनकी अपनी 'महिषोदर-मद-मर्दिनी' तोंद ही क्या कम है, जो बेचारे दूसरों का प्रतिनिधित्व करने जाएँ ?

❀

श्रीजगद्गुरु भी ऐसे ही प्रतिनिधित्व के पक्षपाती हैं, जिसमें 'आम का आम और गुठलियों के भी दाम' प्राप्त होते हैं। एक ओर 'फ़ण्ड' और दूसरी ओर गोल-टेबिल का निमन्त्रण ! कहीं तक़दीर ने ज़ोर मारा और सखी नौकरशाही ने प्रसन्न होकर सर पर 'सर' का सेहरा बाँध दिया तो इस 'आलमे-फ़ानी' में भी 'मुल्के जावदानी' के लुत्फ़ हासिल हो जायँगे। इसीलिए मौलाना ने अभी से सर शफ़ी और सर फ़ज़ले हुसेन आदि 'सरों' की श्रेणी में बैठ कर सखी की नाज़बरदारी आरम्भ कर दी है।

❀

बात यह है कि कमबख़्त बुढ़ौती सर पर आ गई है। महात्मा गाँधी के साथ के कारण आबकारी की 'हौलियों' की सुगन्धि नाकों को याद नहीं रही। इधर राष्ट्रीयता का पथ ऐसा कण्टकाकीर्ण हो गया है कि बात-बात पर जेल और लाठियों से टक्कर लेने की नौबत आ जाती है। इसलिए दूरन्देश मौलाना ने पहले से ही अपना मार्ग निश्चित कर लिया है।

❀

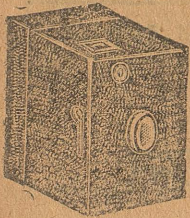
रही मुसलमानों की भलाई-बुराई की बात, सो भाई साहब, बड़ों का क़ौल है कि 'पहले घर में चिराग़ जला कर तब मसजिद में जलाया जाता है।' लेहाज़ा पहला और प्रधान प्रश्न ठहरा श्रीउदरदेव की पूर्ति का उपाय, उसके बाद देखा जायगा।

❀

कम क़ीमती और छोटा केमरा ख़रीदना रुपया बर्बाद करना है।

फ़ोटोग्राफ़ी सीख कर

## २००) मासिक कमा लो



यह नई डिज़ायन का रॉयल हैण्ड केमरा अभी आया है। इसमें असली जर्मनी लैंस न्यू फ़ाइण्डर और स्प्रिङ्ग शटर लगा है तथा ३।×४। इञ्च के बड़े प्लेट पर टिकाऊ और मनोहर तस्वीर खींचता है। फ़ोटू खींचने में कोई दिक़्क़त नहीं, स्प्रिङ्ग दबाया कि तस्वीर खिंच गई। फिर भी शर्त यह है कि—

यदि केमरे से तस्वीर न खिंचे तो

१००) नक़द इनाम

साथ में कुछ ज़रूरी सामान-प्लेट, सैल्फ़ टोनिङ्ग काग़ज़, प्लेट धोने के तीन मसाले, फ़ोटोग्राफ़िक लालटेन, २ तश्तरी, तस्वीर छापने का फ़्रेम, सरल विधि व स्वदेशी जेबी चर्ख़ा मुफ़्त दिया जाता है। मूल्य केवल ४) डाक ख़र्च ॥)

पता—माधव ट्रेडिङ्ग कम्पनी, अलीगढ़ नं० ४१

## उस्तरे को बिदा करो

हमारे लोमनाशक से जन्म भर बाल पैदा नहीं होते। मूल्य १) तीन लेने से डाक-ख़र्च माफ़।

पता :—शर्मा ऐण्ड को०, नं० १,
पो० कनखल ( यू० पी० )

### सुन्दर केलेण्डर

महात्मा गाँधी, पं० मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहरलाल नेहरू के रङ्गीन चित्र सहित बिना मूल्य मँगाइए।

पता :—सुधावर्षक प्रेस, अलीगढ़

## लीजिए

स्वास्थ्य सम्बन्धी उत्तम-उत्तम पुस्तकें लेना हो या शुद्ध अमरीकन होमियोपैथिक औषधि व डॉक्टरी सामान लेना हो या घर बैठे गवर्नमेण्ट रजिस्टर्ड कॉलेज से डिप्लोमा प्राप्त करना हो तो आज ही एक कार्ड भेज कर नियमावली तथा सूचीपत्रादि मँगाइए।

इण्टर नेशनल कॉलेज ऑफ़ मेडिसिन
३१ बाँसतल्ला गली, कलकत्ता



पढ़ कर गुप्त विद्या द्वारा जो चाहोगे बन जाओगे जिस की इच्छा करोगे मिल जावे गा मुफ़त मंगवाओ पता साफ़ लिखो।

गुप्त विद्या प्रचारक आश्रम, लाहौर

# एक अजीब पुस्तक

हारमोनियम, तबला व सितार गाइड प्रकाशित हुई है, जिसकी मदद से २-३ माह में अनजान आदमी भी हारमोनियम, तबला व सितार बजाना सीख सकता है। क्योंकि इसमें नई-नई तर्ज़ के गायनों के अलावा राग-रागिनियों का अच्छी तरह से वर्णन किया है। मू० १।) पोस्ट ख़र्च ।); सच्चा इङ्गलिश टीचर पृष्ठ २११; मूल्य डाक-व्यय सहित १॥)

पता—सत्यसागर कार्यालय नं० २५, अलीगढ़

गृहस्थों का सच्चा मित्र
३० वर्ष से प्रचलित, रजिस्टर्ड




बालक, वृद्ध, जवान, स्त्री, पुरुषों के शिर से लेकर पैर तक के सब रोगों की अचूक रामबाण दवा। हमेशा पास रखिए। वक़्त पर लाखों का काम देगी। सूची मय कलेण्डर मुफ़्त मँगा कर देखो।

कीमत ।॥) तीन शीशी २) डा० अ०
पता:—चन्द्रसेन जैन वैद्य, इटावा

दवाइयों में

# ख़र्च मत करो

स्वयं वैद्य बन रोग से मुक्त होने के लिए "अनुभूत योगमाला" पाक्षिक पत्रिका का नमूना मुफ़्त मँगा कर देखिए।

पता-मैनेजर अनुभूत योगमाला
ऑफ़िस, बरालोकपुर, इटावा ( यू० पी० )

नवीन ! स्प्रिङ्ग वाला ! अद्भुत !

# जेब का चरख़ा

यह हमने अभी तैयार किया है। समूचा लोहे का बना है। इससे स्त्री-पुरुष, लड़के लड़कियाँ बड़े शौक़ से सूत कात-कात कर ढेर लगा देते हैं। यह चलने में निहायत हलका और देखने में ख़ूबसूरत है। मू० १) डा० म० ।–)

पता—जी० एल० जैसवाल, अलीगढ़

भूत, भविष्य, वर्त्तमान बताने वाला जादू का

## प्लानचेट

मैस्मेरिज़्म विद्या से भरा हुआ यह प्लानचेट गुप्त प्रश्नों का (जैसे रोग, यात्रा, परीक्षा का परिणाम। चोरी, खोए मनुष्य या गड़े धन का पता। व्यापार, रोज़गार में हानि या लाभ। इस वर्ष फ़सल अच्छी होगी या बुरी। विवाह होगा या नौकरी लगेगी कि नहीं। गर्भ में लड़का है कि लड़की। फ़लाँ काम सिद्ध होगा कि नहीं, इत्यादि ) ठीक-ठीक उत्तर पेन्सिल द्वारा जिस भाषा में चाहो लिख देता है। अभ्यास की तरकीब सहित मूल्य २॥) डाक-ख़र्च ॥)

पता—दीन ब्रादर्स अलीगढ़, नं० ११

### अग्रवाल भाई पढ़ें

एक अच्छे घराने की गुणवती कन्या के लिए, जिसकी आयु १४ से ऊपर है, गोत्र गर्ग है, वर की शीघ्र दरकार है जो तन्दुरुस्त, सदाचारी, हैसियतदार व सुशिक्षित हो, उम्र १८ से २४ साल के भीतर। विशेष बातें पत्र-व्यवहार से तै करें।

पता :—अग्रवाल-समिति,
D. बलदेव बिल्डिङ्ग झाँसी JHANSI

## रजिस्टर्ड भारतीय कैमरा

शीशा काटने की क़लम व जेबी चरख़ा मुफ़्त




हमारा स्वदेशी कैमरा बड़ी आसानी से प्लेट पर चाहे जिस चीज़ की साफ़ और सुन्दर, टिकाऊ तस्वीर खींचता है। बढ़िया फ़ोटो न खिंचे तो दाम वापिस। एक प्लेट, काग़ज़, मसाला, फ़्रेम, ३ डिश, सुर्ख़ लालटैन और हिन्दी में तरकीब साथ है। २॥×३॥ इञ्च साइज़ की तस्वीर खींचने वाला कैमरा का मूल्य ३॥) रुपया; डा० म० ॥=); ३।×४। इञ्च साइज़ की तस्वीर खींचने वाला कैमरा का मूल्य ४) रु०; डा० म० ।॥)

पता—दीन ब्रादर्स, नं० ८, अलीगढ़

यदि ज़्यादा ब्याज लेने वालों से बचना है, तो आज ही—

चार आना की पोस्टेज टिकिट

## 'दी चौहान 'पैसा' कार्यालय, बनखेड़ी G. I. P. R.'

के पास भेज कर 'बिना सूद क़र्ज़ लेने का फ़ॉर्म' मँगा लें और शीघ्र क़र्ज़ा हासिल करें। नियमानुसार बग़ैर ब्याज हर एक आदमी को रुपए १००) से ५००) तक उधार मिल सकते हैं।

## हिन्दुस्थान की आज़ादी

हिन्दू मुस्लिम सङ्गठन पर है, लेकिन इन दोनों क़ौमों का मन-मुटाव तभी दूर हो सकता है, जब कि इन दोनों के लिए कोई ऐसी पुस्तक प्रकाशित की जाय जो कि राष्ट्र और उसकी आज़ादी तथा धर्म की परिभाषा बतलाती हो। आत्मशक्ति, अर्थशक्ति तथा जनशक्ति को किस प्रकार कुचल कर विजय प्राप्त करती है, इसका प्रत्यक्ष दृश्य आँखों के सामने खड़ा कर देती हो, तभी हम सब

## स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं

अगर आपको देश से प्रेम है और आप गुलामी की ज़ञ्जीर तोड़ कर आज़ाद बनना चाहते हैं तथा ऊपर लिखी हुई बातों को एक ही पुस्तक में देखना चाहते हैं तो आप

## विषाद-सिन्धु

नामक पुस्तक को एक बार अवश्य पढ़ें और अपने राष्ट्रीय विचारों को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न करें। यह बङ्गला-साहित्य के उज्ज्वल रत्न मीर मशरफ़ हुसेन जी की अपूर्व पुस्तक 'विषाद-सिन्धु' का हिन्दी अनुवाद है। बङ्गाल में इसकी लाखों प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं और यह कलकत्ता विश्वविद्यालय की बी० ए० की परीक्षा के लिए कई बार मञ्ज़ूर हो चुकी है, इसी से इसकी उपयोगिता का परिचय मिल सकता है। पुस्तक तीन खण्डों में छपी है। प्रथम खण्ड का मूल्य १॥), द्वितीय खण्ड १॥) और तृतीय खण्ड ।॥) तीनों एक साथ मँगाने से ३) में मिलेगी। ग्राहक निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें।

'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Registered No. A—2085

## अनाथ पत्नी

इस पुस्तक में बिछुड़े हुए दो हृदयों—पति-पत्नी—के अन्तर्द्वन्द्व का ऐसा सजीव चित्रण है कि पाठक एक बार इसके कुछ ही पन्ने पढ़ कर करुणा, कुतूहल और विस्मय के भावों में ऐसे ओत-प्रोत हो जायँगे कि फिर क्या मजाल कि इसका अन्तिम पृष्ठ पढ़े बिना कहीं किसी पत्ते की खड़खड़ाहट तक सुन सकें।

अशिक्षित पिता की अदूरदर्शिता, पुत्र की मौन व्यथा, प्रथम पत्नी की समाज-सेवा, उसकी निराश रातें, पति का प्रथम पत्नी के लिए तड़पना और द्वितीय पत्नी को आघात न पहुँचाते हुए उसे सन्तुष्ट रखने को सचेष्ट रहना, अन्त में घटनाओं के जाल में तीनों का एकत्रित होना और द्वितीय पत्नी के द्वारा, उसके अन्तकाल के समय, प्रथम पत्नी का प्रकट होना—ये सब दृश्य ऐसे मनमोहक हैं, मानो लेखक ने जादू की क़लम से लिखे हों !!

शीघ्रता कीजिए, केवल थोड़ी ही प्रतियाँ शेष हैं। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय; मूल्य केवल लागत मात्र २); स्थायी ग्राहकों से १॥)




## सन्तान-शास्त्र

पुस्तक का नाम ही उसका परिचय दे रहा है। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने वाले प्रत्येक नवयुवक को इसकी एक प्रति अवश्य रखनी चाहिए। इसमें काम-विज्ञान सम्बन्धी प्रत्येक बातों का वर्णन बहुत ही विस्तृत रूप से किया गया है। नाना प्रकार के इन्द्रिय-रोगों की व्याख्या तथा उनसे त्राण पाने के उपाय लिखे गए हैं। हज़ारों पति-पत्नी, जो कि सन्तान के लिए लालायित रहते थे तथा अपना सर्वस्व लुटा चुके थे, आज सन्तान सुख भोग रहे हैं।

जो लोग झूठे कोकशास्त्र से धोखा उठा चुके हैं, प्रस्तुत पुस्तक देख कर उनकी आँखें खुल जायँगी। काम-विज्ञान जैसे गहन विषय पर हिन्दी में यह पहिली पुस्तक है, जो इतनी छान-बीन के साथ लिखी गई है। भाषा अत्यन्त सरल एवं मुहावरेदार ; सचित्र एवं सजिल्द तथा तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर से मण्डित पुस्तक का मूल्य केवल ४) ; स्थायी ग्राहकों से ३) ; तीसरा संस्करण अभी-अभी तैयार हुआ है।

## निर्मला

इस मौलिक उपन्यास में लब्धप्रतिष्ठ लेखक ने समाज में बहुलता से होने वाले वृद्ध-विवाह के भयङ्कर परिणामों का एक वीभत्स एवं रोमाञ्चकारी दृश्य समुपस्थित किया है। जीर्ण-काय वृद्ध अपनी उन्मत्त काम-पिपासा के वशीभूत होकर किस प्रकार प्रचुर धन व्यय करते हैं ; किस प्रकार वे अपनी वामाङ्गना षोड्शी नवयुवती का जीवन नाश करते हैं; किस प्रकार गृहस्थी के परम पुनीत प्राङ्गण में रौरव-काण्ड प्रारम्भ हो जाता है और किस प्रकार ये वृद्ध अपने साथ ही साथ दूसरों को लेकर डूब मरते हैं। किस प्रकार उद्भ्रान्ति की प्रमत्त-सुखद कल्पना में उनका अवशेष ध्वंस हो जाता है—यह सब इस उपन्यास में बड़े मार्मिक ढङ्ग से अङ्कित किया गया है।

यह वही क्रान्तिकारी उपन्यास है, जिसने एक बार ही समाज में खलबली पैदा कर दी है। भाषा अत्यन्त सरल एवं मुहावरेदार है। सुन्दर सजिल्द पुस्तक का मूल्य २॥) ; स्थायी ग्राहकों से १॥।=) मात्र !

## विवाह और प्रेम

समाज की जिन अनुचित और अश्लील धारणाओं के कारण स्त्री और पुरुष का दाम्पत्य जीवन दुखी और असन्तोषपूर्ण बन जाता है एवं स्मरणातीत काल से फैली हुई जिन मानसिक भावनाओं के द्वारा उनका सुख-स्वाच्छन्दपूर्ण जीवन घृणा, अवहेलना, द्वेष और कलह का रूप धारण कर लेता है, इस पुस्तक में स्वतन्त्रतापूर्वक उसकी आलोचना की गई है और बताया गया है कि किस प्रकार समाज का जीवन सुख-सन्तोष का जीवन बन सकता है। विवाहित स्त्री-पुरुषों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। भाषा सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य २); स्थायी ग्राहकों से १॥)

## मालिका

यह वह मालिका नहीं, जिसके फूल मुरझा जायँगे; इसके फूलों की एक-एक पङ्खुरी में सौन्दर्य है, सौरभ है, मधु है, मदिरा है। आपकी आँखें तृप्त हो जायँगी। इस संग्रह की प्रत्येक कहानी करुण-रस की उमड़ती हुई धारा है।

इन कहानियों में आप देखेंगे मनुष्यता का महत्व, प्रेम की महिमा, करुणा का प्रभाव, त्याग का सौन्दर्य तथा वासना का नृत्य, मनुष्य के नाना प्रकार के पाप, उसकी घृणा, क्रोध, द्वेष आदि भावनाओं का सजीव चित्रण। आप देखेंगे कि प्रत्येक कहानी के अन्दर लेखक ने किस सुगमता और सचाई के साथ ऊँचे आदर्शों की प्रतिष्ठा की है। कहानियों की घटनाएँ इतनी स्वाभाविक हैं कि एक बार पढ़ते ही आप उसमें अपने परिचितों को ढूँढ़ने लगेंगे। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल, मधुर तथा मुहावरेदार है। शीघ्रता कीजिए, अन्यथा दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

सजिल्द, तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर से सुशोभित ; मूल्य लागत-मात्र केवल ४) ; स्थायी ग्राहकों से ३)

**व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद**

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A.—(Editor) at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

CSDS gratefully acknowledges the enterprise of the following savants/institutions in making the digitzation possible:

Historian, Writer and Editor Priyamvad of Kanpur for the Hindi periodicals (Bhavishya, Chand, Madhuri)

Mr. Fuwad Khwaja for the Urdu weekly newspaper Sadaqat, edited by his grandfather and father.

Historian Shahid Amin for faciliating the donation.

British Library's Endangered Archives Programme (EAP-1435) for funding the project that involved rescue, scan, sharing and metadata creation.

ICAS-MP and India Habitat Centre for facilitating exhibitions.

Digital Upload by eGangotri Digital Preservation Trust.

